श्री अभय जैन ग्रन्थमाला ग्रन्थाङ्क—२२

रत्न परीक्षा

सम्पादक
अगरचन्द नाहटा
भँवरलाल नाहटा



प्रकाशक
नाहटा ब्रदर्स
४, जगमोहन मल्लिक लेन,
कलकत्ता-७



प्रथमावृत्ति]   मूल्य २)

मुद्रक
सुराना प्रिन्टिंग वर्क्स,
४०२, अपर चितपुर रोड, कलकत्ता ७

दो शब्द

रत्नगर्भा भारतभूमि रत्नों के लिए विश्वविख्यात है। अगणित रत्नों की जन्मदातृ भारतभूमि में अभी तक रत्नों के शोध पूर्ण प्रामाणिक ग्रन्थों का अभाव सा ही रहा है।

मैंने "रत्नप्रकाश" नामक पुस्तक लिखकर रत्नों की उपयोगिता प्रामाणिकता तथा अन्य आवश्यक विषयों पर प्रकाश डालने का यथाशक्य प्रयास किया है। हमारे प्राचीन साहित्य के एतद्विषयक ग्रन्थों की शोध होकर प्रकाश में लाना नितान्त आवश्यक था। श्री अगरचन्दजी, भंवरलालजी नाहटा की शोध से फेरू ग्रन्थावली की ६०० वर्ष प्राचीन पाण्डुलिपि प्रकाश में आई और उसका पुरातत्वाचार्य पद्मश्री मुनि जिनविजयजी द्वारा मूल रूप में प्रकाशन हो गया है।

इस सन्दर्भ में ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा के हिन्दी अनुवाद के साथ-साथ अन्य दो ग्रन्थ व विद्वानों के इस विषय के विविध ज्ञानवर्द्धक लेख जौहरी भाइयों के लिए अत्यन्त उपयोगी अ मार्गदर्शक सिद्ध होंगे। आशा है जौहरी लोग व अन्य इस विषय के जिज्ञासुवर्ग इन ग्रन्थों को अपनाएंगे और लाभान्वित होकर इसे प्रकाश में लाना सार्थक करेंगे।

—राजरूप टांक

२—तीथकरों की माताए १४ महास्वप्न देखती हैं, उनमें १३ वां स्वप्न रत्न राशि है। उस राशि के कुछ रत्नों के नाम ये हैं—

पुलग वरिंदनील सासग कक्केयण लोहियक्ख मरगय मसारगल्ल पवाल फलिह सोगंधिय, हसगब्भ अजण चद्प्पह वररयणेहिं।

(कल्पसूत्र)

अर्थात्—पुलक, वज्रहीरा, नीलम, ससाक, कर्केतन, लोहिताक्ष, मरकत, ममारगल्ल, प्रवाल स्फटिक, सौगन्धिक, हंसगर्भ, चन्द्रकान्तादि श्रेष्ठ रत्न।

अत आगमों में भी रत्नों के नाम दिये हैं। पन्नवणामें वैडूर्य मणि मौक्तिकादि २४ प्रकार के रत्नों का भी उल्लेख[1] मिलता है। यों चक्रवर्ती के १४ रत्न माने गय हैं पर वहाँ रत्न का अर्थ है—स्वजातीय में सर्वोत्तम वस्तु (स्वजातीय मध्येसमुत्कृष्यति वस्तुनि)।

रत्नों के सम्बन्ध में भारतीय साहित्य बहुत ही विशाल है। स्वतन्त्र ग्र थों के अतिरिक्त अथशास्त्र, राजनीति, ज्योतिष, वैद्यकादि अनेकों ग्रन्थों में रत्नों का विवरण मिलता है जिनकी सक्षिप्त जानकारी यहाँ देनी अभीष्ट है। पुराणों आदि में तो रत्न परीक्षा विषयक पर्याप्त विवरण पाया जाता है। अग्नि पुराण (२४६) गरुड़ पुराण (१,६८ ८०)

१—रयणाणि चउव्वीस सुवण्ण तउ तब रयय लोहाइ।
सीसग हिरण्ण पासाण वइरमणि मोत्तिय पवाल ॥२५४॥
सखो तिणि साऽगुरुचदणाणिवत्थामिलाणि कट्ठाणि।
तह चम्मदन्तवाला गधा दव्वोसहाइ च ॥२५५॥

देवी भागवत (८, ११-१२) और महाभारत (१०) विष्णु धर्मोत्तर धृत भाव प्र० तन्त्रसार में रत्न विषयक चर्चा है।

रत्न परीक्षा सम्बन्धी स्वतंत्र ग्रन्थों में अगस्त्य ऋषि का अगस्तिमत व अगस्तीय 'रत्न परीक्षा' ग्रन्थ सबसे अधिक प्रसिद्ध रहा है। इस ग्रन्थ के अनेक अनुवाद गद्य और पद्य में राजस्थानी, हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओं में होते रहे हैं। संस्कृत और प्राकृत ग्रन्थकारों ने भी रत्न परीक्षा सम्बन्धी जो ग्रन्थ लिखे हैं उनमें भी इसी ग्रन्थ को प्रधान आधार माना है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र, शुक्रनीति आदि ग्रन्थों में भी रत्न परीक्षा की चर्चा है। बुद्धभट्ट और सुरमिति रत्न विज्ञान के पारंगत मनीषी थे। ठक्कुर फेरू ने अपनी प्राकृत रत्नपरीक्षा में 'अगस्ति, बुद्धभट और सुरमिति की रचनाओं के आधार से मैं यह ग्रन्थ बना रहा हूँ' लिखा है। कल्याणी के चालुक्य राजा सोमेश्वर (११२८-३८ ई०) रचित नवरत्न परीक्षा, रत्नसंग्रह, रत्नसमुच्चय, लघु रत्नपरीक्षा, मणिमहात्म्य प्रकाशित है। चण्डेश्वर की रत्नदीपिका भी अच्छी प्रसिद्ध रही है। रत्न परीक्षा समुच्चय और अप्पय दीक्षित की रत्नपरीक्षा भी इस विषय के अच्छे ग्रन्थ हैं। वराहमिहर की बृहत् संहिता (अध्याय ८० से ८३) आदि ज्योतिष एवं कई वैद्यक आयुर्वेद ग्रन्थों में भी रत्नों का विवरण पाया जाता है।

महाराणा राजसिंह के नाम से ढुंढिराज रचित राज रत्नाकर ग्रन्थ भी इस विषय का उल्लेखनीय ग्रन्थ है। नारायण पंडित का नवरत्न परीक्षा और मानतुंगसूरि का मानतुंग शास्त्र अपर नाम 'मणिपरीक्षा' आदि और भी बहुत से संस्कृत ग्रन्थ इस सम्बन्ध में रचे गये। जिनमें

से कई ग्रन्थों के रचयिताओं के नाम नहीं मिलते। गोंडल के भुवनेश्वरी पीठ से प्रकाशित भुवनेश्वरी कथा के प्रथम अध्याय में रत्नों के प्रकारों का अच्छा वर्णन है।

जयपुर के दिगम्बर जैन तेरापन्थी भंडार में एक नव-रत्न-परीक्षा नामक संस्कृत ग्रन्थ भी है, जो अपूर्ण मिला है। इसी भण्डार में पंच रत्न परीक्षा नामक एक अपभ्रंश ग्रन्थ की प्रति है। कोटा भण्डारादि में भी नि॰ विरचित रत्नपरीक्षा की प्रतियाँ हैं पर कई ग्रन्थ ऐसे हैं जिनके नाम उनके रत्नपरीक्षा सम्बन्धी होना सूचित करते हैं पर वास्तव में व ग्रंथ ज्योतिष आदि अन्य विषयों के भी निकल सकते है, अतः जहाँ तक उन ग्रंथों की प्रतियों को देख न लिया जाय वहाँ तक निश्चित नहीं कहा जा सकता।

रत्नों के फलाफल के साथ ज्योतिष का भी गाढ़ सम्बन्ध है इसलिये ज्योतिष के भी कई ग्रन्थ रत्नों की पर्याप्त जानकारी देते हैं।

अनूप संस्कृत लायब्रेरी में नारायण पण्डित कृत नवरत्नपरीक्षा, मानतुंग रचित मणि स्थान लक्षण, अज्ञात रचित मधुरत्न परीक्षा, मुद्रा परीक्षा एवं रत्नपरीक्षा राजस्थानी टीका सहित की प्रतियाँ हैं। मद्रास ओरिएण्टल सीरीज से 'रत्नदीपिका रत्नशास्त्र च' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है।

प्राकृत भाषा में रत्नपरीक्षा का एक मात्र ग्रन्थ ठक्कुर फेरू रचित उपलब्ध है जिसकी उन्होंने अपने पुत्र हेमपाल के लिए सं० १३७२ में अलाउद्दीन के विजय राज्य में रचना की थी। ठक्कुर फेरू अलाउद्दीन का भण्डारी था। फलतः उसने तत्कालीन मुद्राओं के सम्बन्ध में जो

द्रव्य परीक्षा ग्रन्थ लिखा है, वह तो भारतीय साहित्य में एक अजोड और अपूर्व ग्रन्थ हैं। उनका रत्नपरीक्षा भी केवल पुराने ग्रन्थों पर ही आधारित नहीं है पर ग्रन्थकार का अपना अनुभव भी उसमें सम्मिलित है। इसीलिए इस ग्रन्थ का महत्त्व रत्नपरीक्षा सम्बन्धी ग्रन्थो में सबसे अधिक है। दूसरे ग्रन्थकारों ने तो अधिकांश अगस्ति की रत्नपरीक्षा, रत्नदीपिका, रत्नपरीक्षा समुच्चय आदि प्राचीन ग्रन्थों के आधार से ही अपने ग्रन्थ लिखे हैं। ग्रन्थकारक स्वयं जौहरी नही थे, इसीलिये उनमें स्वानुभव क्वचित् ही मिलेगा। राजाओं और जौहरियो के लिये ही उन ग्रन्थो की रचना हुई है।

रत्नपरीक्षा सम्बन्धी हिन्दी साहित्य भी उल्लेखनीय है, यहाँ उनमें से ज्ञात ग्रन्थों का विवरण दिया जाता है।

हिन्दी भाषा में रत्नपरीक्षा सम्बन्धी ग्रन्थों में सं० १५९८ में लिखित रत्नपरीक्षा और रत्नपरीक्षा समुच्चय के राजस्थानी (गुजराती-प्रधान) गद्यानुवाद सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। गुजरात विद्यासभा, अहमदाबाद के संग्रहालय में उसकी ८२ पत्रों की प्रति है। कविवर दलपतराम हस्तलिखित पुस्तक नी सूची के पृष्ठ २१८ में उसका विवरण निम्नप्रकार पाया जाता है।

७४७ रत्नपरीक्षा (ग्रन्थ गद्य मांछे) सं० १५९८, १ थी १७।१९.४४।

आरम्भ—सविअ मुनिश्वरि बिहुहाथ जोडी नमस्कार करी ×× सुक्त ॠषीश्वर इसिउ पूछिउ ××

अंत—× जे रतन (?) दोष सहित हुइ तेहनु थोडु मूल कहीउ।

जे सुगुणनि देखि हुई तेहनु घणु मूल कहीउ। कार्य लक्ष्मी सुख नु देहि—हुई २० इति श्री अगस्ति मुनि प्रणीता रत्नपरीक्षा समास।

७४७ अ० रत्नपरीक्षा समुच्चय स० १५६८। ४५ थी ८२

(ग्रथ गद्य मांहे)

आरम—× × × पद्मराग मणि करी श्री सूर्य प्रसन्न हुई। मोतीइ करी चन्द्रमा प्रसन्न हुई। परवाले मगल प्रसन्न हुइ, मरकत मणि बुध प्रसन्न हुई × × इति मौक्तिक परीक्षा समाप्त × × स० १५६८ मार्गशीर्ष वदि ५ बुधे। उदीच्यदेव विद्याधर सुतई लिखत कल्याणमस्तु।

अन्त —+ सर्व लक्षण सपूर्ण कूने धन धान्य करइ। अनइ विप मयनु विनास करसे। ३ इति विद्रुम परीक्षा। इति श्री रत्नपरीक्षा। समुच्चय समाप्त। स० १५६८ वर्षे माघ सुदि २ अनन्तर ३ तिथौ वासरे अद्य श्री पत्तनवास्तव्य उदीच्य ज्ञातीय दुवे विद्याधरसुतइ (प्र) ती लिखत रत्नपरीक्षा ग्रन्थ। (सानु पृ० ८२)

अगस्ति की रत्नपरीक्षा के गद्यानुवाद की स० १७३५ में लिखित प्रति अनूप संस्कृत लायब्रेरी में एव हमारे सग्रह में है। यह गद्यानुवाद १७ वीं शताब्दी में बनाये गये होंगे।

स० १६६१ में राजस्थान के सुप्रसिद्ध प्रेमाख्यानी हिन्दी कवि जान ने 'पाहन परीक्षा' हिन्दी और तुर्की दोनों मतों के अनुसार बनाया इसलिये इस ग्रथ का अपना विशिष्ट महत्व है।

पाहन की परीक्षा कहु, जैसे ग्रथ बखान,
को मुहरो किन काम को, प्रगट कहत कवि जान।
हिन्दी तुर्की मति मथौ, कथो खण्ड बखानि,
कहत जान जानत नहीं, सोऊ लहत सुजानि॥

बीकानेर भण्डार की प्रति में इस ग्रन्थ का नाम 'रत्नपरीक्षा' भी लिखा है। उसमें इस ग्रन्थ के ४६ पद्य है। रचनाकाल की सूचना वाला पद्य इसमें नहीं है। कलकत्ता के स्व० बाबू पूरणचन्दजी नाहर के गुटका नं० ३६ में रचनासमयोल्लेख वाला पद्य भी है।

इसके बाद रत्नसागर[1] नाम के कवि ने सं० १७५५ के पौष वदि ४ शनिवार को रत्नपरीक्षा ग्रंथ का प्रारम्भ किया। इस ग्रंथ को भ्रम-वश सन् १९०५ की खोज रिपोर्ट में गुरुप्रसाद रचित और रत्नसागर ग्रन्थ का नाम बतला दिया है। वास्तव में ग्रन्थ के अन्तमें जो 'गुरु प्रसाद' शब्द आता है उसका अर्थ गुरु के प्रसाद से रचा गया ही अभिप्रेत है।

औरो रत्न अनेक है, असुर देह संजात।
कछु कहे लखि ग्रंथ मति, 'गुरुप्रसाद' अवदात॥

इस गुरु प्रसाद शब्द को गुरयदास पढ़कर खेमराज श्रीकृष्णदास बम्बई ने सं० १९६९ में इस ग्रन्थ को छपाया तब उसे गुरुदास विरचित लिख दिया गया। थोडी सी भूल में ग्रन्थ का नाम कुछ का कुछ प्रसिद्धि में आ गया। हमने जब इस ग्रन्थ की सं० १८४० लिखित

१—इसी (रत्नसागर) नाम से इसका सर्व प्रथम प्रकाशन सं० १९६२ में मनीषि समर्थदान ने राजस्थान यंत्रालय, अजमेर से किया था राजस्थान समाचार पत्र में भी इसका कुछ अंश छपा होगा। ग्रन्थ में १५ तरग है। वेंकटेश्वर प्रेस से यह संस्करण शुद्ध और सस्ता था। इसका मूल्य ≡) मात्र था।

दूसरा ग्रंथ नरलसिंह कवि रचित जोहरिन तरंग है। यह २६६ छन्दों में सं० १८७५ में रचा गया। इसका विशेष परिचय मुनि कान्तिसागरजी ने नरलसिंह कृत जोहरिन तरंग लेख में दिया है जो व्रजभारती एवं नागरी प्रचारणी पत्रिका के वर्ष ५६ अंक १ में प्रकाशित हुआ है।

तीसरे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ का परिचय प० मोतीलाल मेनारिया सम्पादित राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज के भाग १ पृ० १०४ में दिया गया है। एतद्विषयक उपलब्ध हिन्दी ग्रन्थों में यह सबसे बड़ा है। सं० १८५५ में लिखित १४८ पत्रों की प्रति उदयपुर के सज्जन वाणी विलास संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ २६ अध्यायों में विभक्त है। रचना में रत्न मणियों के विवरण प्राप्ति का प्रसंग इस प्रकार दिया है—

एक दिन स्नान करने के पश्चात् राजा अम्बरीष जब वस्त्राभूषण धारण करने लगते हैं तब उनके मन में यह विचार उठता है कि इन सुन्दर-सुन्दर रत्न मणियों की उत्पत्ति कैसे हुई होगी। राजा अपनी सभा आते हैं और अपने पंडितों से इस विषय में पूछताछ करते हैं। इसे पाराशर ऋषि कहते हैं महाराज! मैंने वेदपुराण आदि को गाया है और रत्न मणियों के नाम भी सुने हैं पर उनका भेद मुझे अभी तक नहीं मिला। हाँ, व्यास मुनि इस भेद को अवश्य जानते हैं आप यदि उनके पास चलें तो आपके प्रश्नों का उत्तर मिल सकता है। इस पर राजा अम्बरीष और पाराशर दोनों व्यासजी के आश्रम में पहुँचते हैं। वहाँ पर वही प्रश्न अम्बरीष व्यासजी से करते हैं। व्यासजी राजा के

वचनों को सुनकर बहुत प्रसन्न होते हैं और कहते है राजन ! रत्नमणियों के रहस्य को शिवजी ने ब्रह्मा और विष्णु के सामने पार्वती को बतलाया था वह मुझे स्मरण है, सुनाता हूँ। तदनन्तर मन में शिवजी का ध्यानकर व्यासजी रत्न मणियों का वर्णन प्रारम्भ करते हैं।

चौथे ग्रंथ की सूचना मात्र ही डा० मोतीलाल मेनारिया ने बहुत वर्ष पूर्व दी थी उसकी अपूर्ण प्रति ही उन्हें मिली है विशेष विवरण प्राप्त न हो सका।

शिल्पसंसार ३० अप्रेल १९५५ के अंक में निम्नोक्त ग्रंथ और बतलाये हैं :—

१—रत्नप्रदीप—हीरे; माणक, मोती वगैरह की जानकारी मराठी लेखक प० ल० खोवेटे जलगांव (खानदेश) खोवेटेजी का इस विषय पर और भी एक ग्रन्थ है।

२—रस प्रकाश सुधारक अध्याय

३—पदार्थ वर्णन खनिज पदार्थ (मराठी) ले० बालाजी प्रभाकर—(१८६१) रत्नोप० पृ० ५३ से ७१

४—मणि मोहरा विधान अर्थात् रत्नपरीक्षा ले० अभयचन्द जाजू

५—रत्नपरीक्षक—घासीराम जैन, सुदर्शन यन्त्रालय, मथुरा

६—रत्नदीपक—ले० लक्ष्मीनारायण वैंकटेश्वर प्रेस, बम्बई

७—वैदिक मैगजिन लाहोर से कोनेरी राव साहब का नोलेज विसमोनस् दिसम्बर १९२३

८—उद्यम १९२५ में प्र० रत्नोपरत्न व उनके उपयोग लेख (नागपुर)

इस प्रकार रत्नपरीक्षा सम्बन्धी भारतीय साहित्य का संक्षिप्त परिचय देनेके पश्चात् प्रस्तुत ग्रन्थ की जन्म कथा कही जाती है।

हमने १८ वर्ष पूर्व कलकत्ता की नित्य-विनय मणि-जीवन जैन लायब्रेरी से प्राप्त फेरू ग्रंथावली की सं० १४०३-४ में लिखित प्रति से सम्पादित कर पुरातत्त्वाचार्य पद्मश्री मुनि जिनविजयजी को प्रकाशनार्थ भेजी थी जिसे मूलरूप उन्होंने राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ग्रंथाङ्क ६० में ३ वर्ष पूर्व प्रकाशित की। उस समय हमने द्रव्यपरीक्षा, रत्न परीक्षादि ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद भी किया और डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, पं० भगवानदास जैन और डा० मोतीचन्दजी आदि को निरीक्षणार्थ भेज दिया।

कन्नाणा निवासी श्रीमाल धांधिया गोत्रीय परम जैन चन्द्राङ्गज ठक्कुर फेरू सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के मन्त्रिमण्डल में एक विशिष्ट अनुभवी और बहुश्रुत विद्वान थे। उन्होंने ज्योतिष, गणित, वास्तुशास्त्र, रत्नशास्त्र, धातूत्पत्ति और मुद्राविषयक विज्ञान पर विशिष्ट ग्रंथों की रचना की थी। इनकी सर्वप्रथम रचना 'युगप्रधान चतुष्पदिका' है जो सं० १३४७ में वाचनाचार्य राजशेखर के समीप कन्नाणा में कलिकाल केवली श्रीजिनचन्द्रसूरि के समय में रची गई थी। इसके पश्चात् ये दिल्ली में सुलतान अलाउद्दीन के मन्त्रिमंडल में खजाने रत्नागार, टकसाल आदि में काम करते रहे। सं० १३७२ विजयादशमी के दिन इन्होंने वास्तुसार की रचना कन्नाणपुरमें की और इसी वर्ष दिल्ली में स्वपुत्र हेमपाल के लिए शाही खजाने के रत्नों के विशाल अनुभव से रत्नपरीक्षा रचना हुई। ठक्कुर फेरू ने सं० १३७५ में अपने भाई और पुत्र के लिए टकसाल के विशिष्ट अनुभव से द्रव्यपरीक्षा नामक मुद्रा विषयक अनुपम ग्रंथ की रचना की और सं० १३८० में दिल्ली से श्रीमाल सेठ रयपति

द्वारा दादासाहब श्रीजिनकुशलसूरिजी के नेतृत्व में निकले हुए महातीर्थ शत्रुञ्जय के संघ में सम्मिलित हुए थे। ठक्कुर फेरू की प्राकृत रत्नपरीक्षा को हम अनुवाद सहित इस ग्रन्थ में दे रहे हैं। पं० भगवानदासजी प्रकाशित वास्तुसार प्रकरण में रत्नपरीक्षा की गाथा २३ से १२७ तक छपी है, जिसके बीच की ६१ से ११६ तक की गाथाएं धातोत्पत्ति की हैं, पाठ भेद भी प्रचुर है। इसके अनुसार रत्नपरीक्षा ग्रन्थ १२७ गाथाओ का होता है पर इसकी बीच की बहुत सी गाथाएं छूट गई हैं और १३२ गाथाएं होती हैं। पाठान्तरों को यथास्थान गाथांक सहित कोष्टक में दे दिया गया है।

इसके पश्चात खरतर गच्छीय सागरचन्द्रसूरि शाखा के दर्शनलाभ गणि शिष्य मुनि तत्त्वकुमार कृत रत्नपरीक्षा (सं० १८४५ रचित) फिर अंचल गच्छीय अमरसागरसूरि शिष्य वाचक रत्नशेखर कृत रत्नपरीक्षा भी दी गई है। परिशिष्ट में नवरत्न परीक्षा, मोहरा परीक्षा (राजस्थानी गद्य में) देकर कृत्रिम रत्नों और नवरत्नरस का नोट दिया गया है। हमारी प्रार्थना पर सुप्रसिद्ध विद्वान डा० मोतीचन्दजी ने कृपा करके ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा का परिचय बड़े ही परिश्रम पूर्वक और विस्तार से लिख भेजा था जिसे हमने रत्नपरीक्षादि-सप्त-ग्रन्थ संग्रह में प्रकाशित करवा दिया था पर हिन्दी पाठकों को विशेष लाभ मिले इस दृष्टिकोण से हम उसे इस ग्रन्थ में भी दे रहे हैं। हीरे की उत्पति स्थानो में बुद्धभट्ट, मानसोल्लास, रत्नसंग्रह, और ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा में जिस मातंग स्थान का उल्लेख है, इसका ठीक पता नहीं चलता पर वेलारी जिले के हम्पी स्थान में रत्नकूट में से संलग्न मातंग पर्वत की ओर संकेत हो तो

हमने १८ वर्ष पूर्व कलकत्ता की नित्य-विनय-मणि-जीवन जैन लायब्रेरी से प्राप्त फेरू ग्रन्थावली की स० १४०३-४ में लिखित प्रति से सम्पादित कर पुरातत्त्वाचार्य पद्मश्री मुनि जिनविजयजी को प्रकाशनार्थ भेजी थी जिसे मूलरूप उन्होंने राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ग्रन्थाङ्क ६० में ३ वर्ष पूर्व प्रकाशित की। उस समय हमने द्रव्यपरीक्षा, रत्न-परीक्षादि ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद भी किया और डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, प० भगवानदास जैन और डा० मोतीचन्दजी आदि को निरीक्षणार्थ भेज दिया।

कन्नाणा निवासी श्रीमाल धाधिया गोत्रीय परम जैन चन्द्राङ्गज ठक्कुर फेरू सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के मन्त्रिमण्डल में एक विशिष्ट अनुभवी और बहुश्रुत विद्वान थे। उन्होंने ज्योतिष, गणित, वास्तुशास्त्र, रत्नशास्त्र, धातूत्पत्ति और मुद्राविषयक विज्ञान पर विशिष्ट ग्रन्थों की रचना की थी। इनकी सवप्रथम रचना 'युगप्रधान चतुष्पदिका' है जो स० १३४७ में वाचनाचार्य राजशेखर के समीप कन्नाणा में कलिकाल केवली श्रीजिनचन्द्रसूरि के समय में रची गई थी। इसके पश्चात् ये दिल्ली में सुलतान अलाउद्दीन के मन्त्रिमडल में खजाने रत्नागार, टकशाल आदि में काम करते रहे। स० १३७२ विजयादशमी के दिन इन्होंने वास्तुसार की रचना कन्नाणापुरमें की और इसी वर्ष दिल्ली में स्वपुत्र हेमपाल के लिए शाही खजाने के रत्नों के विशाल अनुभव से रत्नपरीक्षा रचना हुई। ठक्कुर फेरू ने स० १३७५ में अपने भाई और पुत्र के लिए टकशाल के विशिष्ट अनुभव से द्रव्यपरीक्षा नामक मुद्रा विषयक अनुपम ग्रन्थ की रचना की और स० १३८० में दिल्ली से श्रीमाल सेठ रयपति

द्वारा दादासाहब श्रीजिनकुशलसूरिजी के नेतृत्व में निकले हुए महातीर्थ शत्रुञ्जय के संघ में सम्मिलित हुए थे। ठक्कुर फेरू की प्राकृत रत्नपरीक्षा को हम अनुवाद सहित इस ग्रन्थ में दे रहे हैं। पं० भगवानदासजी प्रकाशित वास्तुसार प्रकरण में रत्नपरीक्षा की गाथा २३ से १२७ तक छपी है, जिसके बीच की ६१ से ११६ तक की गाथाएं धातोत्पत्ति की हैं, पाठ भेद भी प्रचुर है। इसके अनुसार रत्नपरीक्षा ग्रन्थ १२७ गाथाओं का होता है पर इसकी बीच की बहुत सी गाथाएं छूट गई हैं और १३२ गाथाएं होती हैं। पाठान्तरों को यथास्थान गाथांक सहित कोष्टक में दे दिया गया है।

इसके पश्चात खरतर गच्छीय सागरचन्द्रसूरि शाखा के दर्शनलाभ गणि शिष्य मुनि तत्त्वकुमार कृत रत्नपरीक्षा (सं० १८४५ रचित) फिर अंचल गच्छीय अमरसागरसूरि शिष्य वाचक रत्नशेखर कृत रत्नपरीक्षा भी दी गई है। परिशिष्ट में नवरत्न परीक्षा, मोहरा परीक्षा (राजस्थानी गद्य में) देकर कृत्रिम रत्नों और नवरत्नरस का नोट दिया गया है। हमारी प्रार्थना पर सुप्रसिद्ध विद्वान डा० मोतीचन्दजी ने कृपा करके ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा का परिचय बड़े ही परिश्रम पूर्वक और विस्तार से लिख भेजा था जिसे हमने रत्नपरीक्षादि-सप्त-ग्रन्थ संग्रह में प्रकाशित करवा दिया था पर हिन्दी पाठकों को विशेष लाभ मिले इस दृष्टिकोण से हम उसे इस ग्रन्थ में भी दे रहे हैं। हीरे की उत्पति स्थानों में बुद्धभट्ट, मानसोल्लास, रत्नसंग्रह, और ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा में जिस मातंग स्थान का उल्लेख है, इसका ठीक पता नहीं चलता पर वेलारी जिले के हम्पी स्थान में रत्नकूट में से संलग्न मातंग पर्वत की ओर संकेत हो तो

आश्चर्य नहीं। क्योंकि जनश्रुतियां हमें ऐसा अनुमान करने को प्रेरित करती हैं।

जयपुर निवासी जौहरी श्री राजरूपजी टांक ने रत्नपरीक्षा विषयक इस ग्रंथ को प्रकाशित करने की इच्छा व्यक्त की। आप जवाहिरात के अच्छे अनुभवी और सुयोग्य ज्ञाता हैं। आपने "रत्नप्रकाश" नामक एक महत्वपूर्ण ग्रंथ हिन्दी भाषा में प्रकाशित कर जौहरी भाइयों बड़ा उपकार करने के साथ साथ हिन्दी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण कमी की पूर्ति की है। इस ग्रंथ के प्रकाशन के लिये भी आप अनेकश साधुवादार्ह हैं। पद्मभूषण प० सूर्यनारायणजी व्यास का रत्नों की वैज्ञानिक उपादेयता और परिचय" तथा राधाकृष्णजी नेवटिया का चिकित्सा में रत्नों का उपयोग नामक लेख भी साभार प्रकाशित किया जा रहा है। इस सामग्री से ग्रंथ की उपयोगिता में अवश्य ही अभिवृद्धि हुई है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० मोतीचन्द्र और प० भगवानदास जैन आदि ने भी ग्रंथ के विषय में सत्परामर्शादि द्वारा जो आत्मीयता दिखाई है, अविस्मरणीय है।

अगरचंद नाहटा,
भँवरलाल नाहटा

ठक्कुर फेरूकृत रत्नपरीक्षाका परिचय

—:—:—

लेखक—डॉ. मोतीचन्द्र, एम. ए. पीएच्. डी.

(क्युरेटर; प्रिन्स ऑफ वेल्स मुजिअम; बम्बई)

***

अमरकोश (२।१।३—४) में पृथ्वी के अड़तीस नामों में वसुधा, ती और रत्नगर्भा नाम आये हैं जिनसे इस देश के रत्नों के व्यापार की ओर जाता है। प्लिनी ने (नेचुरल हिस्ट्री ३७। ७६) भी भारत के इस व्यापार ोर इशारा किया है। इसमें जरा भी संदेह नहीं कि १८ वी सदी पर्यंत ाक कि, ब्राजिल की रत्नों की खानें नहीं खुली थीं, भारत संसार भर के का एक प्रधान बाजार था। रत्नों की खरीद विक्री के बहुत दिनों के व से भारतीय जौहरियों ने रत्नपरीक्षा शास्त्र का सृजन किया। जिसमें के खरीद, बेच, नाम, जाति, आकार, घनत्व, रंग; गुण, दोष, कीमत तथा ात्स्थानों का सांगोपांग विवेचन किया गया। बाद में जब नकली रत्न लगे तब उन्हे असली रत्नों से विलग करने के तरीके भी बतलाये गये। ां रत्नों और नक्षत्रों के सम्बन्ध और उनके शुभ और अशुभ प्रभावों की ओर ाठकों का ध्यान दिलाया गया।

रत्नपरीक्षा का शायद सबसे पहला उल्लेख कौटिल्य के अर्थशास्त्र । १०।२६) में हुआ है। इस प्रकरण में अनेक तरह के रत्न, उनके स्थान तथा गुण और दोष की विवेचना है। कामसूत्र की चौंसठ कलाओं

की तालिका में (कामसूत्र, १ । ३ । १६) रूप्य-रत्न-परीक्षा और मणिरागाकर ज्ञान विशेष कलाएँ मानी गई है। जयमंगला टीका के अनुसार रूप्य-रत्न परीक्षा के अन्तर्गत सिक्को तथा रत्न, हीरा, मोती इत्यादि के गुण दोषों की पहचान व्यापार के लिये होती थी। मणिरागाकर ज्ञान की कला में गहनो के जड़ने के लिये स्फटिक रगने और रत्नो के आकारों का ज्ञान आ जाता था। दिव्यावदान (पृ० ३) में भी इस बात का उल्लेख है कि व्यापारी को आठ परीक्षाओ में, जिन मे रत्नपरीक्षा भी एक है, निष्णात होना आवश्यक था। पर इस रत्नपरीक्षा ने किस युग में एक शास्त्र का रूप ग्रहण किया इसका ठीक-ठीक पता नही चलता। कौटिल्य के कोश-प्रवेश्य रत्नपरीक्षा प्रकरण से तो ऐसा मालूम पड़ता है कि मौर्य युग में भी किसी न किसी रूप में रत्नपरीक्षा शास्त्र का वैज्ञानिक रूप स्थिर हो चुका था। रोम और भारत के बीच में ईसा की आरम्भिक सदियों में जो व्यापार चलता था उसमें रत्नो का भी एक विशेष स्थान था। इसलिये यह अनुमान करना शायद गलत न होगा कि भारतीय व्यापारियो को, रत्नो का अच्छा ज्ञान रहा होगा और किसी न किसी रूप में रत्नपरीक्षा शास्त्र की स्थापना हो चुकी होगी। जो भी हो, इसमें जरा भी संदेह नहीं कि ईसा की पाचवीं सदी के पहले रत्नपरीक्षा का सृजन हो चुका था।

यह समझ लेना भूल होगा कि रत्न परीक्षा शास्त्र केवल जौहरियों की शिक्षा के लिये ही बना था। इसमें शक नही कि, जैसा दिव्यावदान में कहा गया है, व्यापारियो के पुत्र पूर्ण और सुप्रिय (दिव्यावदान, पृ०२६, २९) को और और विद्याओं के साथ साथ रत्नपरीक्षा भी पढ़ना पड़ा था। हमें इस बात का पता है कि प्राचीन भारत में राजा और रईस रत्नों के पारखी होते थे।

आवश्यक भी था क्योंकि व्यापारियों के सिवा वे ही रत्न खरीदते थे और
ः करते थे । यह जैसा कि हमें साहित्य से पता चलता है; काव्यकारों को
इस रत्नशास्त्र का ज्ञान होता था और वे बहुधा रत्नों का उपयोग रूपकों
: उपमाओं में करते थे, गो कि रत्न सम्बन्धी उनके अलंकार कभी कभी अति-
ात होकर वास्तविकता से बहुत दूर जा पहुंचते थे । जैसा कि हमें मृच्छ-
ःक के चौथे अंक से पता चलता है, कि जब विदूषक वसंतसेना के महल में
ा तो उसने छठे परकोटे के आंगन के दालानों में कारीगरों को आपस में
र्य, मोती, मूंगा, पुखराज, नीलम, कर्केतन, मानिक और पन्ने के सम्बन्ध में
ाचीत करते देखा । मानिक सोने से जडे (बध्यन्ते) जा रहे थे; सोने के
ो गढे जा रहे थे; शंख काटे जा रहे थे; और काटने के लिये मूंगे सान पर
ये जा रहे थे । उपर्युक्त विवरण से इस बात का पता चल जाता है कि
क को रत्नपरीक्षा का अच्छा ज्ञान रहा होगा । कलाविलास के आठवें सर्ग
सोनारों के वर्णन से भी इस बात का पता चलता है कि क्षेमेन्द्र को उनकी
ा और रत्नशास्त्र का अच्छा परिचय था ।

रत्नपरीक्षा शास्त्र का जितना ही मान था, उतना ही वह शास्त्र कठिन
ा जाता था । इसीलिये एक कुशल रत्नपरीक्षक का समाज मे काफी आदर
ा था । रत्नपरीक्षा के ग्रन्थ उसका नाम बड़े आदर से लेते हैं । अगस्तिमत[१]
:७–६८) के अनुसार गुणवान मण्डलिक जिस देश में होता है; वह धन्य

---

१ — देखिये, लेलेपिदर आंदियां, श्रीलुई फिनो, पारी १८९६ । मैंने
भूमिका को लिखने में श्री फीनो के ग्रन्थ से सहायता ली है जिस का मैं
भार मानता हूँ । श्री फीनो ने अपने इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ में उपलब्ध रत्न
स्त्रों को एक जगह इकट्ठा कर दिया है ।

है। ग्राहक को उसे बुलाकर आसन दे देकर तथा गध मालादि से सत्कार करना चाहिये। बुद्धभट्ट (१४–१५) के अनुसार रत्नपरीक्षकों को शास्त्रज्ञ एव कुशल होना चाहिये। इसीलिये उन्हें रत्नो के मूल्य और मात्रा के जानकार कहा गया है। देश काल के अनुसार मूल्य न आकने वाले तथा शास्त्र मे अनभिज्ञ जौहरियो की विद्वान कदर नही करते। ठक्कुर फेरु (१०६—१०७) का भाव भी कुछ ऐसा ही है। उसके अनुसार मण्डलिक को शास्त्रज्ञ, आखवाला, अनुभवी, देश, काल और भाव का ज्ञाता और रत्नो के स्वरूप का जानकार होना आवश्यक था। हीनाग, नीच जाति, सत्यरहित और बदनाम व्यक्ति जानकार और मान्य होने पर भी असली जौहरी कभी नही हो सकता। अगस्तिमत (६५) ने भी यही भाव प्रकट किये है।

अगस्तिमत (५४—५६) के अनुसार चतुर जौहरी को मडलिन् कहा गया है। यह नाम शायद इसलिए पडा कि जौहरी अपना काम करते समय मडल में बैठता था। यह भी सभव है कि यहा मडल से मडली यानी समूह का मतलब हो। अगस्ति मत (६१—६६) के अनुसार जौहरी रत्नो का मूल्य आकता था। उसे देश में मिलनेवाले आठ खानो तथा विदेशी और द्वीपों से आए हुए रत्ना का ज्ञान होता था। उसे रत्नो की जाति, राग रग, वर्ति, तौल, गुण, आकर, दोष, छाव (छाया) और मूल्य का पता होता था।। वह आकर (पूर्वी मध्यभारत), पूर्वदेश, कश्मीर, मध्यदेश, सिंहल तथा सिंधु नदी की घाटी में रत्न खरीदता था तथा रत्न बेचने और खरीदने वाले के बीच मध्यस्थ का काम करता था। अगस्तिमत (७२ के अनुसार वह रत्न विक्रेता से हाथ मिलाकर अगुलियो के इशारे से उसे रत्न के मूल्य का पता दे देता था। उसी के एक क्षेपक (१३-२३) के अनुसार १, २, ३, ४ सख्याओ का क्रमश तर्जनी से दूसरी अगुलियो को पकडने से

ध होता था। अंगूठे सहित चारों अंगुलियां पकड़ने से ५ की संख्या प्रकट होती । कनिष्ठा आदि के तलस्पर्श से क्रमशः ६, ७, ८ और ९ की संख्याओं का ध होता था; तथा तर्जनी से १० का। फिर नखो के छूने से क्रमशः ११, १२, , १४ और १५ का बोध होता था। इसके बाद हथेली छूने पर कनिष्ठादि से से १९ तक की संख्याओं का बोध होता था। तर्जनी आदि का दो, तीन, र और पांच बार छूने से २० से ५० तक की संख्याओ का बोध होता था। निष्ठा आदि के तलों को को ६ वार तक छूने से ६० से ९० तक अको की र इशारा हो जाता था; तथा आधी तर्जनी पकड़ने से १००, आधी मध्यमा ड़ने से १०००, आधी अनामिका पकड़ने से अयुत, आधी कनिष्ठिका से ००००, अगूठे से प्रयुत, कलाई से करोड़। मुगलकाल में तथा अब भी अगु-ों की सांकेतिक भाषा से जौहरी अपना व्यापार चलाते हैं।

प्राचीन साहित्य में भी बहुधा जौहरियों के सम्बन्ध में उल्लेख मिलते हैं। ावदान (पृ० ३) में कहा गया है कि किसी रत्न की कीमत आंकने के लिए ोरी बुलाये जाते थे। अगर वे रत्न की ठीक ठीक कीमत नहीं आंक सकते थे उसका मूल्य वे एक करोड़ कह देते थे। बृहत्कथाश्लोकसंग्रह (१८, ३६६) ता चलता है कि सानुदास ने पांड्य मथुरा में पहुंच कर वहां का जौहरी ार देखा और वहां एक क्रेता और विक्रेता को, एक जौहरी, से, रत्नालंकार का मूल्य आंकने को कहते सुना। सानुदास को उस गहने की ओर ते हुए देखकर उन्होंने समझा कि शायद यह निगाहदार था। उससे पूछने पर ने गहने की कीमत एक करोड़ बता कर कह दिया कि बेचने और खरीदनेवाले मर्जी से सौदा पट सकता था। वे दोनों एक दूसरे जौहरी के पास पहुंचे उसने कहा कि गहने की कीमत सारा संसार था पर नासमझ के लिए उसकी

मोल एक छदाम था। सानुदास की जानकारी से प्रसन्न होकर राजा ने उसे अपना रत्नपरीक्षक नियुक्त कर दिया।

प्राचीन साहित्य में अनेक ऐसे उल्लेख आए हैं जिनसे पता चलता है कि रत्नों के व्यापार के लिए भारतीय जौहरी देश और विदेश की बराबर यात्रा करते थे। दिव्यावदान (पृ० २२९—२३०) की एक कहानी में बतलाया गया है कि रत्नों के व्यापारी मोती, वैडूर्य, शंख, मूंगा चांदी, सोना, अकीक, जमुनिया, और दक्षिणावर्त शंख के व्यापारी के लिए समुद्र यात्रा करते थे। निर्यामक प्राय उन्हें सिंहलद्वीप में बनने वाले नकली रत्नों से होशियार कर देता था तथा उन्हें आदेश दे देता था कि वे खूब समझ कर माल खरीदें। नाताधर्म कथा (१७) और उत्तराध्ययन सूत्र की टीका (३६।७३) से भी रत्नों के इस व्यापार की ओर सकेत मिलता है। उत्तराध्ययन टीका में एक ईरानी व्यापारी की कहानी दी गई है जो ईरान से इस देश में सोना, चांदी, रत्न और मूंगा छिपा कर लाना चाहता था। आवश्यक चूर्णि (पृ ३४२) में रत्नव्यापार के लिए एक बनिए का पारसकूल जाने का उल्लेख है। महाभारत (२।२७।२५-२६) के अनुसार दक्षिण समुद्र से इस देश में रत्न और मूंगे आते थे। ईसा की प्रारंभिक सदियों में तो भारत से रोम को हीरे, सार्ड, लोहिताक्ष, अकीक, सार्डोनिक्स, घावागोरी, प्राइसाप्रेस, जहर मुहरा, रक्तमणि, हेलियोट्रोप, ज्योतिरस, कसौटी पत्थर, लहसुनिया, एवेंचुरीन, जमुनिया, स्फटिक, विल्लौर, कोरंड, नीलम, मानिक, लाल-लाजवर्द, गार्नेट, सुरमुली, मोती इत्यादि पहुचते थे (मोतीचन्द्र, सार्थवाह, पृ० १२८-१२९)

— २ —

प्राचीन रत्नपरीक्षा का क्या रूप रहा होगा यह तो ठीक-ठीक नहीं कहा जा

सकता, पर उस सम्बन्ध के जो ग्रंथ मिले हैं उनका विवरण नीचे दिया जाता है।

१–अर्थशास्त्र—कौटिल्य ने कोश-प्रवेश्य रत्नपरीक्षा (अर्थशास्त्र; २-१०-२९) में रत्नपरीक्षा के सम्बन्ध की कुछ जानकारियां दी है। कोश में अधिकारी व्यक्तियों के सलाह से ही रत्न खरीदे जाते थे। पहले प्रकरण में मोती के उत्पत्ति स्थान, गुण, दोष तथा आकार इत्यादि का वर्णन है। इसके बाद मणि, सौगंधिक, वैडूर्य, पुष्पराग, इन्द्रनील, नंदक, स्रवन्मध्य, सूर्यकान्त, विमलक, सस्यक, अंजनमूल, पित्तक, सुलभक; लोहितक; अमृतांशुक, ज्योतिरसक; मैलेयक; अहिच्छत्रक, कूर्प, पूतिकूर्प, सुगन्धिकूर्प, क्षीरपक, सुक्तिचूर्णक, सिलाप्रवालक, चूलक शुक्रपुलक तथा हीरा और मूंगा के नाम आए हैं। इनमें से बहुत से रत्नों की ठीक-ठीक पहचान भी नही हो सकती क्यों कि बाद के रत्नशास्त्र उनका उल्लेख तक नहीं करते।

२—रत्नपरीक्षा— बुद्धभट्ट की की रत्नपरीक्षा का समय निश्चित करने के पहले वराहमिहिर की बृहत्संहिता के ८० से ८३ अध्यायों की जानकारी जरूरी है। इन अध्यायों में हीरा, मोती और मानिक के वर्णन हैं। पन्नेका वर्णन तो केवल एक श्लोक में हैं। बुद्धभट्ट की रत्नपरीक्षा और बृहत्संहिता के रत्नप्रकरण की छानबीन करके श्री फिनों (वही पृ० ७ से) इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि दोनों की रत्नों की तालिकाओं तथा हीरे और मोती का भाव लगाने की विधि इत्यादि में बड़ी समानता है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि दोनों ग्रंथों ने समान रूप से किसी प्राचीन रत्नशास्त्र से अपना मसाला लिया। गरुड़पुराण ने भी बुद्धभट्ट का नाम हटाकर ६८ से ७० अध्यायों में रत्नपरीक्षा ग्रहण कर लिया। बहुत संभव है कि शायद बुद्धभट्ट का समय ७—८ वीं सदी या इसके पहले भी हो सकता है।

३—अगस्तिमत—अगस्तिमत और रत्नपरीक्षा का विषय एक होते हुए भी दोनो मे इतना भेद है कि दोनो एक ही अनुश्रुति की बहुत दिनोसे अलग हुई शाखा जान पड़ते है। श्री फिनो (पृ० ११) के अनुसार अगस्तिमत का समय बुद्धभट्ट के बाद यानी छठी सदी के बाद माना जाना चाहिए। शायद उसका लेखक दक्षिण का रहनेवाला जान पड़ता है। सभव है कि अगस्तिमत का आधार कोई ऐसा रत्नशास्त्र रहा हो जिसकी ख्याति दक्षिण मे बहुत दिनो तक थी। ग्र थ के अनेक उल्लेखो से ऐसा पता चलता है, कि रत्नशास्त्र के प्राचीन सिद्धान्तो को निबाहते हुए भी ग्र थकार ने अपने अनुभवो का उल्लेख किया है। अभाग्य वश ग्र थकार के व्याकरण और शैली में निष्णात न होने से उसके भाव समझने में बडी कठिनाई पडती है।

४—नवरत्नपरीक्षा—नवरत्नपरीक्षा के दो सस्करण मिलते है। छोटे सस्करण मे सोम भूभुज् का नाम तीन जगह मिलता है जिसके आधार पर यह माना जा सकता है कि इसके रचयिता कल्याणी का पश्चिमी चालुक्य राजा सोमेश्वर (११२८-११३८, ई०) था। इस कथन की सचाई इस बात से भी सिद्ध होती है कि मानसोल्लास के कोशाध्यायमें (मानसोल्लास, भा० १, पृ० ६४ से) जो रत्नो का वर्णन है, वह सिवाय कुछ छोटे मोटे पाठभेदो के नवरत्न जैसा ही है। नवरत्नपरीक्षा का दूसरा सस्करण बीकानेर और तजोरकी हस्तलिखित प्रतियों में मिलता है। इसमें धातुगद, मुद्राप्रकार और कृत्रिम रत्नप्रकार प्रकरण अधिक है। सभव है कि स्मृतिसारोद्धार के लेखक नारायण पडित ने इन प्रकरणो को अपनी ओर से जोड दिया हो।

५—अगस्तीय रत्नपरीक्षा—अगस्तीय रत्नपरीक्षा वास्तव में अगस्ति

मत का सार है। पर विस्तार में कहीं-कहीं नई बातें आ गई हैं। अभाग्यवश इसका पाठ बहुत भ्रष्ट और अशुद्ध है।

उपर्युक्त ग्रंथों के सिवाय रत्नसंग्रह, अथवा रत्नसमुच्चय, अथवा समस्तरत्नपरीक्ष २२ श्लोको का एक छोटासा ग्रंथ है। लघुरत्नपरीक्षा में भी २० श्लोक हैं जिनमें रत्नों के गुण दोषों का विवरण है। मणिमाहात्म्य में शिव पार्वती संवाद के रूप में कुछ उपरत्नो की महिमा गाई गई है।

६–फेरू रचित रत्नपरीक्षा—ठक्कुर फेरू रचित रत्नपरीक्षा का कई कारणों से विशेष महत्त्व है। पहली बात तो यह है कि यहर त्नपरीक्षा प्राकृत में है। ठक्कुर फेरू के पहले भी शायद प्राकृत में रत्नपरीक्षा पर कोई ग्रंथ रहा हो, पर उसका अभी तक पता नहीं। दूसरी बात यह है कि ग्रंथकार श्रीमाल जाति मे उत्पन्न ठक्कुर चंद के पुत्र ठक्कुर फेरू का सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी (१२९६—१३१६) के खजाने और टक्साल से निकटतर सम्बन्ध था। उसका स्वयं कहना है कि उसने बृहस्पति, अगस्त्य और बुद्धभट्ट की रत्नपरीक्षाओं का अध्ययन करके और एक जौहरी की निगाह से अलाउद्दीन के खजाने में रत्नों को देख कर, अपने ग्रंथ की रचना की (३—५), उसके इस कथन से यह बात साफ मालूम पड़ जाती है कि कम से कम ईसा की १३ वी सदी के अंत मे बुद्धभट्ट की रत्नपरीक्षा, वराहमिहिर के रत्नो पर के अध्याय और अगस्तिमत, रत्नशास्त्र पर अधिकारी ग्रंथ माने जाते थे और उनका उपयोग उस युग के जौहरी बराबर करते रहते थे। जैसा हम आगे चल कर देखेंगे, ठक्कुर फेरू ने रत्नपरीक्षा की प्राचीन परम्परा की रक्षा करते हुए भी तत्कालीन मूल्य, नाप, तोल तथा रत्नों के अनेक नए स्रोतो का उल्लेख किया है जिनका पता हमें फारसी इतिहासकारों से भी नही चलता।

— २ —

प्राचीन रत्नशास्त्रो में खानोमे निकले रत्नों के सिवाय मोती और मूगा भी शामिल है जो वास्तव में पत्थर नही कहे जा सकते। साधारणत जवाहरात के लिए रत्न और मणि और कभी-कभी उपल शब्द का व्यवहार किया गया है। संस्कृत साहित्य में रत्न शब्द का व्यवहार कीमती वस्तु औरकीमती जवहरात केलिए हुआ है। वराहमिहिर (वृ० स० ८०।२) के अनुसार रत्न शब्द का व्यवहार हाथी, घोड़ा, स्त्री इत्यादि के लिए गुणपरक है, रत्नपरीक्षा में इसका व्यवहार केवल कचनादि रत्नो के लिए हुआ है। मणि शब्द का व्यवहार कीमती रत्नो के लिए हुआ है, पर बहुधा यह शब्द मनिया, गुरिया अथवा मावे लिए भी आया है।

वेदों में रत्न शब्द का प्रयोग कीमती वस्तु और खजानो के अर्थ में हुआ है। ऋग्वेद में तीन जगह (किथो, पृष्ठ १५) सप्त रत्नों का उल्लेख है। मणि का अर्थ ऋग्वेद में तावीज की तरह पहननेवाले रत्नो से है (ऋग्वेद, १।३।८, अ० वे० १।२९२, ७।४।१ इत्यादि) मणि तागे में पिरोकर गले में पहनी जाती थी। (वाजसनेयी स० ३०।७, तैत्तिरीयम ३।४।३।१) इसमें भी सदेह नही कि वैदिक आर्यो को मोती का भी ज्ञान था। मोती (कृशन) का उपयोग शृङ्गार के लिये होता था [ऋग्वेद, २।३५।८, १०।६८।१, अथर्ववेद ४।१०।१-३]

सुव्यवस्थित रत्नशास्त्रो के अनुसार नव रत्नो में पाच महारत्न और चार उपरत्न है। वज्र, मुक्ता, माणिक्य, नील और मरकत महारत्न हैं। गोमेद, पुष्पराग, वैडुय (लहसनिया] और प्रवाल उपरत्न हैं। मानिक और नीलम के कई भेद गिनाये गये हैं। वराहमिहिर (८२।१) तथा बुद्धभट्ट (११४)

के अनुसार मानिक के चार भेद यथा—पद्मराग; सौगधि; कुरुविंद और स्फटिक हैं। अगस्तिमत (१७३) के अनुसार मानिक के तीन भेद हैं, यथा–पद्मराग, सौगंधिक, कुरुविंद। नवरत्नपरीक्षा (१०६–११०) में इनके सिवाय नीलगंधि भी आ गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा में (४६ से) मानिक का एक नाम मांसपिंड भी है। ठक्कुर फेरू के अनुसार (५६) मानिक के साधारण नाम माणिक्य और चुन्नी है; अब भी मानिक के ये ही दो नाम सर्वसाधारण में प्रचलित हैं। मानिक के निम्नलिखित भेद गिनाए गए हैं–पद्मराय (पद्मराग), सौगंधिय (सौगंधिक), नीलगंध, कुरुविन्द और जामुणिय।

रत्नपरीक्षाओं में नीलम के तीन भेद गिनाये गये हैं–नील साधारण नीलम के लिये व्यवहृत हुआ है तथा इन्द्रनील और महानील उसकी कीमती किस्में थी। ठक्कुर फेरू ने (८१) नीलम की केवल एक किस्म महिंदनील (महेन्द्रनील) बतलाया है।

प्राचीन रत्नपरीक्षाओं में पन्ने के मरकत और तार्क्ष्य नाम आये हैं। पर ठक्कुर फेरू [७२] ने पन्ने के निम्नलिखित भेद दिये है—गरुडोदार, कीडउठी बासउती, मूगउनी, और धूलिमराई।

उपर्युक्त नव रत्नों की तालिका प्रायः सब रत्नशास्त्रों मे आती है पर अगस्तिमत [३२५–२६] में स्फटिक और प्रभ जोड़कर उनकी संख्या ग्यारह कर दी गयी है। बुद्धभट्ट ने उस तालिका में पांच निम्नलिखित रत्न जोड़ दिये हैं— यथा शेष [ओनेक्स] कर्केतन [थ्राइ सोब न्याल] भीष्म, पुलक [गार्नेट] रुधिराक्ष [कर्निलियल] शेष का ही अरबी जज रूपान्तर है। यह पत्थर भारत और यमन से आता था। इसके बहुत से रंग होते हैं जिनमें सफेद और काला प्रधान है। भारत में इस पत्थर का पहनना अशुभ माना जाता था। भीष्म

कोई सफेद रंग का पत्थर होता था। बुद्धभट्ट (२१२-७६) के अनुसार कषायक पिलाहट लिए हुए लाल रंग का पत्थर होता था जो युक्तिकल्पतरु के अनुसार स्फटिक का एक भेद मात्र था। सोमलक नीलमायल सफेद पत्थर था और पुलक कर्वतन के किस्म का नीला पत्थर था।

वराहमिहिर की रत्नों की तालिका में बाईस नाम गिनाये गए हैं पर एक ही रत्न की अनेक किस्में देखते हुए उनकी संख्या कम कर दी जा सकती है। जैसे शशिकान्त स्फटिक का ही एक भेद है, महानील और इन्द्रनील नीलम हैं, तथा सौगंधिक और पद्मराग मानिक के ही भेद हैं। इस तरह रत्नों की संख्या घट कर उन्नीस हो जाती है यथा स्फटिक के सहित दस रत्न, कर्केतन, पुलक, रुधिराक्ष तथा विमलक, राजमणि, शंख, ब्रह्ममणि, ज्योतिरस और सस्यक। ज्योतिरस और सस्यक का उल्लेख अर्थशास्त्र (२। ११। २६) में भी हुआ है। शंख से शायद यहाँ दक्षिणावर्त शंख का अनुमान किया जा सकता है। ज्योतिरस शायद जेस्पर या हेल्योट्रोप था।

उपर्युक्त रत्नों के सिवाय, फिरोजा (पेरोज, पीरोज) लाजवर्द और यानी लहसुनिया या वैडूर्य के नाम भी आये हैं। रत्नसग्रह (१६) में गभ [रूप-मुसारगर्भ, मुसलगभ, मुसारगल्व, पालि-मसारगल्ल, मुसारगल्ल] दूध पानी अलग करनेवाला, श्यामरंग का, चमकीला तथा दुष्ट दोषों का कहा गया है। शब्द-कल्पद्रुम ने इसे इन्द्रनीलमणि कहा हैं जो ठीक महाभारत [२। ४७। १४] में भगदत्त द्वारा युधिष्ठिर को अश्मसार का पात्र देने का उल्लेख है जिसका पहचान शायद मसारगर्भ से की जा है। मसारगर्भ की पहचान चीनी रत्न-चे-यू यानी जमुनिया से की पर अश्मसार यशव भी हो सकता है। क्योंकि आसाम का पड़ोसी व के लिये प्रसिद्ध है।

ठक्कुर फेरुकृत रत्नपरीक्षा [१४-१५] में नवरत्न यथा पद्मराग, मुक्ता, विद्रुम, मरकत, पुखराज, हीरा, इन्द्रनील, गोमेद और वैडूर्य गिनाये हैं। इनके सिवाय ल्हसणिया [९२-९३] फलह [स्फटिक, ९५-९६] कर्केतन [९८] भीसम [भीष्म, ९९] नाम आये है। ठक्कुर फेरू ने लाल, अकीक और फिरोजा को पारसी रत्न बतलाया है [१०३], इस तरह ठक्कुर फेरू के अनुसार रत्नों की संख्या सोलह बैठती है।

पर वर्णरत्नाकर के रचयिता ज्योतिरीश्वर ठक्कुर [आरम्भिक १४ वीं सदी के समय में लगता है कि १८ रत्न और ३२ उपरत्न माने जाते थे [वर्णरत्नाकर, पृ० २१, ४१, श्री सुनीतिकुमार चटर्जी द्वारा सम्पादित, कलकत्ता १९४०]। रत्नों की तालिका में गोमेद, गरुड़ोद्गार, मरकत, मुकुता, मांसखण्ड, पद्मराग, हीरा, रेणुज, मारासेस, सौगंधिक चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, प्रवाल, राजावर्त, कषाय और इन्द्रनील के नाम आये हैं। इस तालिका में रत्नपरीक्षा के महारत्नों में गोमेद, मरकत, मुक्ता, हीरा, पद्मराग, इन्द्रनील, प्रवाल और सूर्यकान्त है। मांसखण्ड, सौगंधिक, [शायद चुन्नी], तो पद्मराग या मानिक के ही भेद हैं। इसी तरह चन्द्रकान्त सूर्यकान्त और कषाय स्फटिक के भेद हैं। मारासेस जिसका सम्बन्ध शेप [ओनेक्स] से हो सकता है, तथा लाजवर्द की गणना रत्नो में किस प्रकार की गयी यह कहना सम्भव नही।

उपमणियों की तालिका वर्णरत्नाकर में दो जगह आई है [पृ० २१, ४१] इनमें [१] कूर्म, [२] महाकूर्म, [३] अहिछत्र, [४] श्यावगं(सं) घ, [५] व्योमराग, [६] कीटपक्ष, [७] कुरू [कूर्म] विंद, [८] सूर्यभा (ना) ल, [९] हरि (री) तसार, [१०] जीविउ (जीवित), [११] यवयाति (यवजाति), [१२] शिखि (खी) निल, [१३] वंशपत्र, [१४]

घू (चू) लिमरकन, [१५] भस्माग, [१६] जबुकान्त, [१७] स्फटिक, [१८] कर्क्केतर, [१९] पारिपान, [२०] नन्दक, [२१] अच (तु) नक, [२२] लोहितक, [२३] शैलेयक, [२४] शुक्तिचूर्ण, [२५] पुलक, [२६] तुत्य (त्थ) क, [२७] शुकग्रीव [२८] गुरुत् (ड) पक्ष, [२९] पीतराग, [३०] वर्णरस (सर), [३१] कप्पूर्रक, [३२] काच।

उपमणियों की उपर्युक्त तालिका में कुछ मणियों पर ध्यान दिलाना आवश्यक है। इसमें कूम और महाकूम तो मणियों की श्रेणी में नही आते। कछुए की खपडियो का व्यापार बहुत पुराना है और इसका उल्लेख पेरिप्लस में अनेक बार हुआ है (शाफ, पेरिप्लस आफ दि एरीथ्रिया सी, पृ० १३ इत्यादि) अहिछत्रक का उल्लेख हमारा ध्यान कौटिल्य (२ । ११ । २९) के आहिच्छत्रक रत्न की ओर ले जाता है। धूलिमरकत से यहा शायद पन्ने के चड से मतलब है और इस तरह वह ठक्कुर फेरू की धूलिमराई भी शायद यह हो। भस्माग से यहा शायद भीष्म से मतलब हैं। जम्बुकान्त से शायद जमुनिया का मतलब है। अजन, पुलक, नदक और शुक्तिचूर्णक के नाम भी अर्थशास्त्र में आए हैं। कर्क्केतर से यहा कर्केतन का तथा लोहितक से लोहिताक का मतलब है। तुत्यक से हमारा ध्यान कौटिल्य के तुत्योद्गत चादी की ओर खीच जाता है (१२ । १४ । ३२)। काच से काच मणि की ओर इशारा है।

सन १४२१ में लिखित पृथ्वीचन्द्र चरित्र (प्राचीन गुर्जर काव्य सग्रह पृ० ९५, बडोदा, १९२०) में रत्नो और उपरत्नो की निम्नलिखित तालिका दी गयी है—पद्मराग, पुष्पराग(पुखराज) माणिक, सौंधलिया, गरुडोद्गार, मणि; मरकत, कर्क्केतन, वज्र, वैडूर्य चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, जलकान्त, शिवकान्त, चन्द्रप्रभ, साकरप्रभ, प्रभनाथ, अशोक, वीतशोक, अपराजित, गगोदक, मसारगल्ल

हंसगर्भ, पुलिक, सौगधिक, सुभग, सौभाग्यकर, विषहर, धृतिकर, पुष्टिकर, शत्रुहर, अंजन ज्योतिरस, शुभरुचि, शूलमणि, अंशुकालि, देवानन्द, रिष्टरत्न, कीटपंख, कसाउला, धूमराइ, गोमूत्र, गोमेद, लसणीया, नीला, तृणधर, खगराइ, वज्रधार, षटकोण, कणी, चापडी, पिरोजा, प्रवाला, मौक्तिक ।

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से इस बात का पता चलता है कि ग्रन्थकार ने उसमें रत्नों और उपरत्नों के सिवाय उनके भेद, गुण, दोष इत्यादि की भी गिनती कर ली है। जैसे पद्मराग, माणिक, सींधलिया और सौगधिक मानिक के भेद है। मरकत के भेद में ही गरुडोद्गार, मणि, मरकत; धूमराइ और कीटपंख आ जाते है। स्फटिक के भेदो में चन्द्रकान्त, जलकान्त, शिवकान्त; चन्द्रप्रभ, साकरप्रभ, प्रभानाथ; गंगोदक, हसगर्भ, कसाउला (काषाय) आजाते हैं। पुखराज, कर्क्केतन, वज्र, वैडूर्य, अशोक, वीतशोक पुलक, अंजन, ज्योतिरस, अंशुकालि, मसारगल्ल, रिष्टरत्न, गोमूत्र, गोमेद, लहसनिया, नीला; पिरोजा; मोती, मूंगा अलग अलग रत्न या उपरत्न हैं। अपराजित, सुभग, सौभाग्यकर, विषहर, धृतिकर, पुष्टिकर, शत्रुहर, देवानन्द, तृणधर, रत्नों के गुण से सम्बन्ध रखते है। वज्रधर, षट्कोण, कर्णी और चापड़ी रत्नों की बनावट से सम्बन्धित है।

यहां बौद्ध और जैन शास्त्रों में आई रत्नों की तालिकाओं की ओर भी ध्यान दिला देना आवश्यक मालूम होता है। चुल्लवग्ग (९ । १ । ३) में मुत्ता, मणि, वेलूरिय, शंख, शिला, पवाल, रजत, जातरूप, लोहितंक और मसारगल्ल के नाम आए हैं। मिलिन्द्र प्रश्न (पृ० ११८) में इंदनील, महानील, जोतिरस, वेलुरिय, उम्मापुप्फ, सिरीस, पुप्फ, मनोहर, सूरियकन्त, चन्दकन्त, वज्र, कज्जोपमक, फुस्सराग, लोहितंक और मसारगल्ल के नाम आये है। सुखावती

व्यूह (५६) में वैडूर्य, स्फटिक सुवर्ण रूप्य अश्मगर्भ लोहितिका और मुसार-गल्ल नाम आये हैं। दिव्यावदान में रत्नों की दो तालिकाएँ हैं। एक में (पृ० ५१) मुक्ता, वडूर्य, शंख, शिला, प्रवालक, रजत, जातरूप, अश्मगर्भ, मुसारगल्ल, लोहितिका और दक्षिणावर्त के नाम हैं, और दूसरी में (पृ० ६७) पुष्पराग, पद्मराग, वज्र, वैडूर्य, मुसारगल्ल, लोहितिका, दक्षिणावर्त शंख, शिला और प्रवाल के नाम हैं। जैन प्रज्ञापना सूत्र (भगवानदास हर्षचन्द्र द्वारा अनूदित १ पृ० ७७, ७८) में वइर जग (अजण) पवाल, गोमेज्ज, रुचक, अंक, फलिह, लोहियक्ख, मरकय, मसारगल्ल, भुयमोयग, इन्दनील, हंसगब्भ, पुलक, सोगंधिक, चन्द्रप्रभ, वडूय, जलकान्त और सूर्यकान्त के नाम आये हैं। पुष्पवग की तालिका में शिलासे शायद स्फटिक से मतलब है। मिलिन्द प्रश्न की तालिका में उम्मपुप्फ से शायद जमुनिया का, सिरीषपुप्फ से (अ० शा० २। ११। २९) शायद किसी तरह के वैडूर्य का बोध होता है। कज्जोपमर से शायद चिंतामणि रत्न की ओर इशारा है जो सब काम पूरा करता था। वराहमिहिर का (बृ० सं० ८०। ५) ब्रह्ममणि भी शायद चिन्तामणि ही हो। गुणवती व्यूह के अश्मगर्भ से शायद पन्ने का मतलब हो (अमरकोश २। ९। ९२)। प्रज्ञापनासूत्र में भुयगमोचक से शायद जहर मुहरे का और हंसगर्भ से किसी तरह के स्फटिक का बोध होता है।

अर्थशास्त्र (२। ११। २९) में जैसा हम पहले देख आये हैं, अनेक रत्नों के उल्लेख हैं। इन में मोती, हीरा पद्मराग, वैडूर्य, पुष्पराग, गोमदक, नीलम, चन्द्रकान्त और सूर्यकान्त इत्यादि रत्नों की श्रेणी में आ जाते हैं। कौट मौलेयक और पारसमुद्रक से मणियों की उत्पत्ति स्थान का बोध होता है। कूट पर्वत तो का पता नहीं पर मौलेयक रत्न का नाम शायद बलूचिस्तान में झालावन

में बहनेवाली मूलानदी से पड़ा हो (मोतीचन्द्र जे० यू० पी० एच० एस० १७ भा० १, पृ० ६३)

लगता है कि प्राचीन साहित्य में रत्नों की तालिका देने की कुछ रीति सी चल गयी थी। तामिल के सुप्रसिद्ध काव्य शिलप्पदिकारम् में भी एक जगह रत्नों का उल्लेख आया है (शिलप्पदिकारम् १४।१८०-२०० : श्री दीक्षितार द्वारा अंग्रेजी अनुवाद मद्रास १९३९) मथुरे में घूमता घामता कोवलून जौहरी बाजार में पहुंचा। वहां उसने चार वर्ण के निर्दोष हीरे, मरकत, पद्मराग, माणिक्य, नीलविंदु, स्फटिक, पुष्पराग, गोमंदक और मोती देखे।

–: ३ –

प्रायः रत्नशास्त्रों में (अगस्तिमत ४, ६३. बुद्धभट्ट ११ का पाठ भेद) रत्नों की परख आठ तरह से, यथा—(१) उत्पत्ति (२) आकर (३) वर्ण अथवाछाया (४) जाति (५) गुण—दोष (६) फल (७) मूल्य और (८) विजाति (नकल) के आधार पर की गयी है। इस का विस्तार नीचे दिया जाता है।

(१) **उत्पत्ति**—यहां उत्पत्ति से रत्नों की वास्तविक अथवा पारलौकिक उत्पत्ति से तात्पर्य है। रत्नों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रायः सब शास्त्रों का मत है कि वे एक वज्राहत असुर से पैदा हुए। बुद्धभट्ट (२; १२) के अनुसार एक पराक्रमी त्रिलोक विजेता दानवराज बलि था। एक समय उसने इन्द्र को जीत लिया। खुली लड़ाई में उससे पार न पा सकने के कारण देवताओं ने उससे यज्ञ में बलि-पशु बनने का वर माँगा। उसके एवमस्तु कहने पर सौत्रामणि यज्ञ में देवताओं ने उसे स्तम्भ से बाँध दिया। उसकी विशुद्ध जाति और कर्म से उसके शरीर के सारे अवयव रत्नों में परिणित हो गए। ऐसा होने पर देव और

नागों में यज्ञ सिद्ध रत्नों के लिए छीनाझपटी होने लगी। इस छीनाझपटी में समुद्र, नदी, पर्वत, वन इत्यादि में रत्न गिरकर आकर रूप में परिवर्तित हो गये। इन रत्नों से राक्षस, विष, सर्प और व्याधियों से तथा पाप लग्न में जन्म तथा दुर्दिन से रक्षा होती है। अगस्तिमत (१—६) में भी कहानी का यही रूप है। केवल फरक इतना है कि यज्ञ में असुर के सिर पर इन्द्र ने वज्र मारा और वज्राहत सिर से ही रत्नों की सृष्टि हुई। उसके सिर से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, नाभि से वैश्य और पैरों से शूद्र रत्नों की उत्पत्ति हुई। नवरत्न परीक्षा (८ से) में दैत्य का नाम वज्र दिया गया है। वज्रासुर को हराने के लिए इन्द्र ने उससे उसके शरीरदान का वर माँगा। ब्राह्मण वेषधारी इन्द्र की प्रार्थना स्वीकार कर लेने पर यह जानकर कि उसका शरीर अभेद्य है, इन्द्र ने उसके मस्तक पर वज्र से प्रहार किया। उसके शरीर से तरह तरह के रत्न निकले। देव, नाग, सिद्ध, यक्ष, राक्षस और किन्नरों ने तो वह रत्न जाल ग्रहण कर लिया, बाकी रत्न पृथ्वी पर फैल गए।

ठक्कुर फेरु (६-१६) की रत्नोत्पत्ति संबंधी अनुश्रुति का रूप भी बुद्धभट्ट वाली जनश्रुति जैसा ही है। एक दिन असुर बलि इन्द्रलोक को जीतने गया। वहा देवताओं ने उससे, यज्ञ-पशु बनने की प्रार्थना की, जिसे उसने स्वीकार कर लिया। उसकी हड्डियों से हीरे, दाँतों से मोती, रुह से माणिक, पित्त से पन्ना, आँखों से नीलम, हृतरस से वैडूर्य, मज्जा से कर्केतन, नखों से लहसुनिया, मेद से स्फटिक, माँस से मूगा, चमड़े से पुखराज तथा वीर्य से भीष्म पैदा हुए। असुर बल के शरीर से निकले रत्नों में से सूर्य ने पद्मराग, चन्द्र ने मोती मंगल ने मूगा, बुद्ध ने पन्ना, बृहस्पति ने पुखराज, शुक्र ने हीरा, शनि ने नीलम, राहु ने गोमेद और केतु ने वैडूर्य ग्रहण कर लिए और इसीलिए इन रत्नों को

धारण करने वाले उपर्युक्त ग्रहों से पीड़ा नहीं पाते। चोखे रत्न ऋद्धिदायक और सदोष रत्न दरिद्रता देने वाले होते हैं।

पर रत्नों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उपर्युक्त मत ही प्रचलित नहीं था, इसका निराकरण वराहमिहिर (८०—३) ने कर दिया है। उनके अनुसार एक मत से रत्न दैत्य वल से उत्पन्न हुए, दूसरों का कहना है कि दधीचि से। कुछ इस मत के हैं कि उनकी उत्पत्ति पत्थरों के स्वभाववैचित्र्य से है। ठक्कुर फेरू (१२) के अनुसार भी कुछ लोग ऐसे थे जिनका मत था कि रत्न पृथ्वी के विकार है। जैसे सोना, चाँदी, तांवा आदि धातु है वैसे ही रत्न भी।

एक दूसरे विश्वास के अनुसार मनुष्य, सर्प तथा मेंढक के सर में मणि होती थी। (अगस्तिमत, ६३—६७) वराहमिहिर, (८५—५) के अनुसार सर्पमणि गहरे नीले रंग की और बड़ी चमकदार होती थी।

(२) आकर—रत्नों की खान को आकर कहा गया है। वराहमिहिर (८०—१७) के अनुसार नदी, खान और छिटफुट मिलने की जगह आकर है। वुद्धभट्ट (१०) ने आकरों में समुद्र, नदी, पर्वत और जंगल गिनाए हैं।

(३) वर्ण, छाया—प्राचीन ग्रन्थों में रत्नों के रंग को छाया कहा गया है। पर वाद के शास्त्रों में वर्ण के लिए छाया शब्द का व्यवहार हुआ है। बहुधा शास्त्रकार रत्नो को छाया की उपमा जानी पहचानी वस्तुओं से देते हैं।

(४) जाति—रत्नशास्त्रों में इस शब्द का तीन अर्थों में प्रयोग हुआ है। यथा असली रत्न, रत्न की किस्म और जाति। अन्तिम विश्वास के अनुसार रत्नों में भी जातिभेद होता था। यह विश्वास शायद पहिले पहल हीरे तक ही सीमित था। इसके अनुसार ब्राह्मण को सफेद हीरा, क्षत्रिय को लाल, वैश्य को पीला

और शूद्रों को को काला हीरा पहनने का विधान था। बाद में यह विश्वास और रत्नों के सम्बन्ध में भी प्रचलित हो गया ×।

(५)गुण, दोष—रत्नों के सम्बन्ध में इन शब्दों का प्रयोग उनकी शुद्धता और चमत्कार लेकर हुआ है। पहिले अर्थ में वे रत्न के गुण और दोष-परक हैं। दूसरे अर्थ में वे रत्न के बुरे और भले प्रभाव के द्योतक हैं।

रत्नों के गुण निम्नलिखित हैं--महत्ता(भारीपन) गुरुत्व, गौरव(घनत्व) काठिन्य, स्निग्धता राग-रंग, आव(अर्चिस, द्युति कान्ति, प्रभाव) और स्वच्छता।

(६)फल—सभी रत्नों के फल की विवेचना की गयी है। अच्छे रत्न स्वास्थ्य, दीर्घजीवन, धन और गौरव देने वाले, सर्प, जंगली जानवर, पानी, आग, बिजली, चोट, बिमारी इत्यादि से मुक्ति देने वाले तथा मैत्री कायम रखने वाले माने गए हैं। उसी तरह खराब रत्न दुख देने वाले माने गए हैं।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि रत्नों के बिमारी अच्छा करने के गुणों का रत्न शास्त्रों में उल्लेख नहीं है। रत्नों के फलों की जाँच पडताल से यह भी पता चलता है कि उनके लिखने में दिमागी कसरत को अधिक प्रश्रय दिया गया है। पर इसमें संदेह नहीं कि शास्त्रकारों ने रत्न-फल के सम्बन्ध में लोकविश्वासों की भी चर्चा कर दी है। हीरे का गर्भस्रावक फल और पन्ने का सर्पविष हरन इसी कोटि के विश्वास है।

× यहा यह बात उल्लेखनीय है कि दिव्य शरीर का रत्नों में परिणत होजाने का विश्वास वैदिक है (जे० आर० एस० १८९४, पृ० ५५८–५६०)। ईरानियों का भी कुछ ऐसा ही विश्वास था (जे० आर० एस० १८९५, पृ० २०२–२०३)।

(७)रत्नों के मूल्य-उनके तौल और प्रमाण पर आश्रित होते थे। प्राचीन ग्रंथों में रत्नो का मूल्य रूपको और कार्षापणो में निर्धारित किया गया है। यह पता नही चलता कि रत्नो का मूल्य सोना अथवा चांदी के सिक्को मे निर्धारित होता था; पर कार्षापण के उल्लेख से इनका दाम चांदी के सिक्को ही मे मालूम पड़ता है। अगस्तिमत के एक क्षेपक(१२) से पता चलता है कि गोमेद और मूंगे का दाम चांदी के सिक्कों मे होता था, तथा वैडूर्य और मानिक का सोने के सिक्को में। ठक्कुरफेरु (१३७) ने बड़े हीरे, मोती; मानिक और पन्ने का मूल्य स्वर्णटकोमें बतलाया है।आधे मासे से चार मासे तक के लाल, लहसुनिया, इन्द्रनील और फिरोजा के दाम भी स्वर्णमुद्राओ में होते थे (१२१--२३)। एक टांक में १० से १०० तक चढ़नेवाले मोतियो का दाम रूप्य टंकों मे होता था (१२४-१२६)। उसी तरह एक रती मे १ से दो थान चढ़ने वाले हीरे का मूल्य भी चांदी के टंकों मे कहा गया है (१२७-२८)। गोमेद, स्फटिक, भीष्म, कर्कतन, पुखराज, वैडुर्य—इन सब के मूल्य भी द्रम्म में होते थे (१३०)।

मानसोल्लास (१,४५७-४६४) मे रत्न तोलने की तुला का सुन्दर वर्णन है। उसके तुलापात्र कांसे के बने होते थे। उनमे चार छेद होते थे। जिनमे डोरियां पिरोई जाती थी। कांसे की दांडी १२ अंगुल की होती थी! जिसके दोनों बगल मुद्रिकायें होती थी। दांड़ी के ठीक बीचोंबीच पॉच अंगुल का कांटा होता था। जिसका एक अंगुल छेद मे फसा दिया जाता था। कांटे के दोनो ओर तोरण की आकृति बनाई जाती थी। जिसके सिर पर कुण्डली होती थी। उसी मे डोरी लगती थी। तराजू साधने के लिए एक कलंज तौल का माल एक पलड़े मे और पानी दूसरे पलड़े में भरा जाता था। जब कांटा तोरण के ठीक बीचमे बैठ जाता था तो तराजू सध गई मानी जाती थी।

(८)विजाति—इस शब्द से कृत्रिम रत्नों का तथा कीमती रत्नों की तरह दिखने वाले उपरत्नों से अभिप्राय है। ऐसे नकली रत्न भारत और सिंहल में बहुतायत से बनते थे। नवरत्न परीक्षा (१७४-१८३) के अनुसार सम भाग जले शंख और सिंदूर को सद्यः प्रसूता गाय के दुग्ध में सान कर फिर उसे तृण से बांध कर बांस में भर कर मिट्टी के बरतन में चावल के साथ पका कर फिर उसे निकाल कर धीमी आंच पर रंग देते थे, फिर उसे तेल में बोरते थे। इससे बांस के भीतर नकली मूंगा बन जाता था। इन्द्रनील बनाने के लिए एक कुप्पे में एक पल नील का चूर्ण और दो पल रांग का चूर्ण मिलाकर खूब हिलाते थे। फिर पूर्वोक्त विधि से नकली इन्द्रनील बना लेते थे। नकली मरकत बनाने के लिए मजीठ, ईंगुर और नील समभाग में लेकर उसे शीशे की कुप्पी में खूब मिलाते थे। फिर उनके रवे अलग करके उन्हें आग में पकाया जाता था। मानिक लाल के चूर्ण और ईंगुर के मेल से उपर्युक्त विधि से बनता था।



इस प्रकरण में रत्न-परीक्षाओं के आधार पर उनमें आए रत्नों के उपर्युक्त आठ विशेषताओं की जाच पड़ताल करके यह बतलाने का प्रयत्न किया गया है कि ठक्कुर फेरू ने अपनी रत्नपरीक्षा में कहा तक प्राचीनता का उपयोग किया है और कहा उसने रत्न सम्बन्धी अपने अनुभवों का।

हीरा—हीरा रत्नों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। उसकी विशेषता यह है कि वह सब रत्नों को काट सकता है। उसे कोई रत्न नहीं काट सकता प्रायः सब शास्त्रों के अनुसार हीरे की उत्पत्ति असुरबल की हड्डियों से हुई। उसका नाम वज्र इसलिए पड़ा कि इन्द्र से वज्राहत होने पर ही वह निकला।

प्रधान रत्नशास्त्र हीरेकी खानें आठ या दस मानते हैं। पर कौटिल्य (अनुवाद, पृ० ७८) में हीरे की खानों के कुछ दूसरे ही नाम हैं। यथा सभाराष्ट्रक (विदर्भ या बरार) में मध्यम राष्ट्रक (कोसल यानी दक्षिण कोसलमें) काश्मक (शायद अश्मक) [हैदराबाद की गोलकुण्डा की खान] इन्द्रवानक (कलिंग, ओड़ीसा) की तो पहचान टीकाकारों ने की है। काश्मक की पहचान टीकाकारने बनारसी हीरे से की है। जिससे बनारस के हीरे तराशों का अड्डा होंने की ओर संकेत हो सकता है। श्रीकटनक हीरा वेदोत्कट पर्वत में मिलता था। श्रीकटनक का ठीक पता नहीं चलता पर शायद इससे; धनकटक (धरणीकोट) जो प्राचीन अमरावती का नाम था, बोध होता है। अगर यह पहचान ठीक है तो यहां कृष्णा नदी की घाटी में मिलने वाले हीरों की ओर संकेत हो सकता है। मणिमंतक हीरा मणिमत् अथवा मणिमन्त पर्वत के पास पायाजाता था। इस मणिमत् पर्वत की पहचान श्रीपार्जिटर ने (मारकण्डेय पुराण, पृ०३७०) में कश्मीर के दक्षिण की पहाड़ियों से की है। यहां: अब हीरा मिलने का पता नहीं चलता। रत्नशास्त्रों में दी गई हीरे की खानों का पता निम्नलिखित तालिका से चल जायेगा।

बुद्धभट्ट	वराहमिहिर	अगस्तिमत	मानसोल्लास	अगस्तीय	रत्नसंग्रह	ठक्कुर फेरू रत्नपरीक्षा
सुराष्ट्र	...	...	...	...	...	हेमन्त
हिमालय	...	...	...	...	...	हिमवन्त:
मातंग	...	बंग	मातग	मगध	मातंग	...
पौंड्र	...	...	...	...	...	पंडुर:(पौड्र:)
कोसल	...	...	...	...	...	...
वैण्यातट	वेणातट	वेणु	वैरागर	+	आरब	वेणु
सूर्पार	...	...	सौपार	+	...	सौपारक

-यहा यह निश्चित कर लेना कठिन है कि उपर्युक्त यन्त्र में कितने भौगोलिक नाम वास्तविकता लिए हुए हैं और कितने काल्पनिक हैं। पर इसमें संदेह नहीं की यत्र में खानों और बाजारों के नाम मिल गये हैं। यह भी सम्भव है कि बहुत सी प्राचीन खाने समाप्त हो गयी हो और उनकी खुदाई बहुत प्राचीन काल में बन्द कर दी गयी हो। सुराष्ट्र यानी आधुनिक सौराष्ट्र में हीरे की किसी खान का पता नहीं चलता पर यह सभव है कि यहा से रत्न बाहर भेजे जाते हो। यहा एक उल्लेखनीय बात यह है कि प्राचीन साहित्य में जैसे महानिद्देस और वसुदेवहिण्डी में सुराष्ट्र एक बन्दर का नाम भी आया है जो शायद सोमनाथ पट्टन हो। यही बात सूर्पारक यानी बम्बई के पास सोपारा बन्दरगाह के बारे में भी कही जा सकती है। आयशूर की जातकमाला में तो इस बन्दर में रत्नो के लाए जाने का उल्लेख भी है। हिमालय में हीरे का होना जो उस अनुश्रुति का द्योतक है जिसके अनुसार मेरू, हिमालय और समुद्र रत्नो के आकर माने गए हैं। यह बात ठीक है कि शिमला के पास कुछ हीरे मिले थे पर हिमालय में हीरे की खान होने का पता नहीं चलता। मातग से यहा किस प्रदेश से तात्पर्य है इसका भी ठीक पता नहीं चलता। श्री फिनो(पृ०२६) चालुक्यराज मगलीश के एक लेख के आधार पर मातगों का निवास स्थान गोल्कुण्डा का प्रदेश स्थिर करते है। हरिषेण(बृहत्कथा कोश ७५।१-३)के अनुसार मातग पाड्य देश तथा उसके उत्तर में पवत की सधि पर रहते थे। शायद यहा सेलम जिलेके चीवरे पवत श्रेणी से मतलब है, पर यहां हीरे का पता नही चला है। पौण्ड्र देश से माल्दह, कोसी के पूव पुर्निया जिले का कुछ भाग तथा दीनाजपुर और राजशाही जिले के कुछ भाग का बोध होता है। तथा पौण्ड्रवर्धन में बोगरा जिले के महास्थान से मतलब है। शायद कलिंग के हीरे से कडपा, वेलारी, कर्नूल, कृष्णा, गोदावरी इत्यादि के तथा

सम्भलपुर के पास ब्राह्मणी, सक तथा दक्षिणी कोयल नदियो से मिलने वाले हीरे से है। जहांगीर युग की खीखरा की हीरे की खान भी इस बात की पुष्टि करती है। जहांगीर ने स्वय अपने राज्य के दसवे वर्ष के विवरण (तुजूक, अंग्रेजी अनुवाद, भा० १, ३१६) में इस बात का उल्लेख किया है कि बिहार के सूबेदार इब्राहीमखां ने खोखरा को फतह करके वहां के हीरे की खान पर कब्जा कर लिया। हीरे वहां की एक नदी से निकलते थे। इसमें संदेह नही कि कोसल से यहां दक्षिण कोशल से मतलब है। जिसकी पहचान आधुनिक महाकोसल से है। शायद वैरागर और वेणातट या वेणु के हीरे कौसल ही के अन्तर्गत आ जाते है। वेणा नदी जो आजकल की वेन गगा है चांदा जिले से होकर बहती है और उसी पर स्थित बैरागढ मे हीरे मिलते है। मानसोल्लास के वैरागर(सं० वज्राकर) की पहचान इसी वैरागढ से ठीक उतर जाती है। शायद यही स्थान चीनी यात्रियों का कोस्सल और टाल्मी का कौसल रहा हो। अगस्तीय रत्नपरीक्षा में आये मगध से भी शायद छोटा नागपुर की खानों का बोध होता है।

रत्न शास्त्रो में हीरे के अनेक रंग बताये गये है। इनके अनुसार सुराष्ट्र का हीरा लाल, हिमालय का तमैला, मातंग का पीला, पुंड्र का भूरा, कलिंग का सुनहरा; कोसल का सिरीस के फूल के रंग वाला, वेणा का चन्द्र की तरह सफेद, तथा सुपारा का सफेद होता था। ठक्कुर फेरू (२२) ने हीरे का रग तमैला सफेद, नीला, मटमैला, हरताल की तरह पीला, तथा सिरीस के फूल जैसा बतलाया है। ये रंग खान-परक थे। हीरे के वर्णो की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया गया है। सफेद हीरा ब्राह्मण, लाल क्षत्रिय, पीला वैश्य और काला शूद्र पहनने का अधिकारी था। पर राजा को चारो वर्ण के हीरे पहनने का अधिकार था। पर बाद के लेखकों ने सफेद, लाल, पीले और काले हीरे को ही क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय,

वैश्य और शूद्र जाति में बांट दिया है । ठक्कुर फेरू (२६) भी इसी मत के हैं । उनकी राय में सफेद चोखा हीरा मालवी अर्थात मालवे का कहलाता था ।

जिनके घरों में निर्दोष हीरे होते हैं उनकी विघ्न, अकाल मृत्यु और शत्रुभय से सुरक्षा होती है । लाल और पीले हीरे पहनने से राजा को विजयश्री हाथ लगती थी । पुरुष लपलपाते हीरे में भूत, प्रेत, वृक्ष, मंदिर, इन्द्रधनुष इत्यादि देख सकते थे (३०) ।

हीरे का आरंभिक रूप अठपहला होता था और हीरे के इसी आकार को रत्नशास्त्रों में सब से अच्छा माना है । प्राचीन रत्नशास्त्रों के अनुसार अच्छे हीरे में छ या अष्ट कोण, बारह धाराएं, आठदल पार्श्व या अंग कहे गए हैं । हीरे की चोटी को कोटि तल को विभाजित करने वाली रेखा को अग्र, चोटी की उठान को उत्तुंग तथा नुकीली विभाजन रेखाओं को तीक्ष्ण कहते थे । तौल में कम, स्वच्छ, शुद्ध और निर्मल और भास्कर-ये हीरे के गुण माने गए है । ठक्कुर फेरू (२४) ने हीरे के आठ गुण कहे हैं-सम फलक, उच्च कोणी, तीक्ष्ण धारा, पानी (वारितक), अमल, उज्ज्वल, अदोष और लघुतोल ।

रत्नशास्त्रों में हीरे के अनेक दोष भी उल्लिखित हैं । जिनमें टूटी चोटी या पहल, एक की जगह दो कोण, दल दीनता, वर्तुलता, दलहीनता, चपटापन, लम्बोदरपन भारीपन, बुलबुलापना, और कांतिहीनता मुख्य है । ठक्कुर फेरू २५) ने नौ दोष यथा--काकपद, बिंदुर (छींटा) रेखा, मैलापन, चिकट, एक शृंगता, वर्तुलता, जौका आकार, तथा हीन अथवा अधिक कोण बतलाया हैं । उसके अनुसार (३१-३२) अत्यन्त चोखी तीखी धारा पुत्रार्थी स्त्रियों के लिए हानिकर थी । पर इसके विपरीत चिपटा, मलिन और तिकोना हीरा रमणियों

को इसलिए सुखकर होता था कि पुत्ररत्नों की जननी होने से वे अपने को प्रथम रत्न मानती थीं, भला फिर उनका सदोष रत्न क्या कर सकता था।

हीरे का मूल्य प्राचीन रत्नशास्त्रों में तौल के आधार पर निश्चित किया जाता था। इस सम्बन्ध में दो मत थे एक बुद्धभट्ट और वराहमिहिर का और दूसरा अगस्तिमत का। पहिली व्यवस्था में तौल तंडुल और सर्षप (१ तंडुल=८ सर्षप) में थी तथा मूल्य रूपकों में। हीरे की सबसे अधिक तौल बीस तंडुल और दाम दो लाख रूपक निश्चित की गई थी। तौल के इस क्रम में हर घटाव या चढ़ाव दो इकाइयों के बराबर होता था। २० तंडुल हीरे का दाम दो लाख था और एक तडुल के हीरे का दाम एक हजार। देखने में तो यह हिसाब सीधा साधा मालूम पडता है, पर श्री फिनो ने हिसाब लगाकर बतलाया है कि २० तंडुल यानी चार केरट के हीरे का दाम इस रीति से बहुत अधिक बैठ जाता है।

अगस्तिमत के अनुसार तौल्य और स्थौल्य के आधार पर पिंड से हीरे का दाम निश्चित किया जाता था। पिंड का माप १ यव स्थौल्य और १ तंडुल तौल्य मान लिया गया है। इस तरह एक पिंड के हीरे का दाम ५०, दो का ५० गुणा ४, चार का ५०गुणा १२, पाँच का ५० गुणा १६……इस तरह बढते बढते २० पिंड का दाम ३८०० तक पहुंच जाता है। पर इस मूल्यांकन में एक ही घनत्व के हीरे आते हैं; उनके हलके होने पर उनका दाम बढ जाता था तथा भारी होने पर घट जाता था। इस तरह एक हीरा एक पिंड के घनत्व का होते हुए भी १।४ हलके होने पर उसका दाम १८ गुना होता था, १।२ हलके होने पर ३६ गुना तथा ३।४ हलके होने पर ७२ गुणा हो जाता था। इसी तरह एक हीरा एक पिंड घनत्व का होते हुए भी भारी हो तो उसका दाम १।४ भारी होने पर आधा हो जाएगा इत्यादि। श्री फिनो की राय में अगस्तिमतका ही मूल्यांकन वास्तविक मालूम पड़ता है।

ठक्कुर फेरू ने हीरे का मूल्यांकन अलग न देकर मोती, मानिक और पन्ने के साथ दिया है। पर हीरे का मूल्य निर्धारण करते समय उसे अगस्तिमत का ध्यान अवश्य रहा होगा। उसके अनुसार (३३) समपिंड हीरे का भारी होने पर कम दाम और फार तथा हलके होने पर ज्यादा दाम होता था।

अलाउद्दीन के समय जौहरियों की तौल का वर्णन ठक्कुर फेरू ने इस तरह से किया है —

३ राई	—	१ सरसो
६ सरसो	—	१ तडुल
२ तडुल	—	१ जौ
१६ तडुल या ६ गुजा(रत्ती)	—	१ मासा
४ मासा	—	१ टाक

टाक के उपर्युक्त तौल में कई बातें उल्लेखनीय है। श्री नेलसन राइट ने (दि कॉयन्स एण्ड मेट्रालोजी आफ दि सुल्तान्स् आफ देहली, पृ ३९१ से) अपनी खोज से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि सुल्तान युग के टाक में ९६ रत्तियां होती थी। रत्ती का वजन १०८ ग्रेन मान कर उन्होंने टाक की तौल १७२ ग्रेन निर्धारित की है। पर ठक्कुर फेरु के हिसाब से तो २४ रत्ती एक टाक यानी १७२ ८ ग्रेन के बराबर हुई यानी एक रत्ती का वजन करीब ६ ३५ ग्रेन के करीब हुआ। अब यहां प्रश्न उठता है कि गुजा से यहां साधारण गुजा का ही अर्थ है अथवा यह कोई तौल थी जिसका वजन आधुनिक रत्ती से करीब करीब पाँचगुना अधिक था।

ठक्कुर फेरू (१११) ने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है कि रत्नों का मूल्य बंधा हुआ न होकर अपनी नजर पर अवलम्बित होता है, फिर भी

अलाउद्दीन के समय रत्नों के जो दाम थे उनकी तौल के साथ उसने वर्णन किया है और यह भी बतलाया है कि चार रत्न यानी हीरा, मोती, मानिक और पन्ने का दाम सोने के टंके मे लगाया जाता था। इन रत्नो की बड़ो से बड़ो तौल एक टांक और छोटी तौल एक गुंजा मान ली गई है। पर एक टांक में १० से १०० तक चढने वाले मोती तथा एक गुँजा में १ से १२ थान तक चढ़ने वाले हीरे का मूल्य चांदी के टांक में होता था। उपर्युक्त रत्नों के तौल और मूल्य दो यन्त्रों में समझाये गए है —

कीमती रत्न सम्बन्घी यन्त्र—

गुँजा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१५	१८	२१	२४
हीरा	५	१२	२०	३०	५०	७५	११०	१६०	२४०	३२०	४००	६००	१४००	२८००	५६००	११२००
मोती	०॥	१	२	४	८	१५	२५	४०	६०	८४	११४	१६०	३६०	७००	१२००	२०००
मानिक	२	५	८	१२	१८	२६	४०	६०	८५	१२०	१६०	२२०	४२०	८००	१४००	२४००
पन्ना	०।	०॥	१	१॥	२	३	४	५	६	८	१०	१३	१८	२७	४०	६०

उपर्युक्त यन्त्र की जांच से कई बातों का पता लगता है। सबसे पहली बात तो यह है कि अलाउद्दीन के काल में और युगों की तरह हीरे की कीमत सब रत्नों से अधिक थी। हीरा जैसे जैसे तौल मे बढ़ता जाता था उसी अनु-

पात में उसकी कीमत बढती जाती थी । बारह रत्ती तक तो उसका दाम क्रमश बढता था पर उसके बाद हर तीन रत्ती के वजन पर उसका दाम दुगुना हो जाता था । अगर चादी और सोने का अनुपात १० १ मान लिया जाय तो एक टाक के हीरे का मूल्य १,२०००० चादी के टाक के बराबर होता था । इसके विपरीत एक टाक के मोती का मूल्य २००० और मानिक का २४०० सुवर्ण टका था । पन्ने का दाम तो बहुत ही कम यानी एक टक पन्ने का दाम ६० सुवर्ण टका था ।

छोटे मोती और हीरो के तौलऔर दाम का यन्त्र—

मोती(टक १)	१०	१२	१५	२०	२५	३०	४०	५०	६०-७०	७०-१००	–	–
रुप्यटक	५०	४०	३०	२०	१५	१२	१०	८	५	३	–	–
वज्रगुणा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
रुप्यटंक	३५	२६	२०	१६	१३	१०	८	७	६	५	४	३

उपर्युक्त यन्त्र से यह पता चलता है कि मोती और हीरे जितने अधिक एक टाकमें चढते थे उतना ही उनका दाम कम होता जाता था और इसीलिए उनका दाम सोने के टको में न लगाया जाकर चादी के टको में लगाया जाता था ।

रत्न शास्त्रो के अनुसार नकली हीरा लोह, पुखराज, गोमेद, स्फटिक, वैडूर्य और शीशे से बनता था । ठक्कुर फेरु (३७) ने भी इन्ही वस्तुओ को नकली हीरा बनाने के काम में लाने का उल्लेख किया है । नकली हीरे की पहचान अम्ल तथा दूसरे पत्थरो के काटने की शक्ति से होती थी । ठक्कुर फेरु (४८)-के अनुसार नकली हीरा वजन में भारी जल्दी घिसने वाला, पतली धार वाला तथा सरलतापूर्वक घिस जाने वाला होता था ।

मोती—महारत्नों में मोती का स्थान दूसरा है । भारतीयों को शायद

इस रत्न का बहुत प्राचीनकाल से पता था। मोती को जिसे वैदिक साहित्य में कृशन कहा गया है, सबसे पहला उल्लेख ऋग्वेद (१।३५।४,१० ।६८।१) में आता है। अथर्ववेद मे वायु, आकाश, बिजलो, प्रकाश तथा सुवर्ण, शख और मोती से रक्षा की प्रार्थना की गयी है। शंख और मोती राक्षसो, राक्षसियो और बीमारियो से रक्षा करने वाले माने जाते थे। उनकी उत्पत्ति आकाश, समुद्र, सोना तथा वृत्र से मानी गयी है।

रत्नशास्त्रों के अनुसार मोतो के आठ स्रोत—यथा सीप्र, शख, बादल, मकर और सर्प का सिर, सूअर की दाढ़, हाथी का कुम्भस्थल तथा बांस की पोर माने गये है। यह विश्वास भी था कि स्वाती की बूदें सीपियो मे पड़ कर मोती हो जाती थी। असुरबल के दांतो से भी मोती बनने का उल्लेख आता है।

मोती के उत्पत्ति सम्वन्धी उपर्युक्त विश्वासो की जांच पड़ताल से पता चलता है कि अथर्ववेद वाली अनुश्रुति से उनका खासा सम्बन्ध है। उसके वृत्र-जात मानने से असुरबल वाली अनुश्रुति की ओर ध्यान जाता है; इस तरह हम देख सकते है कि मोती सम्बन्धी प्राचीन विश्वासो की जड़ वैदिक युग तक पहुंच जाती है।

ठक्कुर फेरू ने भी मोती के उत्पत्तिस्थान, रत्नशास्त्रों की ही तरह कहे है। उसके अनुसार शंखजन्य मोती छोटे, सफेद तथा लाल होते है और उनमे मंगल का आवास होता है। मच्छ से उत्पन्न मोती काला, गोल तथा हलका होता है और उसके पहनने से शत्रु और भूत प्रेतों से रक्षा होती है। बांस में पैदा मोती गुंजे के इतने बड़े तथा राज देने वाले होते है। सूअर की दाढ़ से पैदा मोती गोल चिकना तथा साखू के फल इतना बड़ा होता है। उसको पहनने वाला अजेय हो जाता है। सांप से निकला मोती नीला तथा इलायची इतना बड़ा होता है। उसके पहनने से सर्पोपद्रव, विष ,तथा बिजली स रक्षा होती है।

बादल में पैदा मोती तो देवता लोग पृथ्वी पर आने ही नही देते, गिरने के पहिले ही उन्हें रोक लेते है। चिन्तामणि मोती वह है जो बरसने पानी की एक बूद हवा से सूख कर मोती हो जाय। सीप के मोती छोटे और मूल्यवान होते हैं।

रत्नशास्त्रों में मोती के आकरो की सख्या भिन्न भिन्न दी हुई है। एक अनुश्रुति के अनुसार आठ आकर है तो दूसरी के अनुसार चार। अर्थशास्त्र (२।११। २९) के अनुसार ताम्रपर्णी से निकलने वाले मोती ताम्रपर्णिक, पाड्यकवाट से पाड्यकवाटक, पाश से पाशिक्य, कूल से कौलेय, चूर्ण से चौर्ण, महेन्द्र से माहेन्द्र कार्दम से कार्दमिक, स्रोतसि से स्रोतसीय, ह्रद से ह्रदीय और हिमवन् से हैमवतीय।

उपर्युक्त तालिका में ताम्रपर्णिक और पाड्यकवाटक तो निश्चय मनार की खाडी के मोती के द्योतक है। ताम्रपर्ण से यहा ताम्रपर्णी नदी का तात्पर्य माना गया है। पाड्यकवाट मदुरै है जहा मोती का व्यापार खूब चलता था। पाश से शायद फारस का मतलब है। चूर्ण को टीकाकार ने केरल में मुचिरि के पास एक गाव माना है। यह गाव शायद तामिल साहित्य का मुचिरि और पेरिप्लस (शाफ, वहि, पृ० २०५) का मुजिरिस था जिसकी पहचान क्रेगनोर में मुयिरिकोट्ट से की जाती है। मुजरिस ईसा की आरम्भिक सदियों में एक बडा बदर था और बहुत सम्भव है कि कि यहा मोती आने से किसी नदी के नाम के आधार पर मोती का चौर्णेय नाम पड गया हो। टीका के अनुसार कौलेय मोती का नाम सिहल की किसी कूल नदी के नाम पर पडा, पर विचार करने से यह बात ठीक नही मालूम पडती। कूल से पेरिप्लस (५९) के कोल्चि तथा शिलप्पदिकारम् (पृ २०२) के कोरकै से बोध होता है जो मोतियों के लिये प्रसिद्ध था। पेरिप्लस के समय में वह पाड्य देश का एक प्रसिद्ध बदरगाह था। पर ताम्रलिती नदी द्वारा बदर

के भर जाने पर बंदरगाह वहाँ से पाँच मील दूर हटकर कायल में पहुँच गया। माहेन्द्रक, कार्दमक, ह्रादीय स्रोतसीय का ठीक पता नहीं चलता। टीकाकार के अनुसार कार्दम ईरान और स्रोतसी बर्बर देश में नदियां और ह्रद बर्बर देश में दह था। इन संकेतों में जो भी तथ्य हो पर यहाँ टीकाकार का फारस की खाडी और बर्बर देश से मोती आने की ओर संकेत अवश्य है।

हिमालय तो सब रत्नों का घर माना ही जाता था। वराहमिहिर ८१।२ के अनुसार सिंहल, परलोक, सुराष्ट्र, ताम्रपर्णी, पार्श्ववास, कौकेरवाट, पांड्यवाट और हिमालय में मोती होते थे।

सिंहल—मनार की खाड़ी मोती के लिये प्रसिद्ध है। यह खाड़ी ६५ से १५० मील चौड़ी हिन्दमहासागर की एक बाहु है। मोती के सीप सिंहल के उत्तर पश्चिमी तट से सट कर तथा तूतीकोरिन के आसपास मिलते हैं। मोतियों के इस स्रोत का उल्लेख प्लिनी (६।५४-८), पेरिप्लस (३५,३६,५६,५६), मार्कोपोलो (दि बुक आफ सेर मार्कोपोलो, भा० २, पृ० २६७, २६८) फ्रायर जार्डेनस (मीराविलिया डिसक्रिप्टा, हक्लूयेत सोसाइटी, १८६३, पृष्ठ ६३) लिनशोटेन (दि वोयज आफ लिनशोटेन, हक्लूयेत सोसाइटी, १८८४, भा० २ पृ० १३३-१३५) इत्यादि करते हैं।

परलोक—इसी को शायद ठक्कुर फेरू ने रामावलोक कहा है। इस प्रदेश का ठीक-ठीक पता नहीं चलता पर यह ध्यान देने योग्य बात है कि मध्यकाल में अरब भौगोलिक पेगू को ब्रह्मादेश कहते हैं। बरमा के समुद्रतट से कुछ दूर मेगुई द्वीप समूह के समुद्र में अब भी मोती

मिलते हैं। रामा से पेगू की पहिचान की जा सकती है। यहाँ सलग लोग मोती निकालते हैं। सुराष्ट्र कछ के रनके दखिन में, नवानगर के समुद्र तट के आगे जोधाबदर के पास, मगरा से कछ की खाडी में पिंडेरा तक आजाद, चोक, कलुवार और नीरा के द्वीपों के आसपास भी मोती मिलते हैं (सी० एफ० कुज और सी० एच० स्टिवेन्सन, दि बुक आफ पर्ल, पृ० १३२, लंडन १९०८)।

ताम्रपर्णी—जैसा हम ऊपर कह आए हैं यहाँ ताम्रपर्णी से मनार की खाडी से मतलब है। ताम्रपर्णी नदी के मुहाने पर पहले कोरके बन्दरगाह पर, बाद में उसके मरजाने से उसके दखिखन पाँच मील पर, कायल बन्दरगाह हो गया।

पाड्यवाट—इससे शायद मथुरे का मतलब है जहाँ मोती का खूब व्यापार चलता था। शिलप्पदिकारम् (पृ० २०७) के अनुसार यहाँ के जौहरी बाजार में चन्द्रागुरु, अगारक और सणिमुत्तु किस्म के मोती बिकते थे।

कौवेरवाट—इसका ठीक पता तो नहीं चलता पर सम्भव है कि यहाँ चोलों की सुप्रसिद्ध राजधानी कावेरीपट्टीनम् अथवा पुहार से मतलब हो। शिलप्पदिकारम् (पृ० ११०-१११) के अनुसार यहाँ मोतीसाज रहते थे और वे ऐब मोती बिकते थे।

पारशववास—इससे फारस की खाड़ी से मतलब है। यहाँ मोती बहुत प्राचीन काल से मिलते हैं। इसका उल्लेख मेगास्थनीज, चेरक्स के इसिडोर, नियर्कस, तथा टाल्मी ने किया है। टाल्मी के अनुसार मोती के सीप टाइलोस द्वीप में (आधुनिक बहरैन) मिलते थे। पेरिप्लस

(३५) के अनुसार कलैई (मश्कत के उत्तर पश्चिम दैमानियत द्वीप समूह में कल्हातो) में मोती के सीप मिलते थे। नवीं सदी में मासूदी ने उसका वर्णन किया है। पारी रेनो, 'मेमायर सुर लें द' १८५६। इब्नबतूता (गिब्स, इब्नबतूता) ने इसका उल्लेख किया है। बार्थेमा ने (दि ट्रावेल्स आफ लोदीविको बार्थिमा, पृ० ९५, लंडन, १८६३) हुर्मुज की यात्रा में फारस की खाड़ी के मोतियों का वर्णन किया है। लिन्शोटन और तावर्निये ने भी हुरमुज, बसरा और बहरैन के मोती के व्यापार का आँखों देखा वर्णन दिया है।

अगस्तिमत (१०९-१११) और मानसोल्लास (१, ४३४) के अनुसार सिंहल, आरवाटी बर्बर और पारसीक से मोती आते थे। सिंहल और फारस का तो हम वर्णन कर चुके हैं। आरवाटी से यहाँ अरब के दक्खिन—पूर्वी तट और बर्बर से लाल सागर से मिलनेवाले मोती के सीपों से तात्पर्य मालूम पड़ता है। अरब में अदन से मश्कत तक के बंदरों में मोती के गोताखोर मिलते हैं जो अपना व्यापार सोकोतरा के द्वीपों पूर्वी अफ्रीका और जंजीबार तक चलाते हैं। लाल सागर में अकाबा की खाड़ी से बाबेल मंदेब तक मोती के सीप मिलते हैं (कुंज, वही, पृ० १४२)।

ठक्कुर फेरू के अनुसार (४९) मोती रामावलोइ, बब्बर, सिंहल कांतार, पारस, कैसिय और समुद्रतट से आते थे। उपर्युक्त तालिका कुछ अंश में रत्न शास्त्रों की तालिकाओं से भिन्न है। रामावलोइ से जैसा हम पहले कह आए हैं, शायद मेरगुई के द्वीप समूह से अथवा पेगू से मतलब हो। बब्बर से लाल सागर के अफ्रीकी तटसे मतलब है।

यहाँ बर्बर लोगों से तात्पर्य नील नदी और लाल सागर के बीच रहने-वाले दनाकिल तथा सोमाल और गल्लों से है। कान्तार से यहाँ रेगिस्तान से अभिप्राय है। महानिद्देस (ला पूसां द्वारा सम्पादित पृ० १५४-५५) में मरु कान्तार किसी प्रदेश का नाम है जो शायद वेरेनिके से सिकंदरिया तक के मार्ग का द्योतक था। यह भी संभव है कि ठक्कुर फेरू का मतलब यहां कांतार से अरब के दक्खिन पूर्वी समुद्र तट से हो जहां के मोतियों के बारे में हम ऊपर कह आए हैं। अगर हमारा अनुमान ठीक है तो यहां कांतार से अगस्तिमत के आनाटी और मानसोल्लास के आवाट से मतलब है। कैसिय से यहां निश्चय इब्नबतूता (गिब्ब, इब्नबतूता पृ० १२१, पृ० ३५३) के बंदर कैस से मतलब है जिसे उसने भूल से सीराफ के साथ में मिला दिया है। (वास्तव में यह बंदर सीराफ से ७० मील दक्खिन में है। सीराफ (आधुनिक तहीरी के पास) पतन के बाद, १३ वीं सदी में उनका सारा व्यापार कैस चला आया। करीब १३०० के कैस का व्यापार हुरमुज उठ आया। कैस के गोताखोरों द्वारा मोती निकालने का आखों देखा वर्णन इब्नबतूता ने किया है। जैसे, बाद में चल कर और आज तक बसरा के मोती प्रसिद्ध हैं उसी तरह शायद चौदहवीं सदी में कैस के मोती प्रसिद्ध थे।

इब्नबतूता के शब्दों में—'हम खुञ्जनाल से कैस शहर को गए। जिसे सीराफ भी कहते हैं। सीराफ के लोग भले घर के और ईरानी नस्ल के हैं। उसमें एक अरब कबीला मोतियों के लिए गोताखोरी का काम करता था। मोती के सीप सीराफ और बहरैन के बीच नदी की

तरह शांत समुद्र में होते हैं। अप्रेल और मई के महीनों में यहां फार्स, वहरेन और कतीफ के व्यापारियों और गोताखोरों से लदी नावें आती है।'

बुद्धभट्ट ने केवल सफेद मोतियों का वर्णन किया है। अगस्तिमत के अनुसार मोती महुअई (मधुर) पीले और सफेद होते हैं। मानसोल्लास में नीले मोती का भी उल्लेख है ; तथा रत्नसंग्रह में लाल मोती का। ठक्कुर फेरू ने भी प्रायः मोती के इन्हीं रंगो का वर्णन किया है।

रत्नशास्त्रों के अनुसार गोल, सफेद, निर्मल, स्वच्छ, स्निग्ध, और भारी मोती अच्छे होते हैं। अच्छे मोती के बारे में ठक्कुर फेरू (५१) का भी यही मत है।

रत्नशास्त्रों के अनुसार मोती के आकार दोष—अर्धरूप, तिकोनापन, कृशपार्श्व और त्रिवृत्त (तीनगांठ) ; वनावट के दोष—शुक्तिपार्श्व (सीप से लगाव) मत्स्याक्ष (मछली के आँख का दाग), विस्फोटपूर्ण (चिटक), वलुआहट (पंकपूर्ण शर्कर), रूखापन ; तथा रंग के दोष—पीलापन, गदलापन, कांस्यवर्ण, ताम्राभ और जठर माने गए हैं। मोती के प्रायः यही दोष ठक्कुर फेरू ने भी गिनाए हैं। इन दोषों से मोती का मूल्य काफी घट जाता था।

हम हीरे के प्रकरण में देख आए हैं कि ठक्कुर फेरू ने मोतियों के तोल और दाम का क्या हिसाव रखा था। प्राचीन रत्नशास्त्रों में इस सम्बन्ध में दो मत मिलते हैं—एक तो बुद्धभट्ट और वराहमिहिर का और दूसरा अगस्ति का। पहले सिद्धान्त में गुंजा अथवा कृष्णल की

तौल है। माप पाच गुजों के बराबर होता था और शाण चार माप के। दाम रूपक अथवा कार्षापण में लगाया गया है। सबसे बडी तौल एक शाण मान ली गई है और कीमत ५३०० रूपक। तौल में हर एक माप बढ़ने पर दाम दुगुना हो जाता था। दूसरे सिद्धान्त में तौल गुजा, मजली और कलज में निधारित है। एक कलज चालीस गुजों के अथवा चौबीस मजली के बराबर माना गया है। गुजा की तौल करीब आधा केरेट तथा कलज करीब साढ़े बाईस केरेट के है। मोती की भारी से भारी तौल दो कलज मानकर उनकी कीमत ११७११७३ (?) मानी गई है। तौल पर दाम किस आधार पर बढता था, इसका विवरण ठीक तरह से समझ में नहीं आता।

सब रत्नशास्त्रों के अनुसार सिंहल में नकली मोती पारे के मेल से बनते थे। नकली मोती जाचने के लिए मोती, पानी तेल और नमक के घोल में एक रात रख दिया जाता था। दूसरे दिन उसे एक सफेद कपडे में धान की भूसी के साथ रगडते थे। ऐसा करने से नकली मोती का रग उतर जाता था पर असली मोती और भी चमकने लगता था।

मानिक—अनुश्रुति के अनुसार पद्मराग की उत्पत्ति असुरबल के रक्त से हुई। मानिक के नामों में पद्मराग, सौगधिक, कुरुविंद, माणिक्य, नीलगधि और मासखड मुख्य हैं। बुद्धभट्ट के कुरुविंदज, सुगधिकोत्थ, स्फटिक प्रसूत तथा वराहमिहिर के कुरुविंदभव, सौगधिभव तथा स्फटिक का शाब्दिक अर्थ जैसे गधक उत्पन्न, ईंगुर से उत्पन्न, स्फटिक से उत्पन्न लिया जाय अथवा नहीं इसमें सन्देह है। यह नहीं कहा जा सकता कि रत्नपरीक्षाकार को जिससे दोनों शास्त्रकारों ने

मसाला लिया है गन्धक, ईंगुर और स्फटिक से मानिक की उत्पत्ति के किसी रासायनिक प्रक्रिया का ज्ञान था अथवा नहीं।

प्रायः सब शास्त्रों के अनुसार सबसे अच्छा मानिक लंका में रावण-गंगा नदी के किनारे मिलता था। कुछ हलके दर्जे के मानिक कलपुर, अंध्र तथा तुंबर में मिलते थे (बुद्धभट्ट, ११४ वराहमिहिर ८२।१ ; मानसोल्लास, १।४७३—७४) ठक्कुर फेरू (५५) के अनुसार मानिक सिंहल में रामागंगा नदी के तट पर, कलशपुर और तुंबर देश में मिलते थे।

रावणगंगा—ठक्कुर फेरू की रामागंगा शायद रावणगंगा ही है। यहां हम पाठकों का ध्यान इब्नबतूता की सिंहल यात्रा की ओर दिलाना चाहते हैं। अपनी यात्रा में वह कुनकार पहुँचा जहां मानिक मिलते थे (गिब्स, इब्नबतूता, पृ० २५६-५७) वह नगर एक नदी पर स्थित था जो दो पहाड़ों के बीच बहती थी। इब्नबतूता के अनुसार (मौलवी मुहम्मदहुसेन, शेख इब्नबतूता का सफरनामा। पृ० ३३८-३६ लाहोर १८६८) इस शहर में ब्राह्मण किस्म के मानिक मिलते थे। उनमें से कुछ तो नदी से निकलते थे और कुछ जमीन खोदकर। इब्नबतूता के वर्णन से यह भी पता चलता है कि याकूत शब्द का व्यवहार माणिक और नीलम तथा दूसरे रंगीन रत्नों के लिये भी होता था। सौ फनम से ऊंची मालियत के पत्थर राजा स्वयं रख लेता था। मार्कोपोलो (यूल, दि बुक आफ सर मार्कोपोलो, २, १५४) ने भी सिंहल के मानिक और दूसरे कीमती पत्थरों का उल्लेख किया है। तावर्निये (ट्रावेल्स, भा० २, पृ० १०१—१०२) के अनुसार भी मध्यसिंहल के पहाड़ी

इलाके की एक नदी से मानिक और दूसरे रत्न मिलते थे। बरसात में यह नदी बहुत बढ़ जाती थी। पानी कम हो जाने पर लोग इसमें मानिक इत्यादि की खोज करते थे।

उपर्युक्त उद्धरणों से रावणगंगा अथवा रामागंगा की वास्तविकता सिद्ध हो जाती है। सर ए० टेनेंट के अनुसार इब्नबतूता का कुनकार या कनकार गमोला या जिसका दूसरा नाम गंगाश्रीपुर या गगेली था। पर गिब्स के अनुसार कुनकार की पहचान कोर्नेगल्ले (कुरुनगल) से की जा सकती है जो इब्नबतूता के समय सिंहल के राजाओं की राजधानी थी। (गिब्स, इब्नबतूता, पृ० ३६५ नोट ६)

क (का) लपुर—कलशपुर—प्राचीन रत्नशास्त्रों में मानिक का एक प्राप्तिस्थान कलपुर दिया है। यह पाठ ठीक है अथवा नहीं यह तो कहना संभव नहीं, पर खोटे मानिक का वर्णन करते हुए बुद्धभट्ट (१२९—१३१) ने कलशपुर का उल्लेख किया है। अगर कलपुर (मानसोल्लास-कालपुर) पाठ ठीक है तो शायद उसका मिलान तामिल काव्य पट्टिन्नप्पाले के कालगम् से किया जा सकता है जिसे श्री नीलकंठशास्त्री कडारम् अथवा आधुनिक केदा मानते हैं (नीलकंठशास्त्री, हिस्ट्री आफ श्रीविजय, पृ० २६, मद्रास १९४६) पर केदा में मानिक कैसे पहुँचे यह प्रश्न विचारणीय है। संभव है कि स्याम और बर्मा के मानिक यहाँ बिकने के लिये पहुँचते हो और बाजार के नाम से ही उत्पत्तिस्थल का नाम पड़ गया हो। कलशपुर की पहचान लिगोर के इस्थमस पर स्थित कर्मरंग से भी लेवी ने की है (वही, पृ० ८१)।

अगर यह पहचान ठीक है तो कलशपुर में शायद मानिक का व्यापार होता रहा होगा।

अंध्र—आंध्रदेश में मानिक मिलने का और दूसरा उल्लेख नहीं मिलता।

तुंबर—मार्कंडेय पुराण (पार्जिटर का अनुवाद, पृ० ३४३) के तुंबर, जैसा श्री पार्जिटर का अनुमान है, शायद विंध्यपाद पर रहनेवाली एक जंगली जाति के लोग थे पर तुंबर देश की स्थिति का ठीक पता नहीं चलता। विंध्य में मानिक मिलने का भी पता नहीं है।

रत्नशास्त्रों में मानिक के वहुत से रंग कहे गए हैं जिनमें चटकीला (पद्मराग) पीतरक्त (कुरुविन्द) और नीलरक्त (सौगंधिक) मुख्य है। प्राचीन रत्नशास्त्रों के अनुसार सब तरह के मानिक एक ही खान में मिलते थे। बुद्धभट्ट के अनुसार सिंहल की नदी रावणगंगा में चार रंग के मानिक मिलते थे पर मानसोल्लास (४७५-४७६) के अनुसार सिंहल का पद्मराग लाल, कालपुर का कुरुविन्द पीला, आंध्र का सौगंधिक अशोक के पल्लव के रंग का, तथा तुंबर का नीलगंधि नीले रङ्ग का होता था। पर खानों के अनुसार मानिक का रङ्गों के अनुसार वर्गीकरण कोरी कल्पना जान पड़ती है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (४७,५२) के अनुसार तो मानिक के वर्ण भी निश्चित कर दिये गए हैं। उस ग्रन्थ में पद्मराग ब्राह्मण, कुरुविंद क्षत्रिय, श्यामगंधि वैश्य और मांसखंड शूद्र माना गया है। ब्राह्मण वर्ण का मानिक सफेद और लाल मिश्रित, क्षत्रिय गहरा लाल, वैश्य पीला मिश्रित लाल और शूद्र काला मिश्रित लाल रङ्ग का होता था। यहाँ यह बात जानने लायक है कि यह विश्वास केवल

नीलम का दाम मानिक की तरह लगाया जाता था। ठक्कुर फेरू के समय में नीलम के दाम के बारे में हम ऊपर कह आए हैं।

पन्ना—(मरकत, तार्क्ष्य) की उत्पत्ति असुर बल के उस पित्त से मानी गई है जिसे गरुड़ ने पृथ्वी पर गिराया। प्राचीन रत्नशास्त्रों में पन्ने की खानों का वर्णन अस्पष्ट है। बुद्धभट्ट (१५०) के अनुसार जब गरुड़ ने असुर बल का पित्त गिराया तो वह बर्बरालय छोड़कर, रेगिस्तान के समीप, समुद्र के किनारे के पास एक पर्वत पर गिरकर मरकत बना गया। यह भी कहा गया है (१४६) की वहाँ तुरुष्क के के वृक्ष होते थे। अगस्तिमत (२८७) के अनुसार वह सुप्रसिद्ध पर्वत समुद्र के किनारे के पास तुरुष्कों के देश में स्थित था। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (७५) के अनुसार पन्ने की दो खानें थीं एक तुरुष्क देश में और दूसरी मगध में। ठक्कुर फेरू ने (७३) मरकत के उत्पत्ति स्थान बबलिंद, मलयाचल, बर्बर देश और उदधितीर माने हैं।

मरकत के उपर्युक्त आकर की जाच पड़ताल से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि प्राय सब शास्त्रकार पन्ने की खान बर्बर देश के रेगिस्तान में, समुद्र तीर के निकट, मानते हैं। टालमी युग से लेकर मध्यकाल तक प्राय' सब विवरण मिस्र में विशेप कर लाल सागर के पास स्थित 'जर्बर' पर्वत की पन्ने की खान का उल्लेख करते हैं। इस खान का उल्लेख प्लिनी, कोसमास इंडिको प्लॉयस्टस (करीब ५४५ ई०) मासूदी और नवीं सदी दूसरे अरब यात्री करते हैं। अल इद्रिसी के अनुसार मध्य नील पर अस्वान से कुछ दूर एक पर्वत के पाद पर पन्ने की खान है। यह खान शहर से बहुत दूर एक रेगिस्तान में है। इस पन्ने की खान

की, दुनिया की और कोई दूसरी खान मुकाबला नहीं कर सकती। अपने फायदे और निर्यात के लिए यहाँ काफी आदमी काम करते हैं (पी० ए० जोबर्त्त, अल इद्रिसी, १, पृ० ३६), यहाँ यह भी उल्लेखनीय बात है कि अस्वान से एक महीने की राह पर मरकता नामक एक शहर था जहाँ हब्श के लाल सागरवाले किनारे पर स्थित जलेग के व्यापारी रहते थे। यह संभव हो सकता है कि संस्कृत मरकत का नाम शायद इसी शहर से पडा हो पर संस्कृत मरकत की व्युत्पत्ति यूनानी स्मरग्दोस से की जाती है। यह यूनानी शब्द असीरी बर्क्कू, हिब्रू बारिकेत या बारकत, शामी बोर्को का रूपान्तर है। अरबी ज़ुम्मुरुद शायद यूनानी से निकला हो (लाउफर, साइनो इरानिका, पृ० ५१६) लिक्शोटेन (२, ५, १४०) के अनुसार भी भारत में बहुत कम पन्ने मिलते थे। यहाँ पन्ने की काफी मांग थी और वे मिस्र के काहिरा से आते थे।

अवलिंद—इस देश का नाम और कहीं नहीं मिलता। पर यहाँ हम पेरिप्लस (७) के अवलितेस की ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं जिसकी पहचान बावेल मंदेव के जल विभाजक से ७९ मील दूर जैला से की जाती है। खाडी के उत्तर में अवलित गाँव में प्राचीन अवलितेस का रूप बच गया है। बहुत सम्भव है कि अवलिंद भी इसी अवलितेस—अवलित का रूप हो। यहाँ पन्ना तो नहीं मिलता पर सम्भव है कि जैला के व्यापारी मिस्री पन्ना इस देश में लाते रहे हों और उसी आधार पर अवलिंद—अवलित पन्ने का एक स्रोत मान लिया गया हो।

मलयाचल—यह दक्षिण भारत का मलयाचल तो हो नहीं सकता।

शायद ठक्कुर फेरू का उद्देश्य यहाँ गेनेल जर्बर से, हो जहाँ बुद्धभट्ट के अनुसार तुरुष्क यानी गुगुल होता था। बर्बर और उदधि वीर का संकेत भी लाल सागर की ओर इशारा करता है।

मगध—अगस्तीय रत्नपीक्षा में, मगध में भी पन्ने की खान मानी गई है। मालेट (रेकार्डस् आफ दि जियालोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया भा० ७ पृ० ४३) के अनुसार बिहार के हजारीबाग जिले में पन्ने की एक खान थी।

रत्नशास्त्रों में पन्ने की चार से आठ छाया मानी गई है। अगस्ति-मत के अनुसार महामरकत में अपने पास की वस्तुओं को रंगीन कर देने की शक्ति होती थी। मरकत सहज और श्यामलिक रंग के होते थे। सहज का रंग सेवार जैसा और दूसरे का शुकपंख, शिरीष पुष्प और तूतीया जैसा होता था।

रत्नशास्त्रों में पन्ने के पांच गुण यथा—स्वच्छ, गुरु, सुवर्ण स्निग्ध और अरजस्क (धूलिरहित) है। ठक्कुर फेरू के अनुसार (७६) अच्छी छाया, सुलक्षणता, अनेकरूपता, लघुता, और वर्णाढ्यता पन्ने के पांच गुण हैं।

रत्नशास्त्रों के अनुसार शबलता, जठरता (कांतिहीनता) मलिनता, रूक्षता, सपाषाणता, कर्करता और विस्फोट पन्ने के दोष हैं। ये ही दोष ठक्कुर फेरू ने गिनाए हैं। केवल शबलता की जगह सरजस्कता आ गई है।

बुद्धभट्ट के अनुसार नकली पन्ना शीशा, पुत्रिका और भल्लातक से बनता था। इसके बनाने में मजीठ, नील और ईंगुर भी उपयोग में लाए जाते थे।

उपरत्न

रत्नशास्त्रों में उपरत्नों का वडी सरसरी तौर पर उल्लेख हुआ है। पांच महारत्नों के विपरीत ठक्कुर फेरू ने विद्रुम, मूंगा, लहसनिया, वैडूर्य, स्फटिक, पुखराज, कर्केतन और भीष्म का उल्लेख किया है।

विद्रुम—अर्थशास्त्र (अंग्रेजी अनुवाद, पृ० ७६) के अनुसार मूंगा आलकंद और विवर्ण से आता था। यहाँ आलकन्द से मिस्र के सिकंदरिया के वन्दरगाह से मतलब है। टीका के अनुसार विवर्णसे यवन द्वीप के पास का समुद्र है। अगर यह ठीक है तो यहाँ विवर्णसे भूमध्य सागर से तात्पर्य होना चाहिये। बुद्धभट्ट (२४६-२५२) के अनुसार मूंगा शकंवल, सम्लासक, देवक और रामक से आते थे। यहाँ रामक से शायद रोम का मतलब हो सकता है। अगस्तिमत के एक क्षेपक (१०) में कहा गया है कि हेमकन्द पर्वत की एक खारी झील में मूंगा पाया जाता था। ठक्कुर फेरू के अनुसार (६०) मूंगा कावेर, विन्ध्याचल, चीन, महाचीन, समुद्र और नैपाल में पैदा होता था।

पेरिप्लस (२८, ३६, ४६, ५६) के अनुसार भूमध्य सागर का लाल मूंगा वारवारिकम, वेरिगाजा (भरुकच्छ) और मुजिरिस के बन्दरगाहों में आता था। प्लिनी (३२।११) के अनुसार मूंगे का भारत में अच्छा दाम था। आज की तरह उस समय भी मूंगा सिसली, कोर्सिका और सार्डीनिया, नेपल्स के पास लेगहार्न और जेनेवा, कारालोनिया, वलेरिक द्वीप तथा ट्यूनिस अलजीरिया और मोरक्को के समुद्रतट पर मिलता था। लाल सागर और अरव के समुद्रतट के मूंगे काले होते थे।

अगस्तिमत के हैलकन्द पर्वत के पास एक खारी झील में मूगा मिलने के उल्लेख से भी शायद लाल सागर अथवा फारस की खाड़ी के मूगों से मतलब हो सकता है। श्री लाउफर के अनुसार (साइनो इरानिका, पृ० ५२४–२५) चीनी ग्रन्थों में इरान में मूगा पैदा होने के उल्लेख हैं। सुङ्गुन के अनुसार मूँगा फारस, सिंहल और चीन के दक्षिण समुद्र से आता था। ताग इतिवृत्त से पता चलता है कि फारस की प्रवाल शिलाएं तीन फुट से ऊंची नहीं होती थीं। इसमें सन्देह नहीं कि फारस के मूगे एशिया में सब जगह पहुँचते थे। काश्मीर के मूगे का वर्णन जो एक चीनी इतिहासकार ने किया है, वह फारसी मूङ्गा ही रहा होगा। मार्कोपोलो (भा० २, पृ० ३२) के अनुसार तिब्बत में मूगे की बड़ी माँग थी और उसका काफी दाम होता था मूगे स्त्रियाँ गले में पहनती थीं अथवा मूर्तियों में जड़े जाते थे। काश्मीर में मूगे इटली से पहुँचते थे और वहाँ उनकी काफी खपत थी (मार्कोपोलो, १, पृ० १५६)। तावर्नियें (भा० २, पृ० १३६) के अनुसार आसाम और भूटान में मूगे की काफी माग थी।

कावेर—यहाँ दक्षिण के कावेरी पट्टीनम् के बन्दरगाह से मतलब हो सकता है। शायद यहाँ मूगा बाहर से उतरता हो। विंध्याचल में मूगा मिलना कोरी कल्पना मालूम पड़ती है।

चीन, महाचीन—लगता है चीन और महाचीन से यहाँ क्रमश चीन देश और कैंटन से मतलब हो। सम्भव है चीनी व्यापारी इस देश में बाहर से मूगा लाते हों।

समुद्र—इससे भूमध्य सागर, फारस की खाड़ी और लाल सागर के मूगों से मतलब मालूम पड़ता है।

नेपाल—जैसा हम ऊपर देख आए हैं तिब्बत और काश्मीर की तरह नेपाल में भी मूंगे की बड़ी मांग थी। हो सकता है कि नेपाली व्यापारियों द्वारा मूंगा लाये जाने पर नेपाल उसका एक उत्पत्ति स्थान मान लिया गया हो।

लहसनिया—नीले, पीले, लाल और सफेद रंग की लहसनिया ठक्कुर फेरू (९२—९३) के अनुसार सिंहल द्वीप से आती थी। इसे बिडालाक्ष अथवा बिल्ली के आँख जैसी रंगवाली भी कहा गया है। उसमें सूत पड़ने से उसे कोई कोई पुलकित भी कहते थे।

वैडूर्य—सर्व श्री गार्वे, सौरीन्द्र मोहन ठाकुर और फिनो की राय है कि वैडूर्य का वर्णन लहसनिया से बहुत कुछ मिलता है। बुद्धभट्ट (२००) ने भी वैडूर्य को बिल्ली की आँख के शक्ल का कहा है।

पाणिनि ४।३।८४ के अनुसार वैदूर्य (वैडूर्य) का नाम स्थान वाचक है। पतंजलि के अनुसार बिदूर में य प्रत्यय लगाकर उसे स्थान वाचक मानना ठीक नहीं; क्योंकि वैदूर्य विदूर में नहीं होता, वह तो बालवाय में होता है और विदूर में कमाया जाता है। पर शायद बालवाय शब्द विदूर में परिणत हो गया हो और इसीलिये उसमें य प्रत्यय लग गया हो। इसके माने यह हुए कि विदूर शब्द बालवाय का एक दूसरा रूप है। इस पर एक मत है कि विदूर वालवाय नहीं हो सकता; दूसरा मत है कि जिस तरह व्यापारी वाराणसी को जित्वरी कहते थे उसी तरह वैय्याकरण बालवाय को विदूर।

उपर्युक्त कथन से यह बात साफ हो जाती है कि वैडूर्य बालवाय पर्वत में मिलता था और विदूर में कमाया और बेचा जाता था। यह

पर्वत दक्षिण भारत में था। बुद्धभट्ट (१६६) के अनुसार विदूर पर्वत दो राज्यों की सीमा पर स्थित था। पहला देश कोंग है जिसकी पहचान आधुनिक सेलम, कोयंबट्टूर, तिन्नेवेली और ट्रावन्कोर के कुछ भाग से की जाती है। दूसरे देश का नाम बालिक, चारिक या तोलक आता है, जिसे श्री फिनो चोलक मानते हैं जिसकी पहचान चोलमण्डल से की जा सकती है। इसी आधार पर श्री फिनो ने बालवाय की पहचान चीवरे पर्वत से की है। यह बात उल्लेखनीय है कि सेलम जिले में स्फटिक और कोरंड बहुतायत से मिलते हैं।

ठक्कुर फेरू (६४) का कुवियग कोंग का बिगडा रूप है। समुद्र का उल्लेख कोरी कल्पना है। ठक्कुर फेरू ने लहसनिया और वैडूर्य अलग अलग रत्न माने हैं। सम्भव है कि देशभेद से एक ही रत्न के दो नाम पड गये हों।

स्फटिक

प्राचीन रत्नशास्त्रों के अनुसार स्फटिक के दो भेद यानी सूर्यकांत और चन्द्रकांत माने गए हैं। ठक्कुर फेरू (६६) ने भी यही माना है पर अगस्तिमत के क्षेपक में स्फटिक के भेदों में जलकांत और हंसगर्भ भी माने गए हैं। पृथ्वीचन्द्र चरित्र (पृ० ६५) में भी जलकांत और हंस गर्भ का उल्लेख है। सूर्यकांत से आग, चन्द्रकांत से अमृतवर्षा, जलकांत से पानी निकलना तथा हंसगर्भ से विष का नाश माना जाता था।

बुद्धभट्ट के अनुसार स्फटिक कावेरी नदी, विंध्यपर्वत, यवन देश, चीन और नेपाल में होता था। मानसोल्लास के अनुसार ये स्थान लंका तासी नदी, विंध्याचल और हिमालय थे। ठक्कुर फेरू के अनुसार

नेपाल, कश्मीर, चीन, कावेरी नदी, जमुना और विंध्याचल से स्फटिक आता था।

पुखराज

पुखराज की उत्पत्ति असुर बल के चमड़े से मानी गई है। इसका दाम लहसनिया जैसा होता था। बुद्धभट्ट के अनुसार पुखराज हिमालय में, अगस्तिमत के अनुसार सिंहल और कलहस्थ (?) में तथा रत्नसंग्रह के अनुसार सिंहल और कर्क में होता था। ठक्कुर फेरू ने हिमालय को ही पुखराज का उद्गम स्थान माना है पर यह बात प्रसिद्ध है कि सिंहल अपने पीले पुखराज के लिये प्रसिद्ध है।

कर्कतन—कर्केतन के उत्पत्ति स्थान का किसी रत्नशास्त्र में उल्लेख नहीं है। पर ठक्कुर फेरू ने पवणुप्पट्ठान देश में इसकी उत्पत्ति कही है। यहाँ शायद दो जगहों से मतलब है पवण और उप्पट्ठान। पवण से संभव है शायद अफगानिस्तान में गजनी के पास पर्वान से मतलब हो और उप्पट्ठान से परि-अफगानिस्तान से। अगर हमारी पहचान ठीक है तो यहाँ पर्वान से शायद वहाँ कर्केतन के व्यापार से मतलब हो। उप्पट्ठान से रूस में उराल पर्वत में एकाटेरिन बर्ग और टाकोवाजा की कर्केतन की खानो से मतलब हो (जी० एफ०, हर्बर्ट स्मिथ, जेम स्टोन्स, पृ० २३६, लंडन १९२३)। यह भी संभव है कि उपपट्ठान में पट्टन शब्द छिपा हो। इब्नबतूता ने (२६३-६४) फट्टन को चोल मंडल का एक बड़ा बंदर माना है पर इस बंदर की ठीक पहचान नहीं हो सकती। संभव है कि इससे कावेरी पट्टीनम् अथवा नागपट्टीनम् का

बोध होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तावे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आया है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४५) गोमेद को स्वच्छ, गुरु, स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८३ ८६) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। उसका रंग धवल और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१००) ने इसका रंग गहरा लाल, सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरेवंग देस तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपटन के रास्ते में पुगल के आगे नगुलपाद पडता था जिसे तावर्निये ने नगेल-पर कहा है (तावर्निये, १, पृ० १७३) संभव है कि नायकुलपर यही स्थान हो। वंग देस से शायद बंगाल का बोध हो सकता है, बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद वहाँ जाता रहा हो।

पा र सी र त्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बंदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शां के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वंक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११६७-१२४८) ने किया है (फेरां, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्निये (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

मशद् से पाँच दिन के रास्ते पर थी। मुनाशीर से यहाँ ईराक के मोसुल या अलमौसिल से बोध होता है। लगता है फारसी फिरोजा यहाँ व्यापार के लिये आता था। आज दिन भी मोसुल में फिरोजे का व्यापार होता है।

लाल, लहसनिया, इन्द्रनील और फिरोजे का दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार तौल से सोने के टाकों में होता था। निम्नलिखित यत्र से यह बात साफ हो जाती है —

मासा	०॥	१	१॥	२	२॥	३	३॥	४
लाल	१	३॥	६	९	१५	२४	३४	५०
लहसनी	०॥।	१॥। —२॥	४॥	६॥।	११।	१८	२५॥	३७॥
इन्द्रनील	०।	०॥	०॥।	१	२	५	८	१५
पेरोजा	०।	०॥	०॥।	१	२	५	८	१५

उपर्युक्त यत्र के अध्ययन से पता चल जाता है कि लाल इत्यादि की कीमत दूसरे महारत्नों के मुकाबिले में काफी कम थी।

उपसंहार

प्राचीन रत्नशास्त्रों के आधार पर हमने ऊपर यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि रत्नशास्त्र प्राचीन भारत में एक विज्ञान माना जाता था। उस विज्ञान में बहुत सी बातें तो अनुश्रुति पर अवलंबित थी पर इसमें संदेह नहीं की समय समय पर रत्नशास्त्रों के लेखक अपने अनुभवों का भी संकलन कर देते थे। ठक्कुर फेरू ने भी अपनी 'रत्नपरीक्षा' में प्राचीन ग्रथों का सहारा लेते हुए भी चौदहवीं सदी के रत्न व्यवसाय पर काफी प्रकाश डाला है। ठक्कुर फेरू के ग्रन्थ की

महत्ता इसलिये और भी बढ़ जाती है कि रत्न सबन्धी इतनी बातें सुल्तान युग के किसी फारसी अथवा भारतीय ग्रन्थकार ने नहीं दी है। कुछ रत्नों के उत्पत्ति स्थान भी, ठक्कुर फेरू ने १४ वी सदी के रत्नों के आयात निर्यात देख कर निश्चित किए हैं। रत्नो की तौल और दाम भी उसने समयानुसार रखे हैं; प्राचीन शास्त्रों के आधार पर नहीं। पारसी रत्नों का विवरण तो ठक्कुर फेरू का अपना ही है; पद्मराग के प्राचीन भेद तो उसने गिनाये ही हैं पर चुन्नी नाम का भी उसने प्रयोग किया है जिसका व्यवहार आज दिन भी जौहरी करते हैं। उसी तरह घटिया काले मानिक के लिये देशी शब्द चिप्पड़िया का व्यवहार किया है। हीरे के लिए फार शब्द भी आजकल प्रचलित है। लगता है उस समय मालवा हीरे के व्यवसाय के लिये प्रसिद्ध था; क्योंकि ठक्कुर फेरू ने चोखे हीरे के लिये मालवी शब्द व्यवहार किया है। पन्ने के बारे में तो उसने बहुत सी नई बातें कही हैं। कुछ ऐसा लगता है कि ठक्कुर फेरू के समय में नई और पुरानी खान के पन्नो में भेद हो चुका था और इसीलिए उसने पन्नों के तत्कालीन प्रचलित नाम गरुडोद्गार, कीडउठी, वासवती, मूगउनी और धूलिमराई दिये हैं। इन सब बातों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ठक्कुर फेरू रत्नो के सच्चे पारखी थे। उन्होंने देख समझ कर ही रत्नों के वर्णन लिखे हैं केवल परंपरागत सिद्धांतो के आधार पर ही नही।

वह केवल इसीलिए कि जिन तत्व प्रभावों में शरीर निर्माण होता है, उनके अनुकूल प्रकृति की वस्तुएँ ही उपयोगिता दे सकती हैं, उसी प्रकार की शक्ति या प्रभाव रखने वाले रत्न भी उपयोगिता रखते हैं।

जिस प्रकार शरीर की नाडी की गति-विधि जानकर विकार-विज्ञान किया जा सकता है, उसी प्रकार सफल ज्योतिर्विज्ञानज्ञ भी ग्रहों की गति-विधि प्रभाव को जानकर चिकित्सा में सफलता प्राप्त कर सकता है। ग्रहों का बिगडना शरीर गत उससे प्रभावित धातु, या तत्व का विकार सूचित करता है, उसी के अनुसार उन विकृत-तत्वों पर प्रभावक, या पूरक रत्नों, या उपायों की योजना की जाए तो लाभ भी मिल सकता है। और आराम की मर्यादा भी ज्ञात हो सकती है, जीवन भर के लिए सर्वथा विकृत तत्वों के लिए प्रभावोत्पादक रत्नों, और उपचारों की भी योजना ज्ञात हो सकती है। अतएव जीवन में इस विज्ञान की कितनी आवश्यकता, एव उपयोगिता है, यह स्पष्ट ज्ञात होती है। किन्तु इस विज्ञान के गाम्भीर्यावगाहन की क्षमता प्रथम अपेक्षित है। यद्यपि खनिज पदार्थों में मूल्यवान् मणियों का स्थान, उनके रचना सौष्टव, प्राचीनता, और प्रभाव पर स्थिर किया जाता है। और वैज्ञानिक मान्यता है कि, जिस समय पृथ्वी कम अश में प्रवाही अवस्था में थी, तब ऑक्सिजन और पानी के साथ कुछ धातुएँ आक्साईड के ससर्ग में आकर रासायनिक-क्रिया से पत्थर में परिणत हो गई। परन्तु सुप्रसिद्ध विद्वान् 'प्लुटो' का कहना है कि—"कीमती पत्थर, और रत्नों का उद्गम 'ग्रहों' से है। और विशेष प्रकार के आन्दोलन से उन पर ग्रहों का प्रभाव पडता रहता है।" हीरा नीलम-वैडूर्य आदि रत्नों के प्रभाव के

विषय में अनेक भले-बुरे प्रभाव डालने वाली किम्वदन्तियाँ जगविश्रुत है। कोहिनूर की कहानियों से तो अनेक पृष्ठ भरे हुए हैं, जौहरी तक अनेक रत्नों के प्रभाव के विषय में सतर्क अपने ग्राहक को अनुभव के पश्चात् स्वीकार करने की अनुमति देते हैं, नीलम शनि का रत्न माना जाता है। शनि के नाम से वैसे ही अनेक भय-भावनाएँ भावुको में ही नहीं; समझदारों के वर्ग में भी विस्तृत है, फिर 'नीलम' तो शनि-प्रभाव का केन्द्रित-रूप माना जाता है, जिस रत्न-या-धातु में उनके प्रभाव का केन्द्रीकरण हो जाए, वह सावधानी—और संशय की वस्तु हो जाना स्वाभाविक भी है। शनि के इस रत्न का असर शरीर में अस्थि-क्षय, स्नायुक्षीणता, लीव्हर की खराबी, संग्रहणी आदि उत्पन्न करने की क्षमता रखता है। उग्र-ग्रहों के रत्नो का विषम प्रभाव यदि अनावश्यक, और प्रकृति-विपरीत धारण किए जाएँ तो सहज सम्भव हो जाता है। इनके प्रयोग भी जौहरी तक बहुत सावधानी से करने देते हैं, फिर ज्योतिर्विज्ञान-सम्मत प्रयोग तो विशेष परीक्षण के पश्चात् ही सम्भव हो सकता है। गगनगामी-ग्रहो के जिन तत्वों के प्रभाव से जो रत्न विशेष प्रभावित हैं, उनका प्रयोग उस ग्रह के तत्व के अभाव में उत्पन्न मानव पर सावधानी पूर्वक किया जाए तो, उस धातु, या तत्व को वह पोषित करता है, और उपयोगी प्रमाणित हो जाता है। उस कमजोरी, अथवा विकृति को शमन भी कर देता है। रत्नो का उपयोग केवल शरीर को सजाने, अलंकृत करने तक ही सीमित नहीं है। वह सर्वथा विज्ञान-संगत है, बशर्ते विचार पूर्वक प्रयुक्त हो। प्रायः रत्नों का पारस्परिक प्रभाव-नाशी-सामर्थ्य, या विकारोत्पादिनी-शक्ति के अज्ञान-

वश प्रयोग कर लिया जाता है, और शरीर पर वह घातक परिणाम भी करता ही रहता है। प्रभावशाली-माणिक्य के साथ यदि शुक्र का रत्न-हीरा जुड़ा रहे, तो क्षण-भर वह लाल रंग सफेदी के साथ नयनाकर्षन का विषय भले ही बन जाए, परन्तु परिणाम में वह 'क्षय' जैसे विकार को पनपाता रहता है, जो बाह्य-उपचारों की परम्परा के रहते हुए भी परिणाम-प्रद नहीं होने देता, इसी प्रकार पन्ने के साथ मोती, या नीलम के साथ माणक, या मोती पन्ना या पुखराज के संग लहसूनिया आदि परस्पर विरोधी प्रभावकारी रत्नों का संयोग विभिन्न-विकारों का जनक हो जाता है। उन पर कोई उपचार लाभ नहीं देते। बल्कि वे शरीर की तत्सम्बन्धित धातु, या तत्वों को यथाक्रम नष्ट करते ही जाते हैं। रत्नों को सरलता पूर्वक उपयोग कर सकने वाले परिवारों में ही, प्राय अज्ञान वश, विपरीत प्रयोग जन्य विकार,—यथा क्षय, अपचन, रक्तशोप, पॉइल्स, मधुमेह, हिस्टेरिया, मृगी, आदि पारिवारिक संगी बने हुए रहते हैं, यदि इनका स-विधान प्रयोग किया जाए तो उतने ही ये उपादेय हो सकते हैं, परन्तु प्रयोग के पूर्व इस बात की परीक्षा प्रथमावश्यक है कि कौनसा रत्न शुभ है, या अशुभ, किन दूषणों से वह उचित खदान का होकर भी दुष्परि-णामकारी हो सकता है, और किस प्रकृति प्रभाव में उत्पन्न होने के कारण किस प्रकार के जीवधारी के लिये वह उपादेय बन सकता है। रत्नों की भी जातियाँ हैं, वर्ण हैं, लक्षण हैं, और उसके लिए प्रभावकारी मर्यादा भी है, कितने वजन का रत्न किस प्रकृति प्रभावोत्पन्न व्यक्ति को लाभप्रद, उपकारक हो सकता है, और कितना न्यूनाधिक वजन,

तथा किस जाति, किस वर्ण-लक्षण-युक्त रत्न किस व्यक्ति के लिये हितावह वन सकता है। और किस रूप-रंग का विपरीत। यह जानकारी वैज्ञानिक-विश्लेपण पूर्ण प्राप्त होने पर ही, उसकी योजना और उपाय-विधान किये जाएँ तो सहायक सिद्ध हो सकते हैं। रत्नो की विविध जातियाॅ हैं, और विभिन्न-देशो में विभिन्न-प्रकृति भागों में उत्पन्न होने के कारण, उनके विविध प्रभाव भी। इसका परीक्षण, और संतुलन-सामंजस्य-साधना-सहज-बुद्धि-गम्य विषय नहीं। खदानों से प्रादुर्भूत मणि-रत्नों के अतिरिक्त कुछ और प्रकार से रत्नों के जन्म की प्रसिद्धियाॅ भी हैं, गज-मुक्ता, सर्प-मणि, मण्डूक-मस्तक-जन्य, मत्स्य-मणि आदि, इनके अतिरिक्त सूर्यकान्त, चन्द्रकान्त, पारस-मणि आदि की ख्यातियाँ भी विशिष्ट प्रकार की है, और विविध जन-श्रुतियाॅ भी हैं, सहस्रावधि प्रकारों के रहते हुए भी नव-रत्न, और उनके विविध भेदों के ८४ रत्नों को मर्यादा जगद्विख्यात है, जिस प्रकार समस्त आकाश में कोट्यावधि तारक-मण्डलों के रहते हुए भी प्रभाव विशेष वाले नव-ग्रहों, और नक्षत्रों की महत्ता मान्य कर ली गई है, उसी प्रकार नव-रत्नों की गणना विशिष्ट-कोटि में की जाती है, रत्नो की उत्पत्ति, जाति-वर्ण आदि गुण-दोषो के स्वतन्त्र ज्ञान-विज्ञान के लिये कोई ऐसा ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, तथापि पुराणों में, आयुर्वेद ग्रन्थो में, और ज्योतिप में इनका अपने-अपने दृष्टिकोण से उचित वर्णन हुआ है। वैज्ञानिक प्रयोग योजना भी सूचित की गई है। वृहत्संहिताकार आचार्यप्रवर वराहमिहिर ने वतलाया है कि—वल नामक राक्षस के शरीर से इन रत्नों की उत्पत्ति हुई है, कुछ लोग दधीची की अस्थि से भी रत्नों का जन्म वत-

लाते हैं, और पृथ्वी के स्वाभाविक धर्मप्रमान से भी पाषाणों में विचित्रता उत्पन्न हो जाती है—

रत्नानि वलाद्दैत्याद्देधिचितोन्ये वदन्ति जातानि,
केचित् भुव स्वाभावा द्वैचित्र्यं प्राहु रुपलानाम् ॥ —वरा०

इसी प्रकार अग्निपुराण में बतलाया है कि दधीची की अस्थि से जब अस्त्र निर्माण किया गया, तब जो सूक्ष्म-खण्ड जमीन पर गिरे उनसे चार खदाने हीरे की उत्पन्न हुई, इसी प्रकार कुछ पुराण मत यह है कि मन्दराचल द्वारा समुद्र मन्थन से जो अमृत उत्पन्न हुआ, उसके कण जो जमीन पर गिर गए, सूर्य-किरण द्वारा सूखकर वे यथा प्रकृति रज में मिश्रित होकर विविध वर्ण के रत्नों में रूपान्तरित हो गये। एक अन्य पुराणकार का मत है कि—एक वल नामक दैत्य था, उसने देवों को परास्त कर दिया, पर चतुराई से देवों ने उसे पशुरूप धारण करने के लिए प्रेरित किया, वह वचनबद्ध हो पशुत्व में परिवर्तित हो गया, तब देवों ने उसका वध कर दिया, उसके विभिन्न अवयवों से विविध रत्नों* की उत्पत्ति हुई। यह वर्णन रोचक और यहाँ उपयोगी होगा, इसलिये संक्षेप में दे देना उपयोगी होगा, उस पुराण में कहा गया है कि—उस

---

* "परीक्षां चित्ररत्नाना वलोनामासुरोभवत्।
इन्द्राद्या निर्जितास्तेन विजेतुकैनशक्यते ॥१॥
वर व्याजेन पशुता याचित स सुरैमखे।
तस्य सत्व विशुद्धस्य विशुद्धेन च कर्मणा ॥
कामस्यावयवा सर्वे रत्न बीजत्व माययु ॥४॥ —ग० पुराण

बल दैत्य की अस्थियाँ जिस जगह जाकर पड़ी, उस प्रदेश में इन्द्रधनुष को चकाचौंध देने वाले हीरे उत्पन्न हो गए—

तस्यास्थिलेशों निपपातयेषु भुवः प्रदेशेषु कथंचिदेव,
वज्राणि वज्रायुध निर्जिगीषोर्भवन्ति नानाकृति मन्तितेषु ।।

मोती की उत्पत्ति का कारण बतलाते हुए लिखा है—

"नक्षत्र मालेव दिवो विशीर्णादन्तावलि स्तस्य महासुरस्य,
विचित्र वर्णेषु विशुद्ध वर्णापयः सुपत्युः पयसांपपात।"

उस असुर की दन्तपंक्तियाँ जो आकाश तक फैल गई थी, समुद्रादि जगहों में पड़कर सीपियो में मुक्ता रूप बनगई, इनके सिवा—हाथी, बादल, सूअर, शंख, मछली, सर्प, सीप, और बाँस में भी वे मोती बन गई, परन्तु सीपी के मोती की विशेषता ही अधिक है—

द्विपेन्द्र जीमूत वराह शंख मत्स्यादि शुक्त्युद्भव वेणुजानि,
मुक्ताफलानि प्रथितानि लोके तेषां च शुक्त्युद्भव मेव भूरि।

आगे माणिक आदि के विषय में यथाक्रम इस प्रकार उत्पत्ति का स्वरूप बतलाया है—

पद्मराग-माणिक्य

सूर्य के किरणों से शोषित होकर उक्त राक्षस का रक्त आकाशगामी हो रहा था कि, रावण ने राह में रोककर उन्हें सिंहलद्वीप की एक नदी में-जिसके तट पर सुपारी के पेड़ हैं—डालने को विवश किया, तभी से उस नदी का नाम भी रावण गंगा पड़ गया, और उसमें पद्मराग (माणिक्य) उत्पन्न होने लग गए।

दीवाकरस्तस्य महामहीम्नो महासुरस्योत्तम रक्तबीजम्।
असृग्गृहीत्वा, चरितुं प्रतस्थे……"

तत्सिहली चारुनितम्ब बिम्ब विक्षोभिता गाध महा ह्रदायाम।
पूगद्रमावद्ध तट छ्याया मुमोच सूर्य मरिदुत्तमायाम्।।
येतु रावण गगाया जायन्ते कुरुविन्दव
पद्मराग घन राग बिभ्राणास्फटिकार्चिष ।"

मरकत-पन्ना

नागराज वासुकी, दैत्य के पित्ते को लेकर आकाश से चले जा रहे थे कि रास्ते में गरुड ने हमला किया, तत्काल तुरुष्क की कलियों से सुरभित माणिक्य पर्वत की उपत्यका में उस पित्त को छोड़ देना पड़ा, वहीं वह पन्ने की खदान बन गई।

दानवाधिपते पित्तमादाय भुजगाधिप
सहसैव मुमोच तत्फणीन्द्र सुरसा+यक्त तुरुष्क पाद पायाम्,
'वरमाणिक्य गिरे रुपत्यकाया'

इन्द्र-नील

और राक्षस के दोनों नेत्रों के भी उसी देश में गिर जाने के कारण सागर-तट की उस भूमि पर इन्द्रनील उत्पन्न हो गए।

तत्रैव सिंहल वधू कर पल्लवाग्र,
विस्तारिणी जलनिधेरुपकच्छ भूमि ।
सान्द्रेन्द्र नीलमणि रत्नवती विभाति '

वैदूर्य (लहसूनिया)

उसी दैत्य के केवल घन गर्जन से विविध रगों के वैदूर्य उत्पन्न हो गए।

निर्ह्राद कल्पाद्दितिजस्य नादात् वैदूर्य मुत्पन्नमनेक वर्णम्
(ग० पु० अ० ७३)

पुष्पराग (पुखराज)

उसकी चमड़ी के हिमालय पर गिर जाने से पुखराज की उत्पत्ति हुई।

पतितायां हिमाद्रौतु त्वचस्तस्य सुरद्विषः।
प्रादुर्भवन्ति ताभ्यस्तु पुष्परागा महागुणाः।

वैक्रान्त (कर्केतन)

दैत्य के नाखून हवा से उड़कर कमलवन में जा गिरे, वहां वे कर्केतन बन गए।

वायुर्नखान्दैत्यपते र्गृहीत्वा चिक्षेप सत्पद्मवनेषु हृष्टः
ततः प्रसूतं पवनोपपन्नं कर्केतनं पूज्यतमं पृथिव्याम्।
(ग० पु० अ० ७५)

गोमेद (भीष्म रत्न)

बलराक्षस के वीर्य से गोमेद की उत्पत्ति हुई, जो हिमालय के उत्तर भूभाग में गिरा था।

हिमवत्युत्तरदेशे वीर्यं पतितं सुराद्विषस्तस्य···संप्राप्त···
भीष्मरत्नानाम्।

लाजावर्तादि (पुलकादिक)

उत्तर देशकी जिन सुन्दर नदियों, एवं स्थलांतरो में जाकर जो अंगांश बाहु-भागस्थ गिर गए, वहाँ गुंजा, सुरमा, मधु, कमलनाल के वर्णवाले गधर्व अग्नि, एवं केले के समान दीप्तिमय पुलक रत्न उत्पन्न हो गये।

पुण्येषु पर्वतवरेषु च निम्नगासुस्थानान्तरेषु च तथोत्तर देशगत्वात् सस्थापिता स्वनख वाहुगते प्रकाशं दाशार्णवागदरमेकलकालगादो गुजाजन क्षौद्र मृणालवर्णा गंधर्व वन्हि कदली सन्शाव भासा । एते प्रशस्ता पुलका प्रसुता । —(ग० पु० अ० ७७)

अकीक (रुधिराक्ष)

अग्नि ने उस असुर के रूप को नर्मदा में ले जाकर प्रक्षित किया था, इस कारण उसमें रुधिराक्ष मणियाँ बन गईं।

'हुतभुग्रूप मादाय दानवस्य यथेप्सितम् नर्मदाया निचिक्षेप।'
'रुधिराख्य रत्नमुद्भूत्य तस्य खलु सर्वसमान वर्णम्—'॥

मूगा (प्रवाल-विद्रुम)

और आंतों से मूगे की उत्पत्ति हुई, वह जहाँ-जहाँ केरलादि देशों में डाली गई वहीं आंतें प्रवाल बन गईं—

'आदायशेष स्तस्यात्र वलस्य केरलादिषु'—विद्रुमासुमहागुणा।
(अ० ८०)

स्फटिकादि–मणि

इसी प्रकार कावेरी विन्ध्य, यवन, चीन, नेपाल आदि देशों में जहाँ उस असुर की चर्बी लेजाकर डाली गई, वहाँ-वहाँ स्फटिकादि मणिया बन गई।

कावेर, विन्ध्य-यवन, चीन, नेपाल भूमिषु।
लागली कीकरन्मेदो दानवस्य प्रयत्नत ॥
उत्पन्न स्फटिक तत्र ॥
(ग० पु० अ० ८०)

इस तरह रत्नों की उत्पत्ति उस बलासुर के जिस-जिस अवयव से हुई उसके पौराणिक विवरण को लक्ष्य में रखते हुए, 'अनुभूत-योगमाला' के विद्वान् वैद्यजी ने अनुभूत प्रयोग की दृष्टि से एक उपचार-तालिका भी रत्नों के लिए दी है, उसे यहाँ उद्धृत करना अस्थानीय नहीं होगा।

रत्न	उत्पत्ति का अंग	उपचार प्रयोग
१ हीरा	हड्डी से	हड्डी के रोगों को नष्ट करता है
२ मोती	दांतों से	पॉयरिया आदि रोग नाशक
३ माणक	रक्त से	रक्त रोग नाशक, रक्त वर्धक
४ पन्ना	पित्ते से	पित्त प्रकोप में लाभप्रद
५ इन्द्रनील	नेत्रों से	नेत्र रोग के लिये हितावह
६ लहसूनिया	नाद (स्वर) से	स्वरभंग में लाभप्रद
७ पुखराज	चमड़ी से	कुष्ठादि चर्म रोगमें हितावह
८ वैक्रान्त	नाखून से	नख दोष हारक
९ गोमेद	वीर्य से	प्रमेहादि वीर्य विकार नाशक
१० लज्जावर्त	तेज से	पांडू में उपयोगी, नेत्र तेजप्रद
११ अक़ीक़	रूप से	कांतिप्रद, सिध्यादि में उपकारक
१२ स्फटिक	मेद चर्वी से	कार्श्य, क्षय, प्लीहा, आदि में उपयोगी

ग्रहों की दृष्टि से नवरत्नों की योजना इस प्रकार की जाती है :—

सूर्य—	माणिक्य,	Ruby.
चन्द्र—	मोती,	Pearl.
मंगल—	प्रवाल,	Coral.

बुध—	पन्ना,	Emerald
गुरु—	पुखराज,	Topaz
शुक्र—	हीरा,	Diamond
शनि—	नीलम,	Sopphire
राहू-केतु—	लाजावर्त,	
राहू—	लहसुनिया	Cats eye
केतु—	गोमेद,	Zircon

सर्व साधारण जनता तथोक्त कुछ प्रसिद्ध रत्नों से ही परिचित है, उनमें भी विशेष ख्याति और प्रभाव की दृष्टि से 'नव' ही सर्वज्ञात हैं, परन्तु इनके उपरत्नों के रूपमें ८४ की और परिगणना की जाती है। जिनका परिचय नवरत्नों के साथ रग नाम सहित निम्नलिखित है —

१ माणक—लालरंग रत्नशिरोमणि, सूर्य से प्रभावित।

२ हीरा—सफेद, पीला, नीला आदि रग शुक्र से प्रभावित।

३ पन्ना—हरा रग बुध से प्रभावित।

४ नीलम—गहरा, तथा साधारण आसमानी—शनि प्रभावित।

५ मोती—सफेद, नीला, लाल आदिरग चन्द्र से प्रभावित।

६ लहसुनिया—लहसुन की तरह रग राहू-प्रभावित।

७ मूगा—लाल-सिंदूरिया-रंग मंगल से प्रभावित।

८ पुखराज—पीला, सफेद, नीला, गुरु से प्रभावित।

९ गोमेदक—लाल धूमिल रग केतु प्रभावित।

१० लालडी—गुलाब की तरह।

११ पिरोजा—आसमानी रंग, मुसलमानों में प्राय पहना जाता है।

१२ एमेनी—गहरा लाल स्याही रंग।

१३ ज़वर ज़द (सब्जी निर्मल रंग)

१४ आपेल—विविध वर्ण।

१५ तुरमली—पुखराज की जाति-पांच प्रकार का रंग।

१६ नर्म—पीलापन लिये लाल रंग।

१७ सुनेला—सुवर्ण में धूमिल वर्ण।

१८ धुनेला—उक्त वर्ण में जराही अन्तर।

१९ कटेला—बैंगनिया रंग।

२० सितारा—विविध वर्ण पर सुवर्ण-विन्दु।

२१ स्फटिक—बिल्लोर-सफेद।

२२ गोदन्त—साधारण पीत, गाय के दन्त की तरह।

२३ नामड़ा—स्याही वाले लाल रंग।

२४ लुघिया—मंजीष्ठ के तरह लाल।

२५ मरियम—सफेद-पॉलिश्ड।

२६ मकनातीस—धूमिल श्वेत, चमकदार।

२७ सिंदूरिया—श्वेत-रक्त, मिश्रवर्ण।

२८ लिलि—थोड़ा जरद नीलम की हल्की जाति का।

२९ बेरूज—सब्ज-हल्का।

३० मरगज—आब रहित पन्ने की जाति का

३१ पितोनिया—हरे रंग पर लाल विन्दु।

३२ बँसी—हल्का-हरा पॉलिश रहित।

३३ दुर्रेनफज़—कच्चे धान्य की तरह रंग।

३४ सुलेमानी—काले रंग पर सफेद रेषा।
३५ अलेमानी—भूरे रंग पर रेषा।
३६ जजेमानी—जर्दी लिए भूरा रग, रेषा सहित।
३७ सावोर—हरा रग, भूरी रेषा।
३८ तुरसावा—गुलाबी पीत मिश्रित।
३६ अहवा—गुलाबी रंग पर बिन्दु।
४० लाजावत—(लाजवरद) लाल रंग सोने के बिन्दु।
४१ कुदूरत—काला रग, सफेद-पीले बिन्दु।
४२ आवरी—कालापन लिए सोनेसा।
४३ चीती—सुनहरी बिन्दु, सफेद रेषा।
४४ संगेसम—अगूरी, और सफेद, कपूरी।
४५ मारवर—घास की तरह लाल श्वेत रग मिश्र।
४६ लाँस—मारवर की जाति की धूमिल।
४७ दानाफिरग—पिश्ते की तरह हल्का रग।
४८ कसौटी—कालारग (शालिग्राम की तरह)
४६ दारचना—दालचीनी का रग, तस्बीह (माला में काम देता है)।
५० हकीकुल-बहार—हरे पीलेपन सहित, जल में जन्म।
५१ हालन—मटमैला गुलाबी—हिलता है।
५२ सिजरी—सफेद के ऊपर श्याम वर्ण वृक्ष का आभास।
५३ मुवनज्फ—सफेद रग में बालों की तरह रेषाएं।
५४ कहरवा—पीला रग (कपूर की जाति का)।
५५ झरना—मटिया रग, पानी देने से सारा पानी झर जाता है।
५६ सगे बसरी—सुरमें में उपयोगी होता है।
५७ दांतला—पीत प्रमुख सफेद, शख की तरह।
५८ मकड़ी—इसी जन्तु जाति का रग और जाली।

५९ संखिया—शंख की तरह सफेद।

६० गुदड़ी—प्रायः फकीरों के उपयोग में आता है।

६१ कांसला—हरित-श्वेत वर्ण।

६२ सिफरी—हरित-आसमानी-सा।

६३ हदीद—भूरेपन सहित काला रंग।

६४ हवास—सुनहरा-हरित रंग।

६५ सीगली—काला-लाल मिश्र।

६६ ढेड़ी—काला, खरल-कटोरी में उपयुक्त।

६७ हक़ीक—अनेक रंग-लकड़ी की मूंठ में ज्यादा उपयोगी।

६८ गौरी—रत्न के तौल के लिये उपयोगी।

६९ सीया—काला रग-मूर्तियों में उपयोगी।

७० सीमाक—लाल-पीला, और मटमैला, सफेद-पीले, गुलावी छींटे भी।

७१ मूसा—सफेद-मटिया खरलें बनती है।

७२ पनघन—थोड़ा हरा-काला।

७३ आमलिया—कालापन एवं गुलावीपन।

७४ डूर—कत्थई रग।

७५ तिलवर—काले रंग पर सफेद छींटा।

७६ खारा—हरेपन सहित काला।

७७ सीरखड़ी—मटिया रंग घाव पर उपयोगी।

७८ जहरीमोरा—सफेदी सहित हरा, (विषहर)

७९ रात—लाल, या लहसूनी रंग, (रात्रि के ज्वर का नाशकारी है)

८० सोहन मक्खी—नीला रंग।

८१ हज़रते ऊह—सफेद मिट्टी के रंग।

८२ सुरमा—काला रंग।

८३ पायज़हर—घास की तरह रंग।

८४ पारस—काला रंग, सोना बनता है।*

संस्कृत के विविध ग्रन्थों में रत्नों के लिये यत्र तत्र विवरण बिखरा पड़ा है, उनमें और भी रत्नों के नाम, परिचय आदि का मिलना संभव है। हाँ, अनेक रत्नों को उपचार में उपयोगी समझ, आयुर्वेदविज्ञानविदों ने विभिन्न विकारों के लिए प्रयुक्त किया है, उनके गुण दोष और प्रकृति का विश्लेषण भी किया है।

परन्तु रत्नों का वैज्ञानिक-उपयोग, और ग्रहों से उनका सम्बन्ध तथा उनकी शारीरिक उपयोगिता के विषय में प्रत्येक रत्नों को लेकर विचार-विवेचन करने की आवश्यकता है, रत्नों के जन्म से जिस प्रकार ग्रहों का सम्बन्ध है, उसी प्रकार शरीरगत तत्वों से भी उनका सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है, और परिणाम में वे उचित उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। रत्नों और ग्रहों-धातुओं को लेकर हमने आज पर्यन्त अगणित प्रयोग किए हैं, और उनसे अधिकांश लाभ ही हुआ है। विविध रत्नों के विभिन्न प्रयोग और उनके परिणामों की गाथा अत्यन्त मनोरंजक है। हमारा अपना तो यह विश्वास है कि जिस ग्रह के प्रभाव से जो रत्न, अथवा धातु-प्रभावित है, उसका प्रयोग उस ग्रह के विकृत समय में, विचार परीक्षण पूर्वक किया जावे तो आश्चर्यजनक परिणामकारी सिद्ध होता है। अवश्य ही उसका प्रयोग, और परीक्षण, शरीर प्रकृति के ग्रहजन्य प्रभाव के न्यूनाधिक स्वरूप में निर्माण के निर्णय के पश्चात् ही रत्न धातु के तत्व सन्तुलन-दृष्टि से किया जाना ही उपयोगी हो सकता है। इसमें सूक्ष्मावलोकन क्षमता की अपेक्षा है।

'रत्न समागच्छतु काचनेन' इस सूक्ति में यही रहस्य निहित है।

---

* यह सूची एक अज्ञात पत्र के मुद्रितांश से प्राप्त है।

चिकित्सा में रत्नों का उपयोग

[श्री राधाकृष्ण नेवटिया]

रत्नों का स्थान महत्वपूर्ण है। हमारे वैद्यक शास्त्र के ग्रन्थों में औषधि के रूप में रत्नों के व्यवहार की विधि दी गई है। रत्नों के भस्म बनाने की बहुत पुरानी प्रथा है। इन रत्न भस्मों का साधारण और कठिन रोगों में उपयोग होता है।

मिश्र के फरांव टूटनखामेन के कब्र से जो रत्न निकाले गये उनका खोदनेवालों और आविष्कार पर बहुत बुरा असर पड़ा। कुछ लोगों का कहना है कि लार्ड कारनारवन और उनके साथियों पर जो विपत्तियां आ पड़ी थीं उसका मूल कारण इन रत्नों का निकालना है।

हिन्दुओं के कूर्म पुराण का तो यह कथन है कि सात ग्रह इन सात ज्योतियों की ही घनीभूत अवस्थाएँ हैं। और इन ग्रहों का पोषण भी इन ज्योतियों से होता है। इन्द्रधनुष में ये सात रंग आपको देखने को मिलेंगे और ऐसा माना गया है कि मानव शरीर की रचना भी इन सात ज्योतियों से ही हुई है। एक पक्ष का कहना है कि सृष्टिकर्ता जगदीश्वर के दिव्य देह से ज्योतियां निकली हैं और उस ज्योति से सर्व चराचर विश्व का सृजन पालन होता है और इसके अभाव से ही संहार होता है। इस से तो आज का विज्ञान भी सहमत है कि रंग चिकित्सा से अनेक प्रकार के रोग दूर होते हैं और यह अनुभव सिद्ध है।

रत्नों में भी वही रंग पाये जाते हैं जिसके द्वारा रोगों का नाश होता है। ऐसे तो अनेक रत्न हैं और सभी रत्नों में रंग पाये जाते हैं। पर सात ऐसे रत्न हैं जिनमें एक ही तरह का एक रत्न में रंग होता है, बाकी रत्नों में मिश्रित रंग मिलेंगे, इसलिये सात तरह के रत्नों का

महत्व शरीर के प्राय सब रोगों को दूर करने में है। ज्योतिष शास्त्र में रत्नों के उपयोग को उच्चतम स्थान दिया गया है। स्वास्थ्य लाभ के लिये इन रत्नों का व्यवहार राजा महाराजा से लेकर गरीब तक शरीर में तावीज के रूप मे, अगूठी के रूप में, गले में पहनने के रूप में करते हैं।

आयुर्वेद में प्रधान प्रधान रत्नों का औषधियों में प्रयोग भस्म के रूप में होता है। भस्म के अतिरिक्त रत्नों को औषधियों के रूप में प्रयोग करने का और कोई अच्छा तरीका आयुर्वेद में नहीं बताया है। हजारों वर्षों से वैद्य लोग कीमती रत्नों को जलाकर भस्म बनाते आये हैं। सभी अच्छे रत्न इस काम में लाये जाते हैं। इनमें हीरा, पन्ना, मोती, चुन्नी, प्रवाल, श्वेतपुखराज, नीलम आदि हैं। जटिल और परिश्रमसाध्य प्रक्रियाओं से वैद्य लोग बनाते हैं उसका मुख्य कारण यही है कि इन रत्नों में रोगों को दूर करने की असीम शक्ति भरी पडी है। आयुर्वेद के कथनानुसार जो कि सत्य है उनके गुण जानकारी के लिये जानना आवश्यक है। बाकी आगे चल कर हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकेंगे कि इन रत्नों का उपयोग बडे ही सरल तरीके से करके अस्वस्थ प्राणी मात्र की सेवा कर सकेंगे।

१ चुन्नी भस्म

आयुर्वेद में चुन्नी भस्म दीर्घायु प्रद माना गया है। इसमें वात, पित्त, कफ को शान्त करने की शक्ति है और यह क्षय रोग, दर्द, उदरशूल, थोडा घाव, चक्षुरोग, कोष्ठबद्धता आदि को आराम करती है। चुन्नी भस्म शरीर के अग प्रत्यग के जलन को भी दूर करती है।

२ मुक्ता भस्म

मुक्ता भस्म मीठा, ठढा, आखों के लिये उपकारक, शक्तिदाता, विशेषत औरतों के सौन्दर्य की वृद्धि करनेवाला और आयु को बढाने

वाला होता है। मुक्ता भस्म से क्षय रोग, कृशता, पुराना ज्वर, सब तरह की खाँसी, श्वासकष्ट, दिल धड़कना, रक्तचाप, हृदयरोग, जीर्ण आदि दूर होते हैं।

३. प्रवाल भस्म

प्रवाल भस्म कफ और पित्तजनित रोगों को दूर करती है। सौन्दर्य-वर्द्धक है। कुष्ट, खाँसी, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, कोष्ठवद्धता, ज्वर, उन्माद, पांडु आदि की यह उत्कृष्ट औषधि है।

४. पन्ना भस्म

पन्ना भस्म मीठा, ठंढा, मेदवर्द्धक है। इस से क्षुधा बढ़ती है। अम्लपित्त और जलन दूर होती है। मिचली और वमन, दमा, अजीर्ण, बवासीर, पांडु और हर प्रकार का घाव आदि अच्छे होते हैं।

५. श्वेत पुखराज भस्म

श्वेत पुखराज भस्म विष और विषाक्त बीजाणुओं की क्रिया को नष्ट करता है। मिचली और वमन को रोकता है। वायु और कफ के रोगों को नष्ट करता है। अग्निमान्द्य, अजीर्ण, कुष्ठ और बवासीर में भी फायदा पहुँचाता है।

६. हीरक भस्म

हीरक भस्म से क्षय रोग, भ्रान्ति, जलोदर, मधुमेह, भगन्दर, रक्ताल्पता, सूजन आदि रोग दूर होते हैं। यह आयु की वृद्धि करती है और चेहरे के सौन्दर्य को बढ़ाती है।

७. नीलम भस्म

नीलम भस्म बहुधा शनि से उत्पन्न रोगों में व्यवहार किया जाता है। इससे गठिया, संधिवात, उदरशूल, स्नायविक दर्द, भ्रान्ति, मृगी, गुल्मवायु, बेहोशी आदि रोग दूर होते हैं।

वैद्यक शास्त्र में ये भस्में अलग-अलग प्रयोग की जाती हैं और इनका मिश्रण के रूप में भी प्रयोग होता है।

वैद्यक शास्त्र में इन कीमती रत्नों को भस्म बनाकर नष्ट कर दिया जाता है। भस्म बनाने के लिये नाना तरह के तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है। रत्नों का जो असली स्वरूप गुण है वह भस्म बनाने पर उसम कितने गुण निकल जाते होंगे और कितने नये रूप में प्रवेश करते होंगे यह कहना कठिन है। पर यह तो मानना उचित होगा कि असली रूप तो नहीं रहता है।

रत्न चिकित्सा में रत्नों के तोडफोड की आवश्यकता नहीं है। रत्न ज्यों के त्यों रहेंगे। उन्हीं रत्नों का उपयोग आप सैकड़ों हजारों दफे कर सकेंगे। उसके बाद भी रत्नों का स्वरूप ज्यों का त्यों बना रहेगा। इन रत्नों के द्वारा बनाई हुई औषधि, शायद औषधि शब्द व्यवहार करना गलत है बनाये हुए जल या अलकोहल के उपयोग से हजारों रोगियों को अनेक रोगों से मुक्त कर सकते हैं। कीमत की दृष्टि से कहना चाहिए कि आज तक जितने प्रकार की औषधियाँ व्यवहार में लाई जाती हैं, सभी से सस्ती हैं। केवल एक बार सातों रत्नों के खरीदने में अवश्य अधिक रुपये खर्च करने पड़ते हैं। उसमें भी कम खर्च करके काम निकाला जा सकता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में अभीतक रत्न चिकित्सा का समावेश नहीं हुआ इसका मुख्य कारण इस ओर प्राकृतिक चिकित्सकोंका ध्यान नहीं गया और न खोज ही हुई है। प्राकृतिक चिकित्सा में रंग चिकित्सा या वर्ण चिकित्सा द्वारा तो उपचार किया जाता है, किन्तु रत्न-चिकित्सा, रंग चिकित्सा या वर्ण चिकित्सा का स्वजातीय है क्योंकि दोनों प्रणालियों में पीड़ित और रुग्ण मनुष्यों को आराम करने के लिये विश्व रंगों के अन्तर्गत शक्ति का प्रयोग किया जाता है। वर्ण चिकित्सा में सूर्य या

बिजली के प्रकाश से रंग की शक्तियों की उत्पत्ति होती है। रत्न चिकित्सा में भी इन सात रत्नों से सात रगों की शक्ति उप्पन्न होती है।

इन्द्र धनुष में व्यंजित सात रंग हैं और उन सात रगो में तीन दैवी गुण हैं ; जैसे :

१. सर्वज्ञता २. सर्व सामर्थ्य ३. सर्व व्याप्ति

इसी तरह सात रत्नो में भी उक्त तीन गुण है। रंग अपनी सर्व-सत्ता के कारण रोग को पहचान लेते हैं, अपनी सर्व सामर्थ्य से रोग को आराम करते हैं और अपनी सर्व-व्याप्तिता के कारण सम्पूर्ण शरीर के करोड़ों कोशो और तंतुओ में फैल जाते हैं।

आयुर्वेद-शास्त्र के अनुसार शरीर के रोगों को परखने के लिये जब वैद्य या डाक्टर नाड़ी की परख करते हैं तो वैद्य वात, पित्त और कफ के द्वारा निदान करते हैं और डाक्टर नाड़ी की गति देखकर निदान करते हैं। रत्न चिकित्सा भी आयुर्वेद-शास्त्र को मानते हुए वात, पित्त और कफ को आधार मानती है क्योंकि रत्नो में जो रग है उनका सम्बन्ध प्रत्येक रग अपना स्वभाव रखता है और उसी के अनुसार वह रोगों को दूर करता है। पाठको की जानकारी के लिए संक्षेप में रंगों के गुण दिये जा रहे हैं।

चुन्नी—यह लाल रंग वितरण करती है। यह उष्ण शक्ति या पित्त है जो ऋणात्मक गुणयुक्त है।

मोती—मोती की नारगी विश्वज्योति है। इससे कफ उत्पन्न होता है जिसका गुण धनात्मक है।

प्रवाल—प्रवाल भी चुन्नी के समान पित्त है।

पन्ना—पन्ना हरे रंग की विश्वकिरण प्रसारित करता है और धनात्मक है।

श्वेत पुखराज—श्वेत पुखराज आसमानी विश्वरग छोड़ता है। इसका गुण उदासीन है।

हीरा—हीरा नीला रग छोड़ता है जो कि कफ की शक्ति रखता है जिसमें धनात्मक और सयोजन का गुण है।

नीलम—नीलम बैंगनी रग छोड़ता है। इन्द्र धनुष के समान आसमानी रग का गुण रखता है। इसमें वायु की शक्ति है।

रत्नों की आलोचना बद्ध तालिका नीचे दी जा रही है

रत्न	त्रिदोष	विश्वशक्ति	रंग
चुन्नी	पित्त	ऋणात्मक	लाल
मोती	कफ	धनात्मक	नारगी
प्रवाल	पित्त	ऋणात्मक	पीला
पन्ना	कफ	धनात्मक	हरा
श्वेत पुखराज	वायु	उदासीन	आसमानी
हीरा	कफ	धनात्मक	नीला
नीलम	वायु	उदासीन	बैंगनी

अब हमारे कथन के अनुसार यह तो स्पष्ट हो ही गया है कि रोगों का प्रधान कारण विश्व रग की भूख है। इस भूख को मिटाना ही रत्न चिकित्सा का प्रधान काम है। जब रत्न इस रग की कमी को पूरा करते हैं तो सातों मनुष्य सस्थान, कोप और ततुओं की पर्याप्त पुष्टि हो जाती है और ये अपना खोया हुआ स्वास्थ्य पुन प्राप्त कर लेते हैं। रत्न विश्वरग का अक्षय भडार है। इस रग के सुरासार या अलकोहल में एकत्रित कर के वैज्ञानिक तरीके से सुलभ रूप में जनता के पास पहुँचाया जाता है।

॥ अर्हम् ॥

परमजैन श्रीचन्द्राङ्गज ठक्कुर फेरू विरचिता

प्राकृतभाषाबद्धा

रत्नपरीक्षा

सयलगुणाण निवासं नमिउं सव्वन्नं तिहुयणपयासं ।
संखेवि परप्पहियं रयणपरिक्खा भणामि अहं ॥ १ ॥
सिरिमाल कुलुत्तंसो ठक्कुर-चंदो जिणिंदपयभत्तो ।
तस्संगरुहो फेरू जंपइ रयणाण माहप्पं ॥ २ ॥
पुव्वि रयणपरिक्खा सुरमिति-अगत्थ-बुद्धभट्टेहिं ।
विहिया तं दट्ठूणं तह बुद्धी मंडलीयं च ॥ ३ ॥

---

१ समस्त गुणों के निवास, त्रिभुवन प्रकाशक सर्वज्ञ को नमस्कार करके मैं अपने व पराये हित के लिए संक्षेप से रत्न-परीक्षा कहता हूं ।

२ श्रीमाल वंशोत्पन्न, जिनेश्वर—चरणों के भक्त ठक्कुर चंद का पुत्र फेरू रत्नों का माहात्म्य वर्णन करता है ।

३ पहले सुरमित्र (वृहस्पति) अगस्त्य और बुद्धभट्ट ने रत्न-परीक्षा (ग्रंथ) बनाया उसे देखकर तथा मंडलीक (जौहरी) बुद्धि से—

अल्लावदीण कलिकाल-चक्कवट्टिस्स कोसमज्झत्थ ।
रयणायरुव्व रयणुच्चयच नियदिट्ठिए दट्ठु ॥ ४ ॥

पच्चक्ख अणुभूय मंडलिय-परिक्खिसय च सत्थाय (इ) ।
नाउ रयणसरूव पत्तेय भणामि सव्वेसिं ॥ ५ ॥

लोए भणति एव आसी बलदाणवो महाबलव ।
सो पत्तो अन्न दिणे सग्गे इ दस्स जिणणत्थ ॥ ६ ॥

तहिं पत्थिओ सुरेहिं जन्ने अम्हाण तु पसू होह ।
तेण पसन्ने भणिय भविओह कुणसु नियकज्ज ॥ ७ ॥

सो पसु वहिउ सुरेहिं तस्स सरीरस्स अवयवाओ य ।
सजाया वर रयणा सिरि निलया सुरपिया रम्मा ॥ ८ ॥

---

४ कलिकाल चक्रवर्त्ती सुल्तान अलाउद्दीन के खजाने मे रत्नाकर की तरह स्थित रत्नो को अपनी आँख से देखकर, —

५ प्रत्यक्ष अनुभव कर, जौहरियों द्वारा परीक्षित व शास्त्रो के अनुसार सब रत्नो का स्वरूप ज्ञात कर कहता हूँ ।

६ लोगो मे ऐसा कहते हैं कि बल नामक एक महा बलवान दानव था । एक दिन वह इन्द्र को जीतने के निमित्त स्वर्ग मे गया ।

७ देवताओ ने उससे 'हमारे यज्ञ मे पशु बनो' इसकी प्रार्थना की । उसने सतुष्ट होकर कहा—मैं हुआ, तुम अपना काम करो ।

८ देवताओं द्वारा पशुवध होने पर उसके शरीर के अवयवो से उत्तम रत्न हुए जो देवों को प्रिय, सुन्दर और लक्ष्मी के निवास स्थान हैं ।

अत्थिस्स जाय हीरय मुत्तिय दंताउ रुहिर माणिक्कं।
मरगय मणि पित्ताओ नयणाओ इंदनीलो य ॥ ९ ॥
वइडुज्जो य रसाओ वसाउ कक्केयगं समुप्पन्न।
ल्हसणीओ य नहाओ फलियं मेयाउ संजायं ॥ १० ॥
विद्‌दुमु आमिस्साओ चम्माओ पुंसराउ निप्पन्नो।
सुक्काउ य भीसम्मो रयणाणं एस उप्पत्ती ॥ ११ ॥
एव भणंति एगे भू [मि] विक्कारं इमं च सव्वं च।
जह रुप्प कणय तंबय धाऊ रयणा पुणो तह य ॥ १२ ॥
तट्ठाणाओ गहिया निय निय वन्नेहिं नवहि सुगहेहिं।
तत्तो जत्थ य जत्थ य पडिया ते आगरा जाया ॥ १३ ॥

---

९ हड्डियों से हीरे, दाँतों से मोती, रुधिर से माणिक्य, पित्त से मरकत मणि, आखों से इन्द्रनील।

१० रससे वैडूर्य, मज्जा से कर्केतन उत्पन्न हुए। नखों से ल्हसिणिया और मेद से स्फटिक पैदा हुए।

११ मांस से विद्रुम, चर्म से पुखराज, शुक्र से भीसम (भीष्म) निष्पन्न हुए यह रत्नों की उत्पत्ति है।

१२ कुछ ऐसा कहते हैं, ये सब पृथ्वी के विकार हैं। जैसे सोना, चांदी, तांवा आदि धातु हैं वैसे ही रत्न भी हैं।

१३ उस स्थान से अपने अपने वर्ण के अनुरूप नवों सुग्रहों ने (रत्नोंको) ग्रहण किया फिर वे उनसे जहां जहाँ पड़ गये वहीं उनके आकर (खान) हो गए।

सूरेण पउमरायमुत्तिय चदेण विद्रुम भूमे।
मरगयमणीउ बुद्धे जीवेण य पुसराय च॥ १४॥
सुक्केण गहिय वज्ज सणिदनील तमेण गोमेय।
केएण य वेडुज्ज मुक्का तत्थेव सेस तहि॥ १५॥
इय रयण नव गहाण अगे जो धरइ सच्च सील जुओ।
तस्स न पीडति गहा सो जायइ रिद्धिवतो य॥ १६॥
पुणु जह सत्थे भणिया अदोस अइचुक्खया गुणड्ढा य।
ते रयण रिद्धिजणया सदोस धण-पुत्त-रिद्धि हरा॥ १७॥

---

१४ सूर्य ने पद्मराग, चन्द्रमा ने मोती, मगल ने मूगा, बुध ने मरकत मणि (पन्ना), बृहस्पति ने पुखराज,

१५ शुक्र ने हीरा, शनि ने इन्द्रनील, राहु ने गोमेद, केतु ने वैडूर्य लिये, अवशिष्ट उन्होंने वही छोड दिये।

१६ इन नवग्रह के रत्नों को जो सत्यशील और गुणयुक्त पुरुष धारण करता है उसे ग्रह पीडा नही देते और वह धनवान हो जाता है।

१७ फिर भी, शास्त्रो मे कहा है कि—जो दोष रहित, अत्यन्त चोखे और गुणाढ्य रत्न हैं वे ऋद्धिदायक और सदोष रत्न धन, पुत्र और ऋद्धि को हरण करने वाले हैं।

जइ उत्तिमरयणंतरि इक्कोवि [स] दोसु कूड्ड समलु हवे।
ता सयलउत्तिमाणं कंतिपहावं हणेइ धुवं ॥ १८ ॥
भणिया मूलुप्पत्ती अओय बुच्छामि आगराईणि।
वन्न गुण दोस जाई मुल्लं सव्वाण रयणाणं ॥ १६ ॥

वज्रं जहा :—

हेमंत सूरपारय कलिंग मायंग कोसल सुरट्ठे।
पंडुर वि[दि]सए सुतहा वेणु नई वज्जठाणाइं ॥२०॥
तंब सिय नील कुक्कुस हरियाल सिरीस कुसुम घणरत्ता।
इय वज्जवन्नछाया कमेण आगरविसेसाओ ॥२१॥
पर विशेषोऽयं :—

१८ यदि उत्तम रत्नों में एक भी खोटा मलिन और सदोष रत्न हो तो वह समस्त उत्तम रत्नों की कान्ति और प्रभाव को निश्चयरूप से हरण कर लेता है।

१६ मूल उत्पत्ति कही गई अब मैं समस्त रत्नों की खानें, वर्ण, गुण दोष, जाति, मूल्य आदि बतलाऊंगा।

२० हेमन्त, (हिमवंत) सोपारक, कलिंग, मातंग, कौसल, सुराष्ट्र, पण्डूर देश में एवं वेणु नदी में हीरे की खानें हैं।

२१ ताम्रवर्ण, श्वेत, नील, कुक्कुस (धान्यादि के छिलके जैसे रंग का) हरताल, सिरीश के फूल जैसे घने रक्त रंग की छाया वाले क्रमशः खान विशेष के द्योतक हैं।

कोमल कलिंग पढमे दुइए हेमत तह य मायंगे ।
पड्डुर सुरट्ठ तईए वेणुज सोपारय कलिंमि ॥ २२ ॥
छक्कोण अट्ठ फलहा बारस धारा य हुंति वज्जा य ।
अट्ठ गुणा नव दोसा चउ छाया चउर वन्न कमा ॥ २३ ॥
समफलह उच्चकोणा सुतिक्खधारा य वारितर अमला ।
उज्जल अदोस लहुतुल इय वज्जे होंति अट्ठ गुणा ॥ २४ ॥
कागपग विंदु रेहा समला फुट्टा य एगसिंगा य ।
वट्टा य जवाकारा हीणाहियकोण नव दोसा ॥ २५ ॥

परन्तु विशेप यह है कि—

२२ कलिकालमे कोसल और कलिंग मे प्रथम प्रकार के रत्न, हिमालय तथा मातग मे द्वितीय, पण्डुर सुराष्ट्र मे तीसरे प्रकार के तथा अवशिष्ट हीरे वेणु नदी और मोपारक मे होते है।

२३ हीरे मे छ. कोण, अष्ट फलक, बारह प्रकार की धाराए आठ गुण, नौ दोप, चार प्रकार की छाया, और चार प्रकार के वर्ण, क्रम से हुआ करते हैं।

२४ समफलक, उच्चकोण, तीखी धारा, पानीदार, निर्मल, उज्वल, निर्दोप एवं हल्का वजन, ये हीरे के आठ गुण होते है।

२५ काकपद, छीटा, रेखा (धारी), मैलापन, चिकट, एक सींगा, गोलमटोल, जवाकार और हीनाधिक कोण, ये हीरे के नौ दोप हैं।

सिय-विप्प अरुण-खत्तिय पीय-वइस्सा य कसिण-सुद्दाय ।
इय चउ वन्न दुजाई चुक्खा तह मालवी नेया ॥ २६ ॥

निद्दोस सगुण उत्तिम चत्तारि वि वन्न हुंति जस्स गिहे ।
तस्स न हवंति विग्घं अकालमरणं न सत्तुभयं ॥ २७ ॥

चत्तारि वि वन्न तहा पीयारुण नरवराण रिद्धिकरा ।
सेसा नियनिय वन्ने सुहंकरा वज्ज नायव्वा ॥ २८ ॥

लच्छीए आयड्ढी थंभइ अरिणो परि [र] क्कमं समरे ।
तेण अरुणं पीयं नरेसरो धरइ वरवज्जं ॥ २६ ॥

---

२६ श्वेत वर्ण ब्राह्मण, लाल का वर्ण क्षत्रिय, पीले का वैश्य, और काले का शूद्र, ये चार वर्ण है; ब्राह्मण वर्ण तथा चोखा हीरा मालवी जानना चाहिए। (चुक्खा और मालवी ये दो हीरे की जाति है।)

२७ जिसके घर में निर्दोष, सद्गुणी और उत्तम चारों वर्ण के हीरे होते हैं, उसके घर विघ्न, अकालमरण व शत्रुभय नहीं होता।

२८ चारों ही वर्ण के तथा पीले, और लाल हीरे राजाओं को ऋद्धिकर्त्ता हैं। शेष अपने अपने वर्ण को सुख देने वाले हीरे जानना।

२६ लक्ष्मी को आकर्षण करने वाला, वैरियों को स्तम्भन करने वाला समरक्षेत्र में पराक्रमदाता होने से राजा लोग लाल, पीले उत्तम हीरे को धारण करते हैं।

जह दप्पणेण वयण दीसइ तह उत्तमेण वज्जेण ।
नर तिरिय रुक्ख मंदिर तहिंदधणुहाइ दीसंति ॥ ३० ॥
अइचुक्ख तिक्खधारा पुत्तत्थीइत्थियाण हाणिकरा ।
चप्पडि मलिण तिकोणा रमणीण वज्ज सुहजणया ॥ ३१ ॥

भणियं च :—

अहमेव पढमरयण सुपुत्तरयणाण खाणि-सुह-कुच्छी ।
कोण वराओ वज्जो इय दोस दाउ धर इत्थी ॥ ३२ ॥
समपिंड सगुण निम्मल गुरुतुल्ला हीणपिंड लहुमुल्ला ।
फार लहुतुल्ल वज्जा बहुमुल्ला सम समा मुल्लो ॥ ३३ ॥

३० जैसे दर्पण मे मुख दिखायी देता है वैसे ही उत्तम हीरे मे पुरुष, तिर्यञ्च, वृक्ष, मन्दिर एव इन्द्र धनुप आदि दिखते हैं ।

३१ अति चोखी, तीखी धारा वाला हीरा पुत्रार्थी स्त्रियो को हानिकारक तथा चप्पड मलिन तिकोना हीरा रमणिया को सुखदायक है ।

कहा है कि —

३२ मै ही सुपुत्र रत्नो की खान रूप कुक्षि को धारण करने वाली प्रथम रत्न हूँ । ये पामर वज्र क्या चीज है ? यह दोप देनेवाले हीरे को स्त्री धारण करती है ।

३३ सम पिण्ड, अच्छे गुण वाले और निर्मल हीरे यदि तोल मे भारी और हीन पिण्ड हो तो कमदामी होते हैं। तथा फार व हल्के वजन के हीरे वहुमूल्य एव मध्यस्थ हीरे मध्यम मूल्य के होते हैं ।

वज्जं लहु फलह सिरं वित्थरचरणं तिलोवरिं काउं ।
जो जड़इ अह जड़ावइ तस्स धुणं हवइ बहु दोसं ॥ ३४ ॥
जस्स फलहाण मज्झे वुड्ढो वुड्ढो हुंति भिन्न वन्नाइं ।
कागपय रत्तबिंदू तं वज्जं होइ पुत्तहरं ॥ ३५ ॥
वज्जेण सव्वि रयणा वेहं पावंति हीरए हीरा ।
कुरुविंदो पुण वेहइ नीलस्स न अन्नरयणस्स ॥ ३६ ॥
अयसार कच्च फलिहा गोमेयग पुंसराय वेडुज्जा ।
एयाउ कूड़वज्जा कुणंति जे होंति कल कुसला ॥३७॥

---

३४ जिस हीरे के थान का ऊपर का भाग छोटा और नीचेका भाग बड़ा हो ऐसे को उलटा करके जो जड़ता है या जड़वाता है उसे निश्चय पूर्वक बड़ा दोष लगता है ।

३५ जिस फलक(थान) में बड़े बड़े भिन्न वर्ण, काकपद तथा लाल छींटे होते हैं, वह हीरा पुत्र का हरण करने वाला होता है ।

३६ वज्र (हीरे) से सभी रत्न बींधे छेदे जाते हैं, हीरे से हीरा भी । मानिक भी नीलम को वेधता है अन्य रत्नों को नहीं ।

३७ अयसार (लोहचूर्ण), काँच, स्फटिक, गोमेदक, पुखराज वैडूर्य —इनसे भी जो कलाकुशल व्यक्ति होता है; नकली हीरे बना लेता है ।

कूडाण इय परिक्खा गुरू विन्नाया य सुहमधारा य ।
साणाय सुह घसिया दुह घसिया रयण जाइभवा ॥ ३८ ॥

॥ इति वज्र परीक्षा ॥

अथ मुत्ताहलं जहा :—

गयकुंभ १ संखमज्झे २ मच्छमुहे ३ वंस ४ कोलदाढेय ५ ।
सप्पसिरे ६ तह मेहे ७ सिप्पउडे ८ मुत्तिया हुंति ॥ ३९ ॥
मधय [प] ह पीय रत्ता इय उतिम जंबुछाय मज्झहथा ।
वट्टामलयपमाणा गयादजा हुंति रज्जकरा ॥ ४० ॥

३८ खोटे की यह परीक्षा है कि वह वजन मे भारी, जल्दी बींधा जाय पतली धारा वाला एवं सान पर घिसने से सरलता से घिस जाय वह खोटा तथा कठिनता से घिसे वह सच्चा रत्न जानना ।

३९ हाथी के कुंभस्थल, सख, मच्छ के मुंह मे, वास मे, सूअर की दाढो मे, साप के मस्तक पर बादल मे, तथा सीपी मे, इन आठो स्थानो मे मोती उत्पन्न होते हैं ।

४० गूगला, पीला और राता उत्तम, जमुनिया रङ्ग का मध्यम तथा आवले के प्रमाण का गोळ गज मोती गज रजाने वाला होता है ।

दाहिणवत्ते संखे महासमुद्दे य कंबुजा हुंति।
लहु सेया अरुणपहा नर-दुलहा मंगलावासा ॥ ४१ ॥
मच्छे य साम वट्टा लहुतुला विमलदिट्ठिसंजणया।
अरि-चोर-भूय-साइणि-भयनासा हुंति रिद्धिकरा ॥ ४२ ॥
गुंज समा मंदपहा हवंति कत्थ (?च्छ) वन सव्व भूमीसु।
रज्जकरा दुक्खहरा सुपवित्ता वंसउद्धरणा ॥ ४३ ॥
सूवरदाढे वट्टा घियवन्ना तह य सालफलतुल्ला।
चिट्ठंति जस्स पासे इंदेण न जिप्पए सोवि ॥ ४४ ॥
सप्पस्स नील निम्मल कंकोलीफलसमाण लच्छिकरा।
छल-च्छिद्द-अहिउवद्दव-विसवाही-विज्जु नासयरा ॥ ४५ ॥

---

४१ दक्षिणावर्त्त शंख और महासागर में संखजन्य मोती होते है। हल्का सफेद और अरुण प्रभा वाले मोती मनुष्यों को दुर्लभ और मंगल के आवास हैं।

४२ मच्छोत्पन्न मोती श्यामल, गोल, हलके, विमल दृष्टि उत्पन्न करने वाले, शत्रु, चोर, भूत और शाकिनी इनके भयविनाशक और ऋद्धि कर्त्ता होते हैं।

४३ बांस के मोती सब भूमि में स्थित किसी बांस के वन में होते हैं। जो चिरमी जितने बड़े मंद प्रभा वाले, पवित्र राजकर्ता और दुखहर्त्ता है।

४४ सूअर की दाढ़ों से उत्पन्न मोती गोल, घृतवर्ण, सालफल (सखुआ) जितने बड़े होते हैं। जिसके पास ये मोती होते हैं, वह इन्द्र से भी अजेय है।

मेहे रविवेयसमा सुराण कीलंत कहय निवडं ति ।
गिण्हति अतराले अपत्त धरणीयले देवा ॥ ४६ ॥
वार्य छिज्जइ कोवि हु जलविंदु जलहरमि वरिसते ।
सु वि मुत्ताहल [ल] च्छी भणति चिंतामणी विउसा ॥ ४७ ॥
एए हुति अवेहा अमुल्लया पूयमाण रिद्धिकरा ।
लोए बहु माहप्पा लहु बहुमुल्ला य सिप्पिभवा ॥ ४८ ॥
रामावलोइ बब्बरि सिंघलि कतारि पारसीए य ।
कैसिय देसेसु तहा उवहितडे सिप्पिजा हुति ॥ ४९ ॥

४५ साप का मोती नीला, निर्मल कंकोली फल जितना बडा लक्ष्मीकारक तथा छल छिद्र, सर्पोपद्रव, विष, व्याधि, बिजली आदि के उपद्रवो का नाशक होता है ।

४६ बादलो मे सूर्य तेज जैसे मोती, देवनाओ के क्रीडा करते किसी तरह गिर जाते हैं तो उन्हे पृथ्वी पर पडने से पूर्व ही देवता लोग अन्तराल मे ग्रहण कर लेते है ।

४७ वरसते हुए बादलो मे से यदि कोइ जल विन्दु वायु से सूखकर मोतीहो जाय, उमे विद्वान लोग चिन्तामणि मोती कहते है ।

४८ ये सब अवींधे, पूजनीय, अमूल्य और ऋद्धिकर्त्ता एवं लोक मे बडे माहात्म्यवाले है, सीप के अल्प व बहुमूल्यवान होते हैं ।

४९ रामावलोइ, बब्बर, सिंहल, कान्तार, पारस और कैसिय देश मे तथा समुद्र तट मे सीपीयो से उत्पन्न मोती होते हैं ।

सव्वेसु आगरेसु य सिप्पउडे साइरिक्ख जलजोए।
जायंति मुत्तियाइं सव्वालंकार-जणयाइं ॥ ५० ॥
तारं वट्टं अमलं सुसणिद्धं कोमलं गुरू छ गुणा।
लहु कढिण रूक्ख करडा विवन्न सह बिंदु छह दोसा ॥ ५१ ॥
ससिकिरणसमं सगुणं दीहं इक्कंगि कलुसियं हवइ।
तस्स य खडंस हीणं मुल्लं निबउलीए अद्धं ॥ ५२ ॥
अहरूव पंक-पूरिय असार विप्फोड मच्छनयणसमं।
करयाभं गंठिजुयं गुरू पि वट्टं पि लहु-मुल्लं ॥ ५३ ॥

---

५० सभी खानों में—सीप में स्वाती नक्षत्र के जल पड़ने के योग से सर्व गहनों के योग्य मोती उत्पन्न होते हैं।

५१ देदीप्यमान, गोल, निर्मल, चिकना, कोमल, और भारी ये छः गुण तथा लघु, कठिन, रूखा, कड़ा, विवर्ण, दागी (धब्बे वाला) ये मोती के छः दोष हैं।

५२ चन्द्रकिरण जैसा (श्वेत शीतल) सगुण, दीर्घ, नीबोली से आधे परिमाण का मोती यदि एकांग कलुषित हो तो उसका मूल्य षडांश हीन होता है।

५३ कुरूप, पंकपूरित, निस्सार, विस्फोट मच्छनेत्रजैसा, ओले जैसा ग्रंथि युक्त मोती भारी व गोल होने पर भी वह कम मूल्य वाला है।

पीयद्ध अयट्ठ तिहा मसुद्द छट्ठ मु सरड जह जुग्ग ।
सदोसे य दसास इयराण दिट्ठिण मुल्ल ॥ ५४ ॥

॥ इति मुत्ताहल परीक्षा ॥

—.०❀० —

अथ पद्मरागमणि जथा :—

पउमराग जहा —
रामा गग नईतडि सिंघलि कलसउरि तु बरे देसे ।
माणिक्कणुप्पत्ती विहु विहु पुण दोस गुण वन्ना ॥ ५५ ॥
पउमित्थ पउमराय सोगंधिय नीलगंध कुरुविंद ।
जामुणिय पच जाई चुन्निय माणिक्क नामेहिं ॥ ५६ ॥

५४ पीले का मूल्य आधा या तिहाइ, क्षुद्र का पष्ठाग, रूखे का यथा योग्य, सदोप का दमाश, दूसरे मोतियों के निगाह के अनुसार मूल्य करना ।

पद्मराग माणिक्य मणि .—

५५ रामा गगा नदी के तट, सिहलद्वीप, कलशपुर, और तु वर देश मे माणिक्य उत्पन्न होते हैं, जिनके दोप, गुण, वर्ण आदि भिन्न भिन्न हैं ।

५६ पद्मराग १ सौगन्धिक २ नीलगध, ३ कुरुविंद, ४ जामुनिया ५ ये पाच जाति के चन्नी—माणिक्य नाम से जानना ।

सूरु व्व किरण पसरा सुसणिद्धं कोमलं च अग्गिनिहा ।
जं कणयसम कढिया अक्खीणा पउमरायं सा ॥ ५७ ॥

किंसुय कुसुम कसुंभय कोइल-सारिस-चकोर अक्खि समं ।
दाडिम—बीज—निहं जं तमित्थ सोगंधिया नेया ॥५८॥

कमलालत्तय-विद्दुम-हिंगुलुयसमो य किंचि नीलाभो ।
खज्जोय—कंति—सरिसो इय वन्ने नीलगंधोय ॥ ५९ ॥

पढम तह साव गंधय समप्पहं रंगबहुल कुरविंदा ।
पुण सत्तासं लहुयं सजलं च इय सहाय—गुणं ॥ ६० ॥

जामुणिया विन्नेया जंबू कणवीररत्तपुप्फसमा ।
मुल्लस्संतरमेयं वीसं पनरस दस छ तिग विसुवा ॥६१॥

---

५७ सूर्य की तरह प्रसारित किरणों वाला, सुस्निग्ध, कोमल, अग्नि जैसा, तप्त स्वर्ण तुल्य और अक्षीण पद्मराग होता है ।

५८ किंशुक के फूल, कसुंभा, कोयल—सारस—चकोर की आंख जैसा, अनारदाने जैसे रंग वाला सौगंधिक जानना ।

५९ कमल, आलता, मूंगा और ईंगुर के सदृश किंचित् नीलाभ और खद्योत कांति जैसा नीलगंध जानना ।

६० प्रथम (पद्मराग) व सौगंधिक जैसी प्रभा वाला, तेज रंग का कुरुविंद है । यह सत्ता में छोटा और पानीदार होता है—ये कुरुविंद के स्वभाव गुण है ।

६१ जामुन और लालकनेर के फूल जैसे रंग का जामुनिया जानना । बीस, पन्द्रह, दस, छः और तीन वीश्वा मूल्य का अन्तर है ।

सुच्छायं सुसणिद्धि किरणाभकोमळचं रंगिल्ल।
गरुय सम महत माणिक्क हवइ अट्ठगुण ॥ ६२ ॥
गयछाय जट धूम भिन्न ल्हसण सक्कर कढिण।
विपर्य रुक्ख च तहा अड दोसा भणिय माणिक्के ॥ ६३ ॥
गुण पुव्वुन्न जहुत्ता माणिक्क दोस वज्जिय अमल।
जो धरइ तस्स रज्ज पुत्त अत्थ हवइ नूण ॥ ६४ ॥
गुण सहिय पउमराय धरिए नरनाह आवया टलइ।
सद्दोसेण उवज्जइ न ससय इत्थ जाणेह ॥ ६५ ॥
अगुण विवन्नच्छाय ल्हसण जुय थड्डय च खग्ग च।
इय माणिक्क धरियं सुदेसभट्ठ नर कुणइ ॥ ६६ ॥

---

६२ सुछाया, सुस्निग्ध, किरणो सी काति, कोमल, रंगदार, भारी दटक, सुडौल और बडा ये माणिक्य के आठ गुण होते हैं।

६३ गतछाय, जड धूप भेदा हुआ, दागी, कर्कर, कठिन, पानी-रहित और रूखा ये माणिक्य के आठदोप कहे गए हैं।

६४ पूर्वोक्त गुण वाले दोपवर्जित निर्मल माणिक को जो धारण करता है, उसको निश्चय करके राज्य, पुत्र, और धन की प्राप्ति होती है।

६५ गुणवाली पद्मराग मणि धारण करने से राजाओं की आपदाए टलती हैं और सदोप से आपदाए उत्पन्न होती हैं यह नि:शंक रूप से जानना।

६६ गुणहीन, विवर्ण छायावाला, ल्हसण युक्त (दागी), घनीभूत (स्तब्ध) और तलवार के जैसा मानिक जो मनुष्य धारण करता है, वह देश भ्रष्ट होता है।

कर चरण वयण नयणं सु पउमरायं पइस्स जणयंती ।
तो वहइ पउमरायं पउमिणि सुय-पउम जणणत्थं ।। ६७ ।।
अहवट्टि उड्ढवट्टी तिरीयवट्टी य जा हवइ चुन्नी।
सा अहमुत्तिम मज्झिम कूडा पुण सव्व मट्टी य ।। ६८ ।।
जो मणिवहिप्पएसे मुंचइ किरणं जहग्गि-गय - धूमं ।
सा इंदकंतिन्नेया चंदोव्व सुहावहा सघणा ।। ६९ ।।
साणाइ पउमरायं जो छिज्जइ अंगुली छिविय कसिणा ।
तंच पहाउ सगब्भा चिप्पिडिया हवइ सा चुन्नी ।। ७० ।।

।। इति माणिक्क परीक्खा सम्मत्ता ।। ६ ।।

---

६७ पद्म सदृश पुत्र को उत्पन्न करने के लिए पद्मिनी स्त्री पद्मराग (माणिक्य) को धारण करती है और पति से पद्मराग मणि के जैसे हाथ, पैर, मुख और नेत्रों वाले पुत्र को जन्म देती है ।

६८ जो चुन्नी अधवर्त्ती, उर्द्धवर्त्ती और तिर्यकवर्त्ती होती है, वह क्रमशः अधम उत्तम और मध्यम है और कूड़ा को सब मिट्टी जानना ।

६९ बाह्य प्रदेश में जो निर्धूम अग्नि की तरह कान्ति फैलाती है, वह सघन चन्द्रकान्त मणि, चंद्र की तरह सुखावह जानना ।

७० रेती आदि से घिसने पर जो पद्मरागमणि छीजती है एवं अंगुली स्पर्श से ही दाग पड़ जाता हैं, उस प्रभा वाली सगर्भा चुन्नी को चिप्पड़िया कहते हैं ।

माणिक्य परीक्षा समाप्त हुई

अथ मरगय जहा :—

अवलिंद मलय पव्वय वव्वरदेसे य उवहितीरे य ।
गरुडम्मि उरे कंठे हवंति मरगय महामणिणो ॥ ७१ ॥

गरूडोदगार पढमा कीडउठी दुई य तईय वासवती ।
मूगउनी य चउत्थी धूलिमराई य पण जाई ॥ ७२ ॥

गरुडोदगार रम्मा नीलामल कोमला य विसहरणा ।
कीडउठि सुहमणिद्धा कसिणा हेमाभ कतिहा ॥ ७३ ॥

वासवई य सरूरा नील हरियं कीरपुन्छ-समणिद्धा ।
मूगउनी पुण कठिणा कसिणा हरियाल सुसणेहा ॥ ७४ ॥

मरकत मणि :—

७१ अवलिंद, मलयाचल, बव्वरदेश व समुद्र तटमे, गरुडहृदय व कण्ठ में मरकत महामणि होती है

७२ प्रथम गरूडोद्गार, दूसरी कीडउठी, तीसरी वासवती, चौथी मूगउनी तथा पाचवी धूलिमराई ये पाच जातिया हैं ।

७३ गरुडोद्गार रम्य, नीलाम्ल कोमल और विप हरण करने वाली हैं । कीटउठी सुखमणि कृष्ण—हेमाभ काति वाली होती है ।

७४ वासवती रूक्ष, नील (हरी) तोते की पूंछ जैसी हरितवर्ण की तथा मूगउनी कठिन, काली हरतालवर्णकी तथा चिकनी होती है ।

धूलमराई गरूया तह कठिण नील कच्च सारिच्छा ।
मुल्लं वीस विसोवा दस ट्ठ तह पंच दुन्नि कमा ॥ ७५ ॥

रुक्ख विप्फोड़ पाहण मल कक्कर जठर सज्जरस तह य ।
इय सत्त दोस मरगय-मणीण ताणं फलं वोच्छं ॥ ७६ ॥

रुक्खाय वाहि-करणी विप्फोड़ा सत्थघाय संजणणी ।
मलिण वहिरंधयारी पाहाणी बंधु नासयरी ॥ ७७ ॥

कक्कर सहिय अउत्ता जठरा जाणेह सव्व-दोस-गिहं ।
सज्जरसा मामिच्चू मरगइ दोसाइं ताण फलं ॥ ७८ ॥

---

७५ धूलमराई भारी, कठिन और गहरे हरे काच सरखी होती है इन सब का २० विस्वे वाली का मूल्य क्रमशः दस, आठ पांच और दो (मुद्रा) जानना ।

७६ रुक्ष, विष्फोट, पत्थर, मैला, कड़कड़ा, जठर और सद्यरस ये सात दोष मरकत मणि के कहे । अब उनके फल कहता हूँ—

७७ रुक्ष व्याधिकारक, विष्फोटक शस्त्रघातोत्पादक, मलिन बहरा अंधा करनेवाली और पथरीली बन्धुओं का नाश करने वाली होती है ।

७८ कर्कर दोषी अपुत्रक, जठरा सर्व दोषों की घर जानना, सद्यरसा माता की मृत्यु करने वाली है ।
ये मरकत मणि के दोष और उनके फल कहे ।

सुच्छाय सुसणिद्ध अणेरुय तह लहु च वन्नड्ढ ।
पच गुण विसहरणं मरगय मसराल लच्छिकरं ॥ ७९ ॥
सूराभिमुह ठविय कर उयरे मरगयमि चितिज्जा ।
विप्फुरइजम्स छाया पुन्न पवित्ता धुरीणा सा ॥ ८० ॥

॥ इति मरकत मणि परीक्सा सम्पता ॥

अथ इद्रनील :-

सिंघलदीव समुब्भव महिंदनीला य चउरु वन्ना य ।
छ द्दोस पच गुणाहि य तहेय नव छाय जाणेह ॥ ८१ ॥

---

७९ अच्छी छाया वाला, सचिक्कन, प्रसरतकिरण (अनेकरूप), लघु, और वर्णाढ्य ये मरकतके पाच गुण विष हरने वाले और अपार लक्ष्मी देने वाले है ।

८० सूर्याभिमुख हृदय पर हाथ स्थापित कर मरकत मणि का ध्यान करना, फिर जिसकी छाया विस्फुरित हो वह प्रधान (मरकत मणि) पुण्य पवित्र है ।

इति मरकत मणि की परीक्षा समाप्त हुई ।

---

८१ सिंहलद्वीप मे उत्पन्न महेन्द्रनील के चार वर्ण, छ दोष, पाच गुण और नौ छाया जानना ।

सियनीलाभं विप्पं नीलारुण खत्तियं वियाणाहि।
पीयाभ–नील वइसं घणनीलं हवइ तं सुद्दं ॥ ८२ ॥

अब्भय मंदि सकक्कर गब्भा-सत्तास जठर पाहणिया।
समल सगार विवन्ना इय नीले होंति नव दोसा ॥ ८३ ॥

अब्भय दोस धणक्खय सक्करं वाहीउ मंदिए कुट्ठं।
पाहणिए असिघायं भिन्नविवन्ने य सिंहभयं ॥ ८४ ॥

सत्तासे बंधुवहं समल सगारे य जठर मित्तखयं।
नव दोसाणि फलाणि य महिंदनीलस्स भणियाइं ॥ ८५ ॥

---

८२ श्वेत नीलाभ विप्र, लाल नीलाभ क्षत्रिय, पीताभ नील वैश्य और घननीले (कृष्णनीले) रंग की शूद्र वर्ण वाली जानना।

८३ अभरक, मंदिस, कड़कड़ा गर्भ सत्रासी (दोषी) जठर, पथरीली, मलिन, सगार और विरंगा ये नीलम के नव प्रकार के दोष होते हैं।

८४-८५ अभरक दोष धननाशक, कड़कड़ा व्याधिकारक, मंदे से कोढ, पथरीली से तलवारघात, भिन्न विरंगा सिंहभयदाता, सत्रासी से बन्धुबध एवं मलिन, सगार व जठर मित्रों का क्षय कराने वाला है। ये महेन्द्रनील के ६ दोष और उसके फल कहे।

गरुय तह य सुरग सुसणिद्ध कोमल सुरजणय ।
इय पच गुण नील धरति स (?स) णिकोव पसमति ॥ ८६ ॥
नील घण मोरकठ य अलसी गिरिकन्न-कुसुम सकासा ।
अलि-पत्त कसिण सामल कोइल गीवाभ नव छाया ॥ ८७ ॥
हीरय चुन्निय माणिक मरगय नील च पच रयणमय ।
इय धरिए ज पुन्न हवइ न त कोडि-दाणेण ॥ ८८ ॥

इति इन्द्रनील महापचरयणुद्धय

---

८६ भारी, सुरगा, चिकना, कोमल और रजक इन पाच गुणो वाले नीलम को धारण करने से शनि का कोप शान्त होता है ।

८७ गहरा (घोर) नीला मेघवर्ण मोरकण्ठी, अलसी, गिरिकर्ण के फूल जैसी भ्रमरपत्री, काली, सावली और कोयल ग्रीवा जैसी ये नौ छाया कही है ।

८८ हीरा, चुन्नी, मानिक, मरकत व नीलम इन पाच रत्नमय (आभरण) धारण करने से जो पुण्य होता है वह कोटि दान से भी नही ।

अह विद्दुम ल्हसणियय वइडुज्जो फलिह पुंसराओ य।
कक्केयग भीसम्मो भणियं इय सत्त रयणाणं ॥ ८९ ॥

विद्दुमं जहा :—

कावेर विंझपव्वइ चीण महाचीण उवहि नयपाले।
वल्ली-रूवं जायइ पवालयं कंदनालमयं ॥ ९० ॥

[पाठान्तर :—वल्लीरूवं कत्थवि पवालय होइ उयहि मज्झम्मि।
बहुरत्त कठिण कोमल जह नालं सव्व सुसणेहं ॥५०॥]

बहुरंगं सुसणिद्धं सुपसन्नं तहय कोमल विमलं।
घणवन्न वन्नरत्तं भूमिय पयं विद्दमं परमं ॥ ९१ ॥

ल्हसणियओ जहा :—

नीलुज्जल पीयारुण छाया कंतीइ फिरइ जस्संगे।
त ल्हसणियं पहाणं सिंघलदीवाउ संभूयं ॥ ९२ ॥

---

८९ अब विद्रुम, ल्हसणिया, वैडूर्य, स्फटिक, पुखराज, कर्केतन और भीष्म इन सात रत्नों को कहता हूँ।

९० कावेर, विन्ध्याचल, चीन, महाचीन, उदधि और नेपाल देश में बेलके रूप में प्रवाल, कंदनाल के साथ उत्पन्न होता है।

९१ बहुरंगा, चिकना, सुप्रसन्न, कोमल और निर्मल, घनवर्णा लाल रंगवाली भूमिसे उत्पन्न मूंगा उत्तम होता है।

लहसनिया :—

९२ कान्ति से जिसकी छाया नील, श्वेत, पीली, लाल दिखायी देती हैं वह लहसणियापाषाण सिंहल द्वीप में उत्पन्न होता है।

कर्क्केयण जहा :—

पवणुप्पट्ठाण देसे जायइ कक्केयण सुखाणीओ।
तवय सुपक्क महुनय नीलाभ सदिड्ढ सुसणिद्ध ॥ ६८ ॥
[पाठान्तर-पवणुत्थ ठाण देसे, जायइ कक्केयग सुखाणिओ।
तवय सुपक्क महुय चय नीलाभ सुदिढ सुसणेह ॥ ५२ ॥]

भीसम जहा—

भीसमु दिणचद समो पडुरओ हेमवत सभूओ ।
जो धरइ तस्स न हवइ पाएण अग्गि विज्जुभय ॥ ६९ ॥

इति रयण सत्तकं ॥ छं ॥

कर्केतन :—

६८ पवणु और पठान देश की खानो मे कर्केतन उत्पन्न होता है जो तावे और पक्के महुए जैसे नीलाभ रग का सुदृढ और चिकन होता है।

भीसम :—

६९ सूर्य जैसा पीत मिश्रित श्वेत वर्ण का भीष्म, हिमवंत मे उत्पन्न होता है। जो धारण करता है उसे प्राय करके अग्नि और विद्युत का भय नही होता।

सिरि नाय कुल परेवग देसे तहय नव्वूयानई मज्झे।
गोमेय इंद गोवं सुसणिद्ध पंडुरं पीयं ॥ १०० ॥

[पाठान्तर-सिरिनायकुलपरेवस देसे तह जम्मल नई मज्झे।
गोमेय इंदगोवं सुसणेह पंडुरं पीयं ॥ ५३ ॥]

गुण सहिया मल रहिया मंगल जणयाय लच्छि आवासा।
विग्घहरा देवपिया रयणा सव्वेवि सपहाया ॥ १०१ ॥

मुत्तिय वज्ज पवालय तिन्निवि रयणाणि भिन्न जाईणि।
वन्नवि जाइ विसेसो सेसा पुण भिन्न जाईओ ॥ १०२ ॥

इय सत्थुत्तर सत्तुत्तम रयणा भणिय भणामित्थ पारसी रयणा।
वन्नागर-संजुत्ता लाल अकीया य पेरुज्जा ॥ १०३ ॥
[पाठान्तर-इय सत्थुत्तयरन्ना भणिय, भणामित्थ पारसी रयणा
वण्णागर संजुत्ता अन्ने जे धाउसंजाया ॥ ५७]

---

१०० श्री नायकुल परेवग देश में तथा नर्मदा नदी में गोमेदक इंद्रगोप सचिक्कन एवं श्वेत-पीत रंग का होता है।

१०१ गुण संपन्न, निर्मल, मंगलकारी और लक्ष्मी के आवास भूत सभी रत्न विघ्ननाशक, देवताओं के प्रिय और सप्रभाव हैं।

१०२ मोती, हीरा और प्रवाल तीनों ही भिन्न जातीय रत्न हैं। वर्ण भी जाति विशेष से सम्बंधित हैं और अवशिष्ट भी भिन्न जाति के होते हैं।

१०३ इन शास्त्रोक्त रत्नों को बतलाया। अब लाल अकीक, पिरोजा आदि पारसी रत्नों को रंग और खान सहित बतलाता हूँ।

अइतेय अग्गिवन्न लाल वद दसाण देसम्मि।
जमण-देसे यकीक लहु मुल्ल पिल्ल-सम-रंग॥ १०४॥

[पाठान्तर-अइतेय अग्गी वण्ण, लाल बदक्खसाए देसम्मि।
यमण देसे यकीक लहु मुल्ल पिल्लु समरंगं॥ ५८]

नीलामल पेरुज्ज देसे नीसावरे मुवासीरे।
उप्पज्जइ खाणीओ दिट्ठिस्स गुणावह भणिय॥ १०५॥

इति वज्रादि सर्वरत्नानां स्थान ज्ञाति सरूपाणि समाप्तः॥ छ॥

[पाठान्तर—नीलनिह पेरुज्ज देसे, नीसावरे गुवासीरे।
उप्पज्जइखाणीओ दिट्ठिस्स गुणावह भणिय॥ ५६॥]

---

१०४ अति तेज अग्नि जैसे वर्ण की लाल, बदख्शाँ देश मे तथा पीलू जैसे रग का अकीक, यमन देश मे अल्पमूल्य वाला होता है।

१०५ गहरे हरे रग का पिरोजा, नीसावर और मुवासीर की खानो मे उत्पन्न होता है, नजर से देखकर गुण आदि कहना चाहिए। यहा हीरा आदि सब रत्नो के स्थान, जाति, स्वरूपादि समाप्त हुए।



अथैतेषामेव मूल्यानि वक्ष्यंते यथाह—पुनः भावानुसारेण-यथाः—

जे सत्थ-दिट्ठि कुसला अणुभूया देस काल भावन्नू।
जाणिय रयणसरूवा मंडलिया ते भणिज्जंति ॥ १०६ ॥
हीणंग अंतजाई लक्खण सत्तुज्झया फुड कलंका ।
अय जाण माणया विहु मंडलिया ते न कईयावि ॥ १०७ ॥
मंडलिय रयण दट्ठु परोप्परं मेलिऊण करसन्नं।
जंपंति नाम मुल्लं जाम सहा सम्मयं होइ ॥ १०८ ॥
धणिओ अमुणिय मुल्लो हीणहियं मुणइ तस्स नहु दोसो।
मंडलिय अलिय मुल्लं कुणंति जे ते न नंदंति ॥ १०९ ॥

अब उनके मूल्य कहे जाते हैं, फिर जैसे भावानुसार हो यथाः—

१०६ जो शास्त्रज्ञ, दृष्टिकुशल, अनुभवी, देशकाल-भाव के ज्ञाता, एवं रत्नों के स्वरूप के जानकार हैं वे मंडलिक-जौहरी कहलाते हैं ।

१०७ हीनांग, नीच जाति, लक्षण तथा सत्त्व रहित, स्पष्ट कलंकित व्यक्ति ज्ञाता और मान्य होने पर भी मंडलिक-जौहरी कभी नहीं।

१०८ जौहरी रत्न देखकर, परस्पर हाथ की संज्ञा मिलाकर जब सभा सम्मत हो तब मूल्य कहे।

१०९ रत्न का मालिक बिना जाने ही नाधिक मूल्य भी कहे तो उसे दोष नहीं, पर जो जौहरी भूठा मोल करे वह सुखी नहीं होता ।

अहमस्स अहिय मुल्ल उत्तमरयणस्स हीण मुल्ल च ।
जे मय-लोह वसाओ कुणति ते कुड्डिया होंति ॥ ११० ॥

रयणाण दिट्ठ मुल्ल निम्द्ध वद्ध न होइ कईयावि ।
तहवि समयाणुसारे ज वट्टइ त भणामि अह ॥ १११ ॥

तिहु राइएहिं सरिसम छहि सरिसम तदुलोय निउण जवो ।
सोलस जवेहि छहि गुजि मासओ तेहिं चहु टको ॥ ११२ ॥

एगाई जाव वारस तिग वुड्ढी णाम गुज चउवीस ।
चउ रयणाण मुल्ल तोलेण सुवन्न टकेहिं ॥ ११३ ॥

---

११० नीच रत्न का अधिक मूल्य, उत्तम रत्न का हीन मूल्य जो मद एव लोभ के वशीभूत होकर कहते हैं वे कोडी होते हैं ।

१११ रत्नो का मूल्य बाधा हुआ नही होता पर नजर के अनुसार है, फिर भी समयानुसार जो मूल्य है वह मैं कहता हूँ ।

११२ तीन राई का एक सरसो, छः सरसों का एक तडुल, दो तडुल का एक जो, सोलह जो अथवा छ गुजा (रत्ती) का एक मासा और चार मासे का एक टाक होता है ।

११३ एक से बारह तक और फिर तीन तीन बढती हुई चौवीस रत्ती (गुजा) तक चारो रत्नो के मूल्य तोल करके स्वर्ण टका (मुद्रा) से बतलाना ।

पंच दुवालस वीसा तीसा पन्नास पंचसयरी य ।
दसहिय चउसट्ठि सयं दो चाला तिसय वीसास ॥ ११४ ॥
चारिसय तहय छहसय चउदस सय उवरि विउण विउणं जा ।
इक्कारसहस दुगसय मुल्लमिणं इक्क हीरस्स ॥ ११५ ॥
अद्ध इग दु चउ अट्ठय पनरस पणवीस याल सट्ठी य ।
चुलसीइ चउ दसुत्तर सयं च कमसो य सट्ठिसयं ॥ ११६ ॥
तिन्निसय सट्ठि समहिय सत्तसया तहय बारससयाय ।
दो सहस कणय टंका मुत्तिय मुल्लं वियाणेहिं॥ ११७ ॥

११४।११५ पांच, बारह, बीस, तीस, पचास, पचहत्तर, एक सौ दस एक सौ चौंसठ, दो सौ चालीस, तीन सौ बीस, चार सौ, छः सौ, चौदह सौ, फिर उसके ऊपर में दूना दूना (अठाइस सौ, पांच हजार छः सौ) करके ग्यारह हजार दो सौ स्वर्ण (टंका) एक हीरे का मूल्य जानना ।

११६।११७ आधा, एक, दो, चार, आठ, पन्द्रह, पचीस, चालीस, साठ, चौरासी, एक सौ चौदह और क्रमशः एक सौ साठ तीन सौ साठ, उससे अधिक सात सौ, बारह सौ फिर दो हजार स्वर्णटंका मोती का मल्य जानना ।

दो पच अट्ठ वारस अट्ठार छवीसा य [याल] सट्ठीय ।
पचासी वीसासउ सट्ठि सय दुसय वीसा य ॥ ११८ ॥

चउसय वीसा अडसय चउदस चउवीस पिहु पिहु सयाणि ।
गुंजाइ [मास ?] टक उत्तिम माणिक्क मुल्लु वर ॥ ११६ ॥

पायद्ध एग दिवढ दु ति चउ पण छग्ग अट्ठ दह तेर ।
ठार सगवीस चत्ता सट्ठि महामरगयमणीण ॥ १२० ॥

अस्यार्थं एप पत्र पूठि यन्त्रेणाह ॥ छ ॥ छ ॥

११८।११९ दो, पाँच, आठ, बारह, अठारह, छब्बीस, साठ, पचासी, एक सौ बीस, एक सौ साठ, दो सौ बीस, चार सौ बीस, आठ सौ, चौदह सौ, चौबीस सौ तक (उपर कथित रत्ती के हिसाब से) उत्तम माणिक्य का मूल्य स्वर्ण टकों से जानना।

१२० पाव, आधा, एक, ड्योढ, दो, तीन, चार, पाँच, छ', आठ दस, तेरह, अठारह, सताईस, चालीस और साठ क्रमशः मरकत मणि का मूल्य है।

इन ११२ से १२० गाथा तक का भावार्थ पीछे दिये हुए यत्र से समझना।

सिरि बद्धं गुण अद्धं पायं अणुसार पाय करडं च ॥ १२४ ॥
टंकिक्क जे तुलंती मुत्ताहल तं भणामि अहं ।
दस बारस पन्नरसा वीसं पणवीस तीस चालीसा ।
पन्नार[स] सत्तर सयं-चडंति टंकिक्कि तह मुल्लं ॥ १२५ ॥
पन्नासं चालीसं तीसं वीसं च तहय पन्नरसं ।
बारस दस ट्ठ पणतिय इय मुल्लं रूपटंकेहिं ॥ १२६ ॥

॥ इति मुत्ताहलं ॥

अथ वज्रं जथा :-

एगाइ जाम बारस तुलंति गुंजिक्कि वज्ज ताण मिमं ।
मुल्लं मंडलिएहिं ज भणियं तं भणिस्सामि ॥ १२७ ॥

---

१२४ हाथी के कुम्भस्थल से प्राप्त अथवा आधे या पाव टंक वाले मोती के अनुसार लक्ष्मी वर्धन गुण वाले है। जो मोती एक टांक में तुलते है, उन्हें मै बतलाता हूँ।

१२५–२६ एक टांक में दस, बारह, पन्द्रह, बीस, पचीस, तीस, चालीस, पचास, सत्तर, सौ मोती जो चढ़ते है उनके मूल्य क्रमशः पचास, चालीस, तीस, वीस, पन्द्रह, बारह, दस, आठ, पांच और तीन रुपये (चांदी के रुपये) है।

छोटे हीरे :—

१२७ एक से लगाकर बारह तक जो हीरे एक रत्ती में तुलते हैं उनके मूल्य जो मंडलीकों-जौहरियों ने कहे हैं वह मैं कहूँगा।

एग दुसढ छ नवग पनरस चउवीस तहय चउतीस।
पन्नास लालमुल्ल पउण एयाउ ल्हसणियय ॥ १२२ ॥

पा अद्ध पउण एगं दु पच अट्ठेव तहय पन्नरस।
इय इदनील मुल्ल तहेव पेरोजयस्स पुणो ॥ १२३ ॥

अस्यार्थं जन्त्रे यथा :-

मासा	०॥	१	१॥	२	२॥	३	३॥	४
लाल	१	२॥	६	९	१५	२४	३४	५०
ल्हसणी	०॥।	१॥२॥	४॥	६॥।	११।	१८	२५॥	३७॥
इंद्रनील	०।	०॥	०॥।	१	२	५	८	१५
पेरोजा	०।	०।	०॥,	१	२	५	८	१५

१२२ एक, ढाई, छः, नौ, पद्रह, चौवीस, चौतीस, और पचास ये लाल के मूल्य हैं तथा ल्हसणिया का मूल्य इससे पौना जानना।

१२३ इन्द्रनील और पिरोजा का मूल्य पाव, आधो, पौन, एक, दो, पाच, आठ और पद्रह स्वर्णमुद्राए है।
इनका अर्थ भी यत्न से समझना।

सिरि बद्ध गुण अद्ध पायं अणुसार पाय करडं च ॥ १२४ ॥
टंकिक्क जे तुलंती मुत्ताहल तं भणामि अहं ।
दस वारस पन्नरसा वीस पणवीस तीस चालीसा ।
पन्नार[स] सत्तर सयं चडंति टंकिक्कि तह मुल्लं ॥ १२५ ॥
पन्नास चालीसं तीस वीस च तहय पन्नरस ।
वारस दस ट्ठ पणतिय इय मुल्लं रूप्पटंकेहिं ॥ १२६ ॥

॥ इति मुत्ताहलं ॥

अथ वज्रं जथा :-

एगाइ जाम वारस तुलंति गुंजिक्कि वज्ज ताण सिमं ।
मुल्लं मंडलिएहिं ज भणियं तं भणिस्सामि ॥ १२७ ॥

---

१२४ हाथी के कुम्भस्थल से प्राप्त अथवा आधे या पाव टंक वाले मोती के अनुसार लक्ष्मी वर्धन गुण वाले है। जो मोती एक टांक में तुलते है, उन्हें मै वतलाता हूँ।

१२५–२६ एक टांक में दस, बारह, पन्द्रह, वीस, पचीस, तीस, चालीस, पचास, सत्तर, सौ मोती जो चढ़ते है उनके मूल्य क्रमशः पचास, चालीस, तीस, वीस, पन्द्रह, बारह, दस, आठ, पोच और तीन रुपये (चांदी के रुपये) है।

छोटे हीरे :—

१२७ एक से लगाकर बारह तक जो हीरे एक रत्ती में तुलते हैं उनके मूल्य जो मंडलीकों-जौहरियों ने कहे हैं वह मैं कहूँगा।

पणतीस छव्वीस वीस सोलस तेरस [य] दसेवा ।
अट्ठ च एग ऊणा जातिय कमि रूप्पटकाय ॥ १२८ ॥
ग्रस्यार्थं जन्नेणाह :-

मोती टके ?	१०	१२	१५	२०	२५	३०	४०	५०	७०	१००		
रूप्य टका	५०	४०	३०	२०	१५	१२	१०	८	५	३		
वज्ज गुंजा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
रूप्प टका	३५	२६	२०	१६	१३	१०	८	७	६	५	४	३

१२८ पंतीस, छब्बीस, बीस, सोलह, तेरह, दस, आठ और फिर
एक एक कम (सात, छ, पांच, चार, तीन) —क्रमशः
तीन रुपये (चादी के टके) तक के ।
॥ इनके अर्थ भी यन्त्र से जानना ॥

मुद्रित प्रति के पाठ भेद :—

मुद्रित प्रति में १२३ वीं गाथा का पाठ भिन्न रूप में मिलता है और उसके नीचे यंत्र रूप कोष्टक दिया गया है उसकी अङ्क गणना भी भिन्न प्रकार की है। गाथा और कोष्टक निम्न प्रकार है।

[अद्धति छह] दह तेरस सोलस बावीस तीस टंकाइं।
लालस्स मुल्लू एवं पेरुज्जं इंदनील समं ॥ १२३ ॥

अस्यार्थं यंत्रकेणाह :-

मासा	॥	१	१॥	२	२॥	३	३॥	४
हीरा	७	१६	३०	६०	१००	१५०	२२०	३४०
चून्नी	८	१८	३०	६०	१२०	२४०	४८०	६६०
मोती	२	८	३०	८०	१२०	१८०	२७०	४०५
मराइ	४	६	१०	१५	२२	३४	५०	७०
इन्द्रनील	।	॥	॥।	१	२	५	७	१०
लहसणिया	।	॥	॥।	१	२	५	७	१०
लाल	॥	३	६	१०	१३	१६	२२	३०
पेरोजा	।	॥	॥।	१	२	५	७	१०

मुद्रित प्रति मे १२४-१२५-१२६ इन गाथाओ के आधार पर पाठ भेद वाली भिन्न गाथाए है तथा उनके नीचे यत्र रूप से जो कोष्टक दिए हे उनमें अकादि भी भिन्न गिनती बताते है। गाथाए और कोष्टक निम्न प्रकार है ·—

अस्यार्थं पुन यंत्रकेणाह :—

मोती टक प्रति	१२	१४	१६	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	६०	१००
रूप्य टकण	४०	३५	३०	२४	१६	११	८	६	५	४	३	२

हीरा गु जा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
रूप्य टकण	२०	१६	१३	११	९	८	७	६	५	४	३	२

वारस चउदस सोलस वीसाई दसहियं च जाव सयं ।
टंकिक्कि जे तुलंती मुत्ताहल ताण मुल्लमिमिं ॥ १२४ ॥
चालीसं पणतीसं तीसं चउवीस सोल सिक्कारं ।
अट्ठ छ इगेग हीणं जाव दु कमि रुप्प टंकाणं ॥ १२५ ॥
एगाई जाव वारस चडंति गुंजिक्कि वज्ज ताणमिसं ।
वीसाय सोल तेरस गारस नव इगूण जाव दुग ॥ १२६ ॥
[पाठ भेद :— अइचुक्ख निमला जे नेयं सव्वाण ताण मुल्लमिमं ।
सदोसे सयमंसं भमालए मुल्लु दससंसं ॥ १२७ ॥
गोमेय फलिह भीसम कक्केयण पुस्सराय वइडुज्जे ।
उक्किट्ठ पण छ टंका कणयद्ध विद्दुसे मुल्लं ॥१२८॥
॥ इति सर्वेषां मूल्यानि समाप्तानि ॥
पाठ भेद :— तेणय रयण परिक्खा रइया संखेवि ढिल्लिय पुरीए
कर मुणि गुण ससि वरिसे अल्लावदीणस्स रज्जम्मि ॥१२६॥
मूल प्रति का पाठ :—
अइचुक्ख निम्मला ज नेयं सव्वाणूताण मुल्लुमिसं ।
नहु इयर रयणगाणं कणयद्धं विद्दुमे मुल्लं ॥ १२९ ॥
गोमेय फलिह भीसम कक्केयण पुंसराय वेडुयज्जे ।
एयाण मुल्लु दम्मिह जहिच्छ कज्जाणुसारेण ॥ १३० ॥

२९ अत्यन्त चोखे, तेजस्वी, और निर्मल जो हों उन सबके ये मूल्य जानना, अन्य रत्नों के नहीं। कनकार्द्ध [illegible] का मूल्य है।

३० गोमेदक, [illegible] ीसम, कर्केतन, पुखराज, वैडूर्य मूल्य [illegible] ।र द्रम (मुद्रा) से हे

सिरि धधकुले आसी कन्नाणपुरम्मि सिट्ठि कालियओ।
तस्सुव ठक्कुर चंदो फेरू तस्सेव अंगरुहो ॥ १३१ ॥
तेणिह रयण परिक्खा विहिया निय तणय हेमपाल कए।
कर मुणि गुण ससि वरिसे (१३७२) अल्लावदी विजयरज्जम्मि ॥ १३२ ॥

इति परम जैन श्रीचंद्रांगज ठक्कुर फेरू विरचिते
संक्षिप्त रत्नपरीक्षा समाप्ता ॥ छ ॥

३१-३२ कन्नाणपुर मे श्री धधकुल (धाधिया-श्रीमाल) मे श्रेष्टी-कालिक उनके पुत्र ठक्कुर चंद और उनके अंगज ठक्कुर फेरू ने यह रत्नपरीक्षा अपने पुत्र हेमपाल के लिये स० १३७२ मे सम्राट् अल्लाउद्दीन के विजयराज्य मे बनाई

परम जैन चंद्र के पुत्र ठक्कुर फेरू की बनाई हुई संक्षिप्त रत्नपरीक्षा समाप्त हुई ॥



पं० तत्त्वकुमार मुनि कृता

रत्न परीक्षा



॥ दोहा ॥

आदि पुरुप आदीसरू, आदि राय आदेय।
परमातम परमेसरू, नमो नमो नाभेय ॥ १ ॥

अवनीतल अधिकी वनी, नयरि अयोध्या नाम।
नाभि नरिंद दिणंद सम, राज्य करै अभिराम ॥ २ ॥

ऋपभ वृपभ ज्यूँ धारवा, निज कंधे भू भार।
वंश इक्ष्वाग दीपावियौ, ता घर ले अवतार ॥ ३ ॥

ए मर्यादा जगत की वरणावरण विचार।
न्यात पात कुल नीतता, अभिनव कीध आचार ॥ ४ ॥

ब्राह्मण क्षत्री वैश्य ए, शूद्र वरण जग मांहि।
च्यार वरण ते चूंप से, दीर्घ वताइ सवांहिं ॥ ५ ॥

वज्री वारै पाच गुण, दोप जुवारै पाच।
च्यार छाय मोल भेद है, वार प्रकारह जाच ॥ २६ ॥

अथ हीरा के पाच गुण :—

तीखी वार जु निर्मलो, अठकूनों पटकोण।
हरु व गुण सै युक्त है, सो दुर्लभ त्रिहु भौण ॥ २७ ॥

अथ हीरा के पॉच दोप कथन :—

काकपदी मल विन्दु जो, यवाकृति पुन रेख।
ए पाचे दूपण निपट, भय दायक ए लेख ॥ २८ ॥

अथ काकपदी दोप :—

काक परीक्षा काक पक्ष, काग विंदु अथ होइ।
ताकु लागे मीच भय, जा ढिग हीरा सोय ॥ २९ ॥

अथ मल दोप :—

च्यार प्रकारे मल कह्यौ, रत्न विशारद लोक।
अग्र मैल पुन मध्य मल, धारा कृण विलोक ॥ ३० ॥
धारा व्याली भय करे, मध्यमली जल आग।
कृण-मली जस खोत है, अग्र-मली दुख भाग ॥ ३१ ॥

अथ विंदु दोप :—

विंदु दोप त्रिभेद से, सुणज्यौ चित्त लगाय।
जे विंदु आवर्त्त सम, तातें नवनिधि थाय ॥ ३२ ॥

बिंदु वर्ण्यौ वाती समौ, ताकौ धरै नरेश।
सो पीड़ा गद की लहै, ए फल कह्यो विशेष ॥ ३३ ॥
रक्त बिंदु ता बज्र में, तातें अधिक विनाश।
लक्ष्मी संपति पुत्र क्षय, पुन उपजैं अति त्रास ॥ ३४ ॥

अथ यव दोष :—

रक्त श्वेत पीयरै वरण, यव के भेद ज तीन।
संपत् हरता लाल है, पीत करै कुल छीन ॥ ३५ ॥
श्वेत जवाकृत देख के, ताहि धरै नर कोइ।
इति भीति सहु उपसमै, सुख संपति अति होइ ॥ ३६ ॥
दोष दोइ यव में कह्या, यव को गुण है एक।
दोप हरौ गुण संग्रहो, चित में आणि विवेक ॥ ३७ ॥

अथ रेखा दोष :—

चिहुं रेखा का फल कहूं, युक्ता युक्त विचार।
विषमी डावी जीमणी, चौथी ऊरध धार ॥ ३८ ॥
बांई रेखा मृत्यु कर, बंधन विपमी रेख।
दाहिण रेखा योग तैं, लछि अचानक देख ॥ ३९ ॥
ऊरध रेखा योग तें, लगे जु छिन में घाव।
रेख दोप तीनुं कह्या ,एक धरै शुभ माव ॥ ४० ॥

पुनः हीरा के च्यार दोष :—

बाह्य मध्य रेखा फटी, जो हीरन में होइ।
कूण हीन अथ गोल है, निरफल हीरा सोइ ॥ ४१ ॥

अथ च्यार छाया :—

श्वेत रक्त अरु पीत है, श्याम छाय चौ नाम।
च्यार वर्ण च्यारू कही, सब ही सुग्न की धाम ।४२॥

अथ सामान्य परीक्षा :—

धारा अगे अग्रतल, करो निरख तुम हेर।
दोप अदोप निहार के, तुला चटावहु फेर॥ ४३॥

अथ तोल मान :—

सरस्यु आठ लहीजिये, ता सम तदुल एक।
तदुल चिहु ते मूग इक, चिहु मुगा गुञ्ज एक॥ ४४॥
मजाडी दोइ गुज की, तीन मजाडी माप।
दो मास कौ साण इक, साण दुहु टक भाप॥ ४५॥
या विधि गिनती लीजिये, तोल बोल परमाण।
रत्न निशारद लोक के, यह तोलन परमाण॥ ४६॥

॥ इति तौल परमाण कथनम्॥

पुनः पाठान्तरम् :—

विश्वा बीस कहीजिये, रत्ती एक परमाण।
कलिंज एक द्वै गुञ्ज को, छ' गुञ्ज मासा जाण॥ ४७॥

॥ इति पाठान्तरम्॥

अथ हीरा कौ मोल कथन :—

मोल तीन है बज्र के, ताहि लेतु हुं नाम ।
उत्तम मध्यम अधम है, बज्र मान तसु दाम ॥ ४८ ॥
पिंड मान यव एक है, तोल जु तंदुल एक ।
ताको मोल ज अर्द्ध शत, कहजो धरिय विवेक ॥ ४६ ॥
पिंडमान यव दोइ है, तंदुल एक ज तोल ।
तासे चौगुण मोल धरि, गिणज्यो द्वे शत मोल ॥ ५० ॥
तोल एक तंदुल समौ, गात्र मान यव तीन ।
ताको बोल्यो आठ गुन, रत्न परीच्छक कीन ॥ ५१ ॥

अथ मोल द्वितीय भेद:—

मोल कह्यौ पाठांतरे, ताहि सुण्यो अधिकार ।
पिंड पंच गुण तीन थी, अठ शत तासु विचार ॥ ५२ ॥
षट् गुण होइ जो तोल तें, एक सहस्र तसु मोल ।
सात गुनौ पिंड तौल तै, सहस्र दोइ तसु वोल ॥ ५३ ॥
तोल घटै ज्यातें बढै, त्यों तयों दाम बढ़ाइ ।
रत्न परीक्षा शास्त्र को, दीयौ जु सार पढाई ॥ ५४ ॥
जो हीरा जल कै बिचै, तिरता रहै दोई भाग ।
मोल लहै छत्तीस गुन, देह लेह धरि राग ॥ ५५ ॥
तीन भाग तिरते रहै, जल में हीरा सोइ ।
ता हीरा को मोल फुन, सहस वहुत्तर होई ॥ ५६ ॥

अथ सामान्य भेद हीरा के कहै :—

जा हीरा में ज्योति नहीं, लक्षन गुन नहि कोइ।
ताको मोलज एक शत, मशय धरी नही कोइ॥ ५७॥

ना धरवो ना पहरवो, ज्योति रहित सो हीर।
तासो काज न को सरै, जैसे अध शरीर॥ ५८॥

उत्तम गुण सयुक्त कु, धरिहीं स्वर्ण मढाय।
लक्ष्मी सपति देत है, दिन दिन अधिक बढाय॥ ५९॥

जो हीरा जल मा, तिरै, सुपर्ण्ण ज्यु।
सेत दोप के पत्र, मरीसै वर्ण त्यु॥
ताकौ मोल सुवर्ण, तुला इक, जानियैं।
सुख सपति दातार, अधिक कर मानियै॥ ६०॥

वज्र जरै विपरीत जो, कबहु जरईया भूल।
दुष्ट दोप ता सग है, जरीया के सिर शूल॥ ६१॥
करो परीक्षा हीर की, जात राग रग रोल।
वर्ति गात्र जु दोप गुण, आकृत लाघव मोल॥ ६२॥
ए दस भेद विचार कै, करहु परीक्षा हीर।
दोपवत मणि देख कै, ताहि न करियै सीर॥ ६३॥
लच्छन विन पुन भग है, वरन च्यार कर हीन।
शून्य मडली ताहि कौ, कहियै रत्न प्रवीन॥ ६४॥
हीरा निर्मल गुणहि युत, योग मडली यार।
देवहि दुर्लभ होई सो, गुण है तासु अपार॥ ६५॥

अति निशाद अठकूण है, पुनः षट्कूण विशाल ।
सो हीरा दिन प्रति धरै, मुकुट बीच भूपाल ॥ ६६ ॥
कोऊ कंठ भुजानि मध्य, धरै ताहि धन धान ।
रंण अभंग सुख संग तैं, उत्तम गुण संतान ॥ ६७ ॥
भूषन हीरन को कहूँ, धरै गर्भिनी नारि ।
गर्भपात निहचै हुयै, कह्यो तासु निरधार ॥ ६८ ॥
गंधक अरु रसराज मिलि, वज्र योग रस राज ।
नरपति सेवत सुख लहै, भोग योग यह साज ॥ ६९ ॥
कबहुं कपट न कीजियै, फल वाको अति दुष्ट ।
मान महातम सब गलै, अंतहि उपजै कुष्ट ॥ ७० ॥
कृत्रिम से जो ठगत है, वह है कर्म चंडाल ।
हत्याकारक मनुज कुं, कहियै जाति चंडाल ॥ ७१ ॥

कृत्रिम परीक्षा :—

कृत्रिम कौ संसै पड्यौ, रत्न अछै शुद्ध अंग ।
ताहि परीक्षा कीजियै, क्षार, खटाइ संग ॥ ७२ ॥
जामै होवे कूर कछु, ताको वर्ण विनास ।
पीछै धोवो सालि जल, निकले कूर प्रगास ॥ ७३ ॥
हीरा में हीरा घसै, सब सैं बड़ो कठिन्न ।
ता कारण ए रत्न को, बज्र नाम धरि दीन ॥ ७४ ॥

अथ हीरा हीरी वर्णनम् :—

(प्रति में यह वर्णन नहीं मिला, स्थान रिक्त छोड़ा हुआ है)

॥ इति श्री हीरा प्रबन्ध प्रथम ॥

❀ मुक्ताफल विचार ❀

घन ते कर तें सस तें सीप, मच्छ अहि वश।
शूकर तें मुक्ता हुवै, आठें खानि प्रशस ॥ १ ॥

घन मोती वर्णन :—

घन मोती कवहु गिरत, हरत अपछरा वीचि।
जैसी है विजुरी चमकि, तैसी ताहि मरीचि ॥ २ ॥
सो मुक्ता सुरपुर घमैं, सुरगण ताके जोग।
मानव सं पावें नहीं, ताको उत्तम भोग ॥ ३ ॥

गज मोती वर्णनम् :—

विंध्याचल ताके निकट, वीभ महावन सोइ।
भद्र जाति हस्ती तिहा, ताके मस्तक होइ ॥ ४ ॥
दूजो स्थान कपोल तें, ए दो मुगता हीन।
लव गात्र पीयरी भनक, दुष्ट निफल कहि दीन ॥ ५ ॥

मच्छ मोती वर्णनम् :—

तिम तिमगल मच्छ के, मुख मह मोती होइ।
मानस कु नाहि मिले, देच प्रयालें सोइ ॥ ६ ॥
गुंज मान तसु गात्र रुचि, पाडल पुष्प समान।
किंचित् छाया हरित हुइ, ता सम ना कोऊ आन ॥ ७ ॥

सर्प मोती वर्णनम् :—

कोऊ वृद्ध फणिंद कै, फणधर मोती जोइ।
अति उज्वल नीली भनक, फल अशोक सम होइ ॥ ८ ॥

ताकौ धारत भूप जों, विप पीड़ा नहिं होइ।
गज बाजी सुख संपदा, जा घर मुगता सोइ ॥ ६ ॥

वंश मोती ,वर्णनम् :—

उत्तरदिशि वैताढ्यगिरि, ता ढिग है कोउ वंश।
आठ अधिक शत गंठ है, ताकी जाति सुवंश ॥ १० ॥
ताके ऊर्द्ध विभाग मे, नर मादी की जोड़ि।
ता सम मोती ना मिलै, जो खरचै धन कोड़ि ॥ ११ ॥
ता मझि देव निवास है, पूरै पूरण ऋद्धि।
गज बाजी अरु सुन्दरी, दायक ऋद्धि समृद्धि ॥ १२ ॥
तीन सांझि पूजै जुगति, धरि थिर चित्त सदाय।
रोग दोष विष वैर का, भय कबहुं नहि थाय ॥ १६ ॥
उज्वल अति द्यु ति चीकनी, वेणु कपूर मरीचि।
उग्र पुण्य के योग तें, रहिहै पुरुष नगीचि ॥ १४ ॥

शंख मोती वर्णनम् :—

उदधि बीच जो संख है, तिन सै नावत हाथ।
लघु बन्धु लक्ष्मी तणो, ता संग संपत साथ ॥ १५ ॥
संध्या रुचि सम वान है, गुण जाका असमान।
पुण्ययोग तैं सो मिल्यां, लक्ष्मीपति सो जान ॥ १६ ॥

शूकर मोती :—

बन वाराह कोऊ किहां, ता सिर मोती जाणि।
अति सुन्दर है शास्त्र में, बेर मान परमाण ॥ १७ ॥

सीप मोती वर्णनम् :—

सीप तें मोती नीपजै, सो मानत सब लोग।
मास आमोजै उपजै, स्वात जलद सयोग ॥ १८ ॥
मुक्ता आगर मात है, नाम कहुं निरधार।
जल मे जेती भात हैं, तेती जात विचार ॥ १६ ॥
सिंहलद्वीपी काहली, वारण आरब ठीक।
पारसीक बावर भलो, नाम कह्या तहतीक ॥ २० ॥
ज्योति चढै अति चिकनी, चिलक मधु सम रग।
अति वर्तुलता सोभही, सिंघल काहली अग ॥ २१ ॥
वारण आरब श्वेत है, ज्योति चन्द्र सम होत।
तामे पीरी रुचि तनक, निर्मल अधिकी ज्योति ॥ २२ ॥
श्वेत द्यु ती जु निर्मलो, पारसीक तसु जाण।
रग ज्योत कै भेद तै, च्यारु ठाण पिछाण ॥ २३ ॥
स्वर्ण सीप उदधि में, रहि हैं सूप समान।
ताको मुक्ता अति सरस, जाती फल तसु मान ॥ २४ ॥
देवै दुर्लभ होइ सो, ताके मृगमद गंध।
कोडि एक सुवर्ण को, ताहि मोल प्रतिबन्ध ॥ २५ ॥
अति परतापी क्षात से, अधिक ज्योति ता अग।
ता गुण अपरपार है, कुंकुम सम ता रग ॥ २६ ॥

मुक्ताफल के फलाफल विचार कथन :—

षट गुणी नव दोष है, तीन छाय अठ मोल।
रत्न विशारद यु कहै, सात ठाण अठ तोल ॥ २७ ॥

नव दोष कथन :—

सीप फरस रु जाठरा, मच्छ नेत्र पुन लाल।
त्रि आवर्त्त चापल्यता, म्लान दोष तसु भाल ॥ २८ ॥
दीरघ एक दिशा कह्यो, निप्रभाव निस्तेज।
वृद्ध च्यार तुछ पंच है, गिणल्यो धरकै हेज ॥ २६ ॥

चार वृद्ध दोष :—

सीप लग्यो मोती भण्यो, स्पर्श दोष तसु पोष।
मच्छ नेत्र सो देखियै, सो मच्छाक्षी दोष ॥ ३० ॥
रक्त तुच्छ जल बीचमें, सो जठरा तुम जाण।
चौथो दोष जु रक्तता, वड के च्यार पिछाण ॥ ३१ ॥
सुक्ति स्पर्श मोती भयो, सदा धरै दुख पोप।
ताकै संग तै होत नहिं, कबहुं तनिक संतोप ॥ ३२ ॥
द्रव्य हरत है जाठरा, मच्छ नेत्र दुखकार।
रक्त दोष आयु हरे, च्यारहि दोप निवार ॥ ३३ ॥

लघु पंच दोष कथनम् :—

तीन चक्र जामै वण्या, करै जु धन के नास।
बहुरंगी को दोष है, चपल कुजस को वास ॥ ३४ ॥
मलिन मध्य मली कहौ, करै जु बल की हानि।
दीरघ मुक्ता योग तें, मंदमती वह जानि ॥ ३५ ॥
तेजहीन निस्तेज तें, उद्यमता संग हीन।
पांच दोप लघु जाणि कै, ता तैं त्याग जु कीन ॥ ३६ ॥

सामान्य दोप कथन :—

देख शर्करा जलगि रह्यौ, फटी ज तामें रेख।
वेध्यो अगज दोप तें, मोल ताहि कम लेख ॥ ३७ ॥
पीरी तामें छवि परे, एक ओर गुण चोर।
सो मुक्ता कुल काम कौं, आयु हरत वह दोर ॥ ३८ ॥

पट गुण कथन :—

तारा ज्योति प्रथम्म है, द्वितीयह भारी तोल।
अति चिकनाई तीसरो, ओर कह्यौ अति गोल ॥ ३९ ॥
गात चड़े ए पाचमो, छट्ठो निर्मल तेज।
ए फलदायी जगत में, धारौ अति वर हेज ॥ ४० ॥

छाया विचार कथन :—

सेत पीतए मधु समी, कही छाई इह तीन।
एहिज छाया लीन है, ओर छाय नहिं लीन ॥ ४१ ॥
उज्वल भागे चीकणो, वर्त्तुल निर्मल तेज।
दर्पण ज्योति लीजता, कबहु न कीजै जेज ॥ ४२ ॥

मोल प्रमाण :—

गुंज एक तें दाम धरि, सात रजत सुजगीश।
दोइ गुंज सम ताहि के दाम धरौ तुम वीस ॥ ४३ ॥
तीन गुंज शत अर्द्ध है, मोल असी चिहु गुंज।
पाच गुंज द्व शत कह्यौ, चार सया छ गुंज ॥ ४४॥

सात गुंज तन सात सै, एक सहस अठ गुंज।
चौदहसै नव गुंज कौ, द्वाविंशत दस गुंज ॥ ४५ ॥

एकादश गुंजा कहै, अठावीस शत जाण।
द्वादश गुंजा मोल है, च्यार सहस्र समान ॥ ४६ ॥

तेरह रती प्रमाण है, छह सै छ हजार।
यातै वाढि तुला चढै, ताहि मोल अधिकार ॥ ४७ ॥

रत्नपरीक्षा जाणका, यह है सब को बोल।
तोल सवाया तोल है, मोलहि दुगुणा मोल ॥ ४८ ॥

तिगुण बढ्यां तें बोलियै, मोतिन तिगुणा मोल।
तीस गुंज तातें वढ्यां, ताहि चौगुणा मोल ॥ ४९ ॥

आठ तीस गुंजा चढ्यां, ताहिं पंच गुण मोल।
एक लछि ऊपर अधिक, एक सहस पुन बोल ॥ ५० ॥

मोती चौसठ गुंजको, ताहि लेत नर कोइ।
कोर एक तसु देय कै, मोल लेत है सोइ ॥ ५१ ॥

सामान्य मोल भेद कथन :—

सबगुण मोती युक्त हैं, मच्छ नेत्र कहु होइ।
ताकै गुण सहु व्यर्थ है, ताहि न ग्रहज्यो कोइ ॥ ५२ ॥

कृत्रिम परीक्षा कथनम् :—

मुक्ता कौ भ्रम मेटवा, लोन गोमूत्रहि लेइ।
सेत वसन तें बांधिकर, प्रहर च्यार धर देइ ॥ ५३ ॥

पीछै मर्दन कीजियै, हथारीं कें वींच।
कूड कपट ताकों सहृ, काढत हैं वह खींच ॥ ५४ ॥

नर मादा मोती की परीक्षा कथनम् :—

उजल विमल सुवृत्त है, सव गुण मोती धार।
निर्दूपण क्राते अधिक, सो मुगता श्रीकार ॥ ५५ ॥
अैसे मोती युग्म हे, चौवीस रती प्रमाण।
अठ चौलीसा गु ज सम, नर मादी तसु जाणं ॥ ५६ ॥

॥ इति मुक्ताफल विचार ॥

मानक व्यवहार

रोहणाचल के पास हे, अवण गगा विस्तार।
गिरि सरिता के वीच है, माणक तीन प्रकार ॥ १ ॥
तामे माणक नीपजै नील रत्न पुष्फराग।
तीनु एकहि साण मे, सग होत तिहु लाग ॥ २ ॥
पद्मराग पहिलो कह्यो, सौगधीं पुन भेद।
कुरुवदि तीजौ कह्यो, तीनु माणक भेद ॥ ३ ॥
रोहणाचल आदे कह्या, सघल डाहल ऊन।
रधर तु वर ए कह्या, तातें अविक जवून ॥ ४ ॥
रोहणाचल सहु के सिरे, सिघल कुकम जाण।
गौर्जर मध्य है, तु वर ज्ञानं न जाण ॥ ५ ॥

रंध्र खान सो अधम है, नाम मात्र मण जाण।
रंग रूप तामै नहीं, उपजै मणकी खाण ॥ ६ ॥

चार खान का वर्ण कथन :—

पद्मराग अति सोभहि, चिकनी द्युति अति लाल।
निर्दूषण शोभै भलो, रोहणाचल ते भाल ॥ ७ ॥
पद्मराग लाली लियै, सिंघल ताकौ थान।
डाहल पीरी झांइ है, रंध्र ताम्र सम वान ॥ ८ ॥
हरित प्रभा तैं जाणियै, तुंवर मणि की खान।
क्रांति राग कुं देख कै, सब कै आगर जान ॥ ९ ॥

सोलह छाय दश दोष कथन :—

माणक तीनु वर्ग के, ताके भेद विचार।
सोल छांय दस दोष है, मोल जु तीस प्रकार ॥ १० ॥

दस दोष विचार :—

प्रथम विछाय द्विपद है, भंग जु कर्कर धारि।
मंस खंड पंचम लसुन, कोमल जड़ता धारि ॥ ११ ॥
धूम्र दोष चीरी दसम, वरणु तासु विचार।
धार्यै ता संग ऊपजै, सुणज्यो सो अधिकार ॥ १२ ॥
त्रि छाया इकठी मिलै, अथवा छाया हीन।
बदन विछाई ताहि सैं, देश त्याग कहि दीन ॥ १३ ॥
जैसो पाव मनुष्य को, ता सम लंछन होइ।
द्विपद दोषी सो कह्यो, कचडी मुंहगो सोइ ॥ १४ ॥

सौगंधी वर्णनम् :—

केसर लक्षा हींगलू, अैसी छाय सौगंधि ।
कछु झाई नीली लियैं, छवि लाली अनुबंध ॥ ३४ ॥

सामान्य भेद :—

कान्तिराग छाया सहु, मैल होत सब तीस ।
मोल भेद पहचान कै, धारै अधिक जगीस ॥ ३५ ॥
काति रग उर्द्ध गती, और अधोगति जान ।
पार्श्व गती रग होत है, तीनु अधम वखानि ॥ ३६ ॥

रग विश्वा ज्ञान कथन :—

पद्मराग के रग का, विश्वा जाणन हेत ।
रत्नपरीक्षा शास्त्र मे, एहिज धर्यो सकेत ॥ ३७ ॥
मणि विश्वा जाणे विना, मोल न जानत मूल ।
रगभेद बूझ्या विना, ताकी न मिटत भूल ॥ ३८ ॥
ता काजै इक मु करमे, धरियै सरस्यु सेत ।
ता पर गु जा एक सम, मानक धरियैं हेत ॥ ३९ ॥
प्रात समे रवि किरण ते, ताकी प्रभा निहाल ।
ताहि प्रभा तैं कणदवै, तेता विश्वा माल ॥ ४० ॥
अैसी भाति निहाल के, गिणीयैं विश्वा रग ।
गात रग विश्वा गिणी, धरियै मोल सुचग ॥ ४१ ॥
ब्राह्मण विश्वा च्यारतैं, क्षत्रिय विश्वा तीन ।
वैश्य दु विश्वे जाणियें, शूद्र हि एकज लीन॥ ४२ ॥

माणक मोल कथनम् :—

माणक च्यारा ओर सु, पिंड होइ जब एक ।
द्वे शत मोल कहीजिये, ताको धरिय विवेक ॥ ४३ ॥

पद्मराग के मोल सैं, भाग चतुर्थ जु ऊन ।
कुरुवंदी कु जाणियै आध सौगंधि जबून ॥ ४४ ॥

एकै यव तें घाट है, एक ही यव तें वाढ ।
यव तें आठ प्रमाण लौ, दुगुणा दुगणा बाढ ॥ ४५ ॥

सौगंधी मत भेद सें, ऊरध गुन जो होइ ।
मोलै आठ गुनौ कह्यौ, इस मैं भूल न कोइ ॥ ४६ ॥

मध्य गुनी को मोल है, निश्चय सैं सत पांच ।
दैन लैन को मोलहै, मैं कहि दीनौ साच ॥ ४७ ॥

घाट सुघाटै ज्यु बढै, ताहि मोल अधिकाइ ।
घाट वर्ण तें हीन है, त्यों त्यों मोल घटाइ ॥ ४८ ॥

क्रांति एक सरस्यु चढै, द्वे शत चढियै मोल ।
एक सरस्यु हीनतें, द्वे शत घटता बोल ॥ ४९ ॥

उत्तम आगर को बन्यो, होइ जु लछन हीन ।
तोल वाधि मोलै चढै, यामें मेख न मीन ॥ ५० ॥

मानक हरुओ हीन है, हीरो हरुवो बाढ ।
हीरो भारी हीन है, मानक भारी बाढ ॥ ५१ ॥

कुरुवंदी सौगंध ते, पद्मराग गुन वाधि ।
हीन छाय ना होइ तौ, ताको गुन अति लाधि ॥ ५२ ॥

अच्छा माणक देत, है, ऋद्धि रमण भंडार।
शत्रु सवै भागे फिरै, ता संग तेज अपार ॥ ५३ ॥

परीक्षा कृत्रिम की :—

माणक देख्या काहु कै उपज्यो कुछ संदेह।
कृत्रिम कै संसय पड्या, करो परीक्षा एह ॥ ५४ ॥
खरी दोई ताकु घसौ, जे न होइ अविरुद्ध।
मन का धोखा टालिकै, मोल ग्रहौ यरि बुद्ध ॥ ५५ ॥
पद्मरागरू नील मे, वज्र करत है लेख।
वज्र विना जे रत्न है, यातें अधिक न देख ॥ ५६ ॥
मुसका चिहु विस्वा लगं, ता पर चूनी जाण।
चूनी विस्वा वीस लौं, माणक ता पर ठाण ॥ ५७ ॥
एक गुंज ते आठ ले, गुंज गुणो त्रय वीस।
पंच दश विस्वा अधिक, माणक ताहि कहीस ॥ ५८ ॥
पाद हीन चौवीस लौं, माणक होइ वहाल।
तातैं अधिको जो चढयो, ताकु कहियइ लाल ॥ ५९ ॥

इति श्री मुसका चूनी मानक लाल विचार कथनम्।

———

नील रत्न विचार

ाणक जेती खान है, तेती खान जु नील ।
र्ण च्यार ताके कहुं, सुनत न कीज्यो ढील ॥ १ ॥

ेवेत छवी ब्रह्मा कह्यौ, क्षत्रिय रक्त पिछान ।
ीत प्रभा से वैश्य है, शूद्र जु श्याम पिछाण ॥ २ ॥

च्यार गुण छ दोष है, छाय एकादश भेद ।
सोरह भेदे मोल है, गिणल्यो धरि उमेद ॥ ३ ॥

च्यार गुण वर्णनम् :—

पहिले भारी गुण कह्यौ, चिकनाई अति ज्योति ।
रंजक गुण के योग ते, ए च्यारे गुण होत ॥ ४ ॥

श्वेत वस्त्र ऊपर धर्या, वस्त्र प्रभा होइ नील ।
सब में उत्तम ते कह्यौ, रंजकता होइ सील ॥ ५ ॥

उत्तम गुण नीला कह्यौ, लखमी दायक जाण ।
एकादश छाया कही, ताका करत वखाण ॥ ६ ॥

एकादश छाया कथन :—

नारायन कै रंग सम, मोर भमर की पांख ।
शुक कंठ पिक कंठ सी, सैन गऊखी आंख ॥ ७ ॥

फूल पात सरेस कै, अरसी फूल समान ।
एकादश छाया कही, नील नीलोत्पल वान ॥ ८ ॥

सेन गऊ के नेत्र की, ए दोइ छाय विरुद्ध।
जेती छाया नील महि, ओर कही सब सुद्ध ॥ ९ ॥

दुग्ध लेहु गो भैंस कौ, निसभर ताके बीच।
दुग्ब होत नीली छबै, ताकु मन धर खीच ॥ १० ॥

इन्द्रनील मणी कह्यौ, चद्र रेख तिन माहि।
ता मण के सयोग ते, दुख दूर न्हसि जाहिं ॥ ११ ॥

ढाकत दूजै रगकु, रजक अपनै रग।
बाढ मोल ताकौ लहै, मणि है सोइ सुचग ॥ १२ ॥

नील रत्न गुण युक्त है, निर्दोषी सुविवेक।
ताकौ मोलज पचसै, पिण्ड वण्यो यव एक ॥ १३ ॥
एक पक्ष रजक धरे, दूजै पक्ष रग हीन।
तेजवत चिकनी चिलक, ताकु उत्तम चीन ॥ १४ ॥

तीन अवस्था :—

हिम सींच्यौ सूर्य उदै, शोभत अलसी फूल।
बाल कहो ता रग सें देखत क्रान्ति न भूल ॥ १५ ॥

वही फूल दुपहोर मे, उपाय रूक्ष रुचि छीन।
वही रग नीला धरें, वृद्धि ताहि कहि हीन ॥ १६ ॥

सूर्य अस्त समै बनी, अलसी फूल जु छाय।
जैसो जल सेवाल है, सो परिपक्व कहाय ॥ १७ ॥

च्यार दोष कथन :—

अभ्र छाय पुन कर्बुरो, रेख भंग बिंदु लाल।
मिटी उपल मध्य है, मंस खंड पुन जाल ॥ १८ ॥

अभ्र छाय जो नील कुं, धरे नरेसर कोई।
तापर उलकापात हो, वंश अचानक खोइ ॥ १९ ॥

कर्बुर दोषी संग तें, रोग असाध लहेइ।
रेख दोष तन पीत हुइ, वाव वयाल भखेइ ॥ २० ॥

भंग दोष नीला धर्यों, नर पुरुषारथ जाइ।
नारी धारन जो करै, तसु भरता मरजाइ ॥ २१ ॥

रक्त बिन्दु अति दुष्ट है, ताहि न धरज्यो कोय।
मध्य मिटीया दोष है, मांस सरीरहि खोय ॥ २२ ॥

मध्य पाषाणी दोसतै, लगैजु मस्तक घाव।
रेण भंगी ता संग तै, लगै जु दुर्जन दाव ॥ २३ ॥

मंस खंड कै योग तै, हरै जु संपति सुख।
आधि व्याधि चिन्ता करत, पुन देवहि अति दुख ॥ २४ ॥

भांति भांति के होत है, पृथवी मांहि पाषाण।
शुद्ध मणी वैही ग्रहै, रतन परीक्षा जाण ॥ २५ ॥

शुद्ध नील के संगतें, वाधत लच्छि अभंग।
शनि पीड़ा व्यापै नहीं, यश सोभाग सुचंग ॥ २६ ॥

॥ मरकत विचारो लिख्यते ॥

च्यार जाति पन्ना कह्यो, प्रथम गरुडोद्गार।
इन्द्रगोप वश पत्र सौं, चवथो थूथाधार ॥ २६ ॥
गरुडोद्गार सदा भलो, इन्द्रगोप सुखकार।
लक्ष्मी संपद पूरवै, मेटै विषहि विकार ॥ ३० ॥
भाग्यवंत कु मिलत है, मरकत जे निर्दोष।
बारह छाया पंच गुन, सात कहै तिहि दोष ॥ ३१ ॥

सात दोष कथन :—

रूखो फूटो मलिन है, ककर मध्य पाषाण।
सिथली जठडा दोष है, करज्यो ताहि पिछाण ॥ ३२ ॥
रूक्षै राक्षा उपजत, शीघ्र रोग तसु अंग।
भगद रिण मे भग है, लगै घाउ सिरभंग ॥ ३३ ॥
मध्य पाषाणी संग तैं, बंधव वनिता वैर।
अबा बोला दोहिला, ए सहु मलकी लैर ॥ ३४ ॥
पुत्र मरण ककर करै, जाठर सिंघ सरुप।
शिथला दोषी संग तैं, गलै महातम दर्प्प ॥ ३५ ॥

पन्ना गुण कथन :—

गात वडै जु स्निग्धता, स्वच्छ हरियाइ अंग।
क्रांति वडी अखड है, पुन है रजक रंग ॥ ३६ ॥
गात वडै मोलैं वडो, अति स्निग्ध बहु मोल।
हरी कान्ति यादा हुवै, वढती ताहि सु मोल ॥ ३७ ॥

नीलोत्पल पत्रै ठव्यो, दीसत स्वच्छ शरीर।
स्वच्छ गुनी ताकूं कहौ, जानहु लिछमी वीर ॥ ३८ ॥
क्रान्त बड़ी सोई लहै, दायक अधिकै मूल।
गात अखंडित ताहि कौ, गिणतां मोल न भूल ॥ ३९ ॥
रंजक सूर्य सामुहौ, धरके करो विचार।
क्रान्ति हरीं ताकी अधिक, सो कहु रंजक सार ॥ ४० ॥

छाया विचार :—

सूवा मोरां चांस पिछ, थूथ सोवा दूव छाय।
पता फूल सरेसका, वेणु पत्र वतलाय ॥ ४१ ॥

ए सहु छाया मैं कही, पन्ना रतन मझार।
तामें भेदा भेद कर, च्यारूं वरण विचार ॥ ४२ ॥

नीली छायै श्याम कंति, थूथा रंग समान।
नील श्याम ताकी कही, पहिली जात बखान ॥ ४३ ॥

रंग हर्यै छबि श्वेत है, सरेसपत्र सम वान।
सेत श्यामता नाम है, दूजी जात सुजान ॥ ४४ ॥

शुक पिच्छ सम रंग है, कंति सुवर्ण सरीखि।
पीत नील ताकौ कहौ, तजी जाति परीख ॥ ४५ ॥

स्नेह द्युती वर्णै हर्यौ, तनक तनक सेवार।
जात चतुर्थी एकही, रक्त नील निरधार ॥ ४६ ॥

पन्ना इतनी भांति का, नर पावै बड़ भाग।
मंद भाग्य कुं ना मिलै, धारक सकल सोभाग ॥ ४७ ॥

चक्रवर्त्ती के योग्य है वासुदेव पद लाग ।
रत्न काकणी सो इहै, धार्यै सकल सोभाग ॥ ४८ ॥
कोट सुवर्ण है ताहिकौ, पद्मराग सम मोल ।
थावर जगम जे सहु, विष निर्विषता बोल ॥ ४९ ॥

मोल गुण कथन :—

सेत श्याम शुक पिच्छ सो, विस्तीरण गुण सग ।
दीसत तामैं पद्म जिम, ताहि मोल बहु चग ॥ ५० ॥
जैसा फूल सरेस का, वर्णकहु तसु साच ।
एकादश शत मोल है, पिड होइ यव पाच ॥ ५१ ॥
रग हीन जु होइ तौ, ताहि मोल शत पाच ।
छाया वर्ण विचार कै, ताहि मोलकरि जाच ॥ ५२ ॥
अैसे यव की बाढता, बुद्धिवत कहि देत ।
यव आठाकौ मोलहै, सहस चौसठै हेत ॥ ५३ ॥
जो अनेक रगें वर्ण्यौ, लछन गुन सें हीन ।
ताका देवो पच शत, देत न होइ मलीन ॥ ५४ ॥

कृत्रिम परीक्षा :—

बुधहु चित मे उपज्यो, शुद्ध अशुद्ध विचार ।
अैसे भ्रम कु मेटवै, ताहि सुनो उपचार ॥ ५५ ॥
पाथर सग मलीजियै, भजे नाहि अविरुद्ध ।
तातै वह पिछाणियै, जाति चरण ते सुद्ध ॥ ५६ ॥
महारत्न पाचू कहे, मुगता हीर पद्म ।
नीला मरकत पाचमो, ताहि ग्यौ सहु मर्म ॥ ५७ ॥

॥ अथ चार उपरत्न विचार ॥

पुष्कराग गोमेद है, लहसुनिया प्रवाल ।
ए उपरत्न चिहुं कह्या, गुण सुणज्यो तत्काल ॥ १ ॥

(१) पुष्कराग वर्णन :—

पुष्कराग चिहुं भेद है, जरद (१) सोनेला(२) जाण
धनैला (३) कर्केतनी (४) चारू लेह पिछाण ॥ २ ॥

पुष्कराग रंग वर्णनम् :—

पीत रंग पुष्कराग है, सणकै पुष्प समान ।
निर्मल कांति पराग युति, चिकनाइ संगवान ॥ ३ ॥
निर्दोषी वर्ण विशद, कोमल अंग सुरंग ।
स्वच्छ मनैं अर्चा कियै, ता घर लच्छि अभंग ॥ ४ ॥
पुत्रलाभ ता संग तैं, सब संपति कौ वास ।
नृप संतोष धरै सदा, जस ताको जग खाश ॥ ५ ॥

(२) गोमेदा वर्णनम् :—

गोमेदक तासौ कह्यौ, वह गोमूत समान ।
गात बडै अति निर्मलो, चिकनी द्यु ति ए जान ॥ ६ ॥

चार वर्ण वर्णनम् :—

ब्राह्मण वर्णे सेत है, क्षत्रिय होत अरन ।
वैश्य पीयरे जानियै, शूद्र जु श्याम वरन ॥ ७ ॥
पीरी छबि ताकी सरस, विशद गात है जास ।
गोमेदा उत्तम कह्यौ, मोल अधिक है तास ॥ ८ ॥

(३) लहसनीया वर्णनम् :—

तीन क्षेत्र पहचानियैं, प्रथम लहसन के सार।
कनक क्षेत्र धु क्षेत्र है, पुष्पराज सिरदार ॥ ९ ॥

कनक क्षेत्र सब में अधिक, धु पुष्पराज जु हीन।
क्षेत्र एह लहसुन के, गिणल्यो धुरतैं तीन ॥ १० ॥

म्लेच्छ खड के मध्य में, श्येनक आगर एक।
तामे लहसुन ठानिये, सधि सूत्र सुविवेक ॥ ११ ॥

पीत प्रभा जामे अधिक, मोर ग्रीव के रग।
कनक क्षेत्र है ताहि कैं, सधि सूत्र तिहि सग ॥ १२ ॥

मार्जारी के नेत्र सम, झलकत तेज अपार।
अधारी निश के समे, चिलकै तेज अगार ॥ १३ ॥

कर्कोटक ते जाणिये, कठिन चीकनै अ ग।
अति ही कान्ति विशाल है, ता सम्मिसूत्र सुचग ॥ १४ ॥

एक दौढ अथ दोइ है, कहू अढाई सूत।
शुद्ध सूत्र ते जानियै, महालक्ष्मी को पूत ॥ १५ ॥

सूत नेत्र दोनु नहीं, झलकत तारा जेम।
जबरजद सोनाम है, मध्य गुनी कहो पेम ॥ १६ ॥

तातै हीन जु क्रान्त है, उज्वल वस्त्र समान।
अधम गुनी सो होत है, कहियै चदरी थान ॥ १७ ॥

अथ प्रवाल अपरनाम मुंगा वर्णनम्

सिन्धु बीच पूरब दिसै, हेंम कुंदला सेल ।
मुंगा तहां निरंतरे, ऊगत है अति फैल ॥ २० ॥
रंग दुपुहरी फूल सो, दार्यों कुसम समान ।
जैसो फूल कणेर को, पुन सिन्दूर कै वान ॥ २१ ॥
पाहण जेम कठोर है, धरै स्वाभावक रंग ।
कीटक संगी ना हुवै, सो परवाल सुचंग ॥ २२ ॥
मुंगा सीढी पांच है, रंग भेद बाईस ।
कल रंगा पहला कह्यौ, सहज रंग पभणीस ॥ २३ ॥
मिट्ठ रंगा अरु पांवरा, फीका पंचम जाण ।
घोर उतारस मिट्ठरंग, पांवर फींका माण ॥ २४ ॥

॥ इति प्रवाल समाप्तम् ॥

नवरत्न के रंगवर्णनम्—

हीरा मोती स्वेत लाल माणिक्क वखाणौ ।
नीला रंग है श्याम हरी छबि पन्ना जाणो ॥
सेत पीत गोमेद पुष्कराग तन पीरे ।
ल्हसुनी नेत्र बिलाव कह्या मूंगा सिन्दूरे ॥
नवे रत्न नवरंग है, रत्न परीक्षा जाण;(नर) ।
बाणीं एह सुचंग है उत्तम गुणको खाण ॥ २६ ॥

नवरत्न के स्वामी वर्णन कवित—

माणक स्वामी सूर्य, चंद्र मोती वखाणो ।
मगल मु गा स्वामि, ईश पन्ना बुध जाणो ॥
देव गुरु पुष्कराज असुर गुरु हीरा स्वामी ।
इदनील को ईश राहु गोमेदक धामी ॥
लहसुनिया केतज कहै ।
सकल मनोरथ नितफलै । नव रत्न स्वामी कहै ॥ २७ ॥

नवरत्न के घर वर्णनम्—

॥ दोहा ॥
वत्तु'ल च्यार त्रिकोण है, नाग पत्र पच कोण ।
आठ कोण गाडा समो सूर्यदिक ए भौण ॥ २८ ॥
सूप समो घर राहुको, केतु धजा सम होइ ।
यही भाति विचार के, नव घर दिनप्रति लोइ ॥ २९ ॥

नवग्रह परच उच्च अश वर्णनम्—

॥ कवित्त ॥
मेष दश वृष तीन गिणहु मकरै अठवीसह ।
कन्या से गिण पनर कर्क के पच गिणीसह ॥
मीन गिणौ सतवीस तुला के वीस पिछाणौ ।
मिथुन पनरै गण लेहु धणह पिण पनरै जाणु ।
अनुकम ग्रह जाणी करौ ।
मुद्रा पुहची जुगत सें नर नरिंद निहचै धरौ ॥ ३० ॥

नवग्रह उच्च राशि वर्णनम्—

सूर्य मेषें जाणियै चंद्र वृपै उच्च जाण।
मंगल मकरै उच्च है कन्या बुध पिछाण ॥ ३१ ॥
कर्कें वृस्पति जाणियै शुक्र मीन ते उच्च।
एही मगतें जाणियै तुल तै होइ शनि रुच्च ॥ ३२ ॥
राहु मिथुन कौ उच्च है धन कौ केत पिछाण।
नौ ग्रहां की अनुक्रमें उच्च राशि ए जाण ॥ ३३ ॥

नवरत्न जड़नै का विचार वर्णनम्—

प्रथमै एक बनाइयै, वर्त्तुल गोल आकार।
तामै नव घर धारियै, विच घर माणक धार ॥ ३४ ॥
तापर पूरव दिश धरौ, गिणलो श्रेष्ठ प्रकार।
श्रेष्ठ धरै नव रत्न कुं, ता घर लच्छि अपार ॥ ३५ ॥
पूर्व अग्नी दक्षणी नैऋत, वायव्य पच्छिम जाण।
उत्तर दिग् ईशान लौ, ए दिशि आठ वखाण ॥ ३६ ॥
हीरा मोति प्रवाल धरि, गोमेद नीलक धारि।
ल्हसनिया पुष्कराज तें, पन्ना धारि संभारि ॥ ३७ ॥
परम उच्च जा दिन हुवै, तादिन जरियै सोइ।
अही भांति नौ रत्न जर, धारन करौ स कोइ ॥ ३८ ॥
दुःख सोग दूरैं हरै, दायक अभिनव ऋद्धि।
नव ग्रहै धारन किया, पुत्र कलत्र अति वृद्धि ॥ ३९ ॥

॥ इति श्री नवरत्न विचार संपूर्णम् ॥

नौरत्न नाम तादृश वर्ण—

हीरा १ तुलमीरी २ (पचरंगी) माणक २१ मछली २

पन्ना १ मरगज २ (पचछाय) मोती १ लीला १ लाली २

पच छाय पुखराग १ मोनेला २ ॥

घोनेला ३ पचछाय ॥ लहसणिया १ ॥

जबरजद २ ॥ गोमेदा १ ॥ पचछाय ६

इति नवरत्न नाम विचार ॥ शुभमवतु ॥

॥ ॐ नम ॥

॥ छूटक रतन विचार लिख्यते ॥

स्फटिक रत्न विचार कथनम्—

फाटिक च्यार प्रकार है, सुणज्यो ताम प्रबन्ध।
फाटिक है कान्ते कनक, घन रुचि है सोगध ॥ १ ॥
सूर्यकान्ति १ शशिकाति २ है, हसकांति ३ जलकाति ४ ॥
ताका गुन मे कहत हु, मन मत धरजो भ्राति ॥ २ ॥

सूर्यकान्ति गुण वर्णनम्—

सूर्यकान्ति मणि लेइ करि, उजल रुत तल लेइ।
अग्नि झरत ता मध्य तें, ततखिण झाल उठेइ ॥ ३ ॥

चंद्रक्रान्ति मणि गुण वर्णनम्—

ग्रीष्म रित में नर कहुं, अति तृष व्यापति होइ।
चन्द्रकान्ति मुख में धर्या, तिरषा मेटति सोइ ॥ ४ ॥

हंसगर्भ गुण वर्णनम्—

थावर जंगम विष थकी, न व्यापत कोउ होइ।
हंसगर्भ जल खोल करि, पावत निर्विष होइ ॥ ५ ॥

जल क्रान्ति मणि गुण वर्णनम्—

जलक्रान्ति वंशाग्र धर, धरो जु जल के बीच।
नीर फटै चिहुं ओर कौ, ताहि न लागै कीच ॥ ६ ।

रत्न चिन्तामणि गुण कथनम्—

हीराक्रान्ति समान द्यु ति, दोष रहित निज अंग।
षट कौनौ हरवौ तिरत, टांक सवा शुभ रंग ॥ ७ ॥
जा घरि चिन्तामणि रहै, तीन सांझि तिहि ठौर।
अरचाकरि फल लीजियै, ओरन की कहा दार ॥ ८ ॥

पीरोजा लच्छनम्—

॥ चौपाई ॥

पीरोजा जो पीयरें रंगि, निर्मल दीठ करत तिहि संगि।
भाग्य जगत् अरु भजत दरिद्द,
वढत प्रताप करत रिपु रद्द ॥ ९ ॥

सोऽभाग्य अधिकारी कह्यौ, सो प्रधान नर शास्त्र हि लह्यौ।
तिहि रणमाहि न जीतहि कोइ,
जिहा विवाद तिहा विजयी होइ ॥ २२ ॥
अग्नि जाजात रहै न लगै घाउ,
यह नरमणि फलको कहै दाउ।
पढै गुनै सो होइ सग्यान, सुनत नराधिप द्वै तसु मान ॥ २३ ॥

॥ इति नरमणि विचार ॥

रत्नशिक्षा कथन—
रत्न जाति जेती विध कही, ताकी रारान की विधि यही।
सहज्य वर्न्यौं त्यों ही राखिवौ,
धा करन घसिवौ धासिवौ ॥ २४ ॥
कवहौ लोहन घसीइ सोइ, स्याम रदन छेदन तें खोइ।
धरन मठारन गुन की हानि,
ग्यान विशारद गुरु की वानि ॥ २५ ॥

॥ इति रत्न धारन शिक्षा कथन सम्पूर्णम् ॥

———

॥ चौरासी रत्न नाम ॥

पद्मराग (१) पुष्पराग (२) गिनहौ पन्ना (३) कर्केतन (४)।
वज्र (५) अनै वैडूर्य (६) चंद्रकान्ते (७) वलि मनि भन ॥
सूर्यकान्ति (८) मनीश नवम जलकान्ति (९) कहीसह।
नील (१०) अने महानील (११) इन्द्रनील (१२) सुजगीसह।
रोगहार (१३) ज्वरहार (१४) है। विभवक (१५) विषहर (१६)
शूलहर (१७) शत्रुहरन (१८) सिरदार है ॥ १ ॥
रुचक (१९) अनैराग कार(२०)लोहिताक्ष (२१) अरुविद्रुम (२२)
मसार्गल (२३) हसगर्भ (२४) विमर (२५) अंक (२६)
अंजनभ्रम (२७) अरिष्ट गिनौ अठवीस (२८) शुद्धामुक्ता (२९)
श्रीकान्तह (३०) शिवकर (३१) कौस्तुभ (३२) प्रभानाथ (३३)
शिवकंतह (३४) वीत सोग (३५) महाभाग (३६) है।
सौगंध (३७) रत्न गंगोदमणि (३८) प्रभंकर (३९)
सौभाग है (४०) ॥ २ ॥
अपराजित (४१) कोंटीय (४२) पुलक (४३) सुभग (४४)
नें धृतिकरि (४५)।
ज्योतिसार (४६) गुणमाल (४७) स्वेतरुचि (४८)
अरु पुष्टिकर (४९) ॥
हंसमाल (५०) अंशमालि (५१) पुनः भणियै देवानंदह (५२)

गिणियै फाटिक खीर (५३) तेल फाटिक (५४) युति चन्द्र (५५)
नरमैंडक मणि (५६-५७) जाणियै ।
गरुडोद्गार (५८) भुयग मणि (५६)
चिन्तामणि पहिचानियै (६०) ॥ ३ ॥

॥ मधुकरमणि व्यवहारो ॥

अनेक रूप अनत गुन, चिदानद चिद्रूप ।
भयभजन गजन अरी, रजन सकल सरूप ॥ १ ॥
ताहि नमनकरके गुनहु मणिके भेद विचित्र ।
जाके रूपरु गुन सुन्या, लहत भूप घर चित्र ॥ २ ॥
दक्षिण दिश रेवा नदी, वहैजु अति गभीर ।
रत्न पहार तहा रहै, गिरवर मडन धीर ॥ ३ ॥
तहा गरुड उद्गार तें, महानदी मणि काल ।
चली ज्यौति परकास कर, पाप पवन भख व्याल ॥ ४ ॥
नाम हिमा तें प्रगट हुई, मणी जु नाना रूप ।
भोगरु मोच्छद गढहरन, सुकल गुनन कौ कूप ॥ ५ ॥

॥ चौपाई ॥

प्रथम मत्रमय देह वनाय, गो जीभी रस लेपहु काय ।
पाछहि रत्न परीक्षा करौ, शास्त्र वचन मन मे यह धरौ ॥ ६ ॥
तप्त हेम सम वर्ण जु होइ, नीली रेखा जामहि कोइ ।
सेत रग धर रेखा पीत, रक्त रेख घर धरियै चीत ॥ ७ ॥

श्याम रेख जामे परछाइ, नीलकंठ ता नाम कहाइ।
ज्ञान भोग सों देत जु घनौ,
दीरघ जीवत कर यह हम सुनौ ॥ ८ ॥
यो मनि हुय नक्षत्र कैमान, सेत रेख ता मध्य कहात।
सो मनि राखत होत कवीस,
वढत आयु सुख भोग जगीस ॥ ६ ॥
यो मनि कारी लियैं रेख, विल्ली नयन समौ फुनि देख।
सोई करत धन लाभ अनेक, यह राखन कौ धरहु विवेक ॥१०॥
मणि जो लाली तन में धरै, अरु पारद रुचि तनकिकपरै।
इन्द्रनील रेखा छवि सेत, द्रव्य देव ताकौ संकेत ॥ ११ ॥
शुद्ध फटिक सम रूप जु होइ, नीली रेखा तामैं कोई।
बिष्णु रूपना मानिक कों नाम,
देत राज मन पूरन काम ॥ १२ ॥
कृष्ण बिन्दु या मणि के मध्य, सो मनि पूरत सगरी सिद्ध।
पीत श्वेत रेखा नहीं वनी, स्वच्छ नाम ताही कौ गिनी ॥१३॥
बन्यौ कबूतर कंठ समान, ता महि सेत सिंदु ठहरान।
ताकौ दृढ चित करि जो धरै, ता तनकी विप पीरा हरैं ॥ १४॥
सारंग नयन समी रुचि याहि, महा मत्त गज नेत्र लखाइ।
श्वेत बिंदु कबहुं तहां रहै, ताको विपहर सद्गुरु कहै ॥ १५ ॥
केइ हयैं केते हैं लाल, के दामिनि शुभ रुचि सुविशाल।
के पिक लोचन छाया वने, ए सबहिन के गुन यौं सुने ॥ १६ ॥
करि बांधत कोऊ नरराज, भूत प्रेत व्यंतर सब भाजि।
जात ओर पीरा तिहि टरै, पृथवीपति जु प्रीति वहु करै ॥१७॥

नाना रग वरत तन माझि, नाना रेखन की तहा झाकि।
विन्दु अनेक परे तनुवहौ, नाग दर्प हर ताहिज लहौ ॥ १८ ॥
लाभकरन दुखहरन जु सुन्यौ, हम अपनी रुचि ताकौ वन्यौ।
कहत ईश जग सुख के काजि, सबै उपद्रव टरत अकाज ॥१६॥
नील वर्ण सु दर तनु भयौ, विन्दु पाच गुन ताकौ ठव्यौ।
निर्मल अग छाय तिहि लाल,

वृत्त गरुड सुन कहौ अन आल ॥ २० ॥
जो सिंदूर छाय तनि गहै, रेखा सु दर तामे रहै।
कृष्ण वर्ण कछु लीयै सरूप, टारत विप अमृत गुन रूप ॥ २१॥
कासी रग वरत मनि कोइ, नानाविधि रेखा बहु होइ।
विन्दु भाति भातिन के वने, ज्वर नाशन गुन ताके गिने ॥२२॥
पीयरी छाया लेत अनूप, रेखा द्वै ता मध्य सरूप।
सेतविन्दु तिहि मध्यहि परै, विच्छू विप उतरै कहु डरै ॥ २३ ॥
इन्दनील सम याकी सोभ, सेत पीत गुन रेखा सोभ।
नेत्र रोग टारत यह शूल, जल पीवत ताकौ जन भूलि ॥ २४ ॥

॥ दोहा ॥

श्वेत पीत रेखा वनी, हरित वर्ण तन छाय।
ताको जल पान जु कीन, विप सव देत वहाय ॥ २५ ॥
गिहौ वर्ण पीयरी तनिक, गज नयन सम तात।
सेतविन्दु ता मध्यगत, मिटत अजीरन पात ॥ २६ ॥
लाली आधे तनि लीइ, अर्द्ध रहत पुनि श्याम।
रक्त शूल वक्ष (चक्षु) हर, कहौ सही गुन वाम ॥ २७ ॥
निर्मल स्फाटिक सौ वन्यौ, तनक श्याम कछु लाल।

विप बीछु काटत पुरत, मेटत तनु दुख जाल ॥ २८ ॥
अर्द्ध कृष्ण पुनि अर्द्ध महि, लाली उजरी छाय ।
तनक परत सब विष हरत, कहत गुनी ठहराय ॥ २६ ॥
रक्त देह पुनि रेख तिहां, रक्त बनी शुभ छाय ।
भमर परत ता मध्य यह, गरुड़ नाम ठहराय ॥ ३० ॥
यातें सर्प रहै कदा, ओर विपनि कहा वात ।
सूर उदय तम ना रहत, गुन इह कहायत भ्रात ॥ ३१ ॥
पीत अंग पीरी परी, रेख रक्त पुनि ताहि ।
सकल रोग हर जानियै, मृगनयनी सुखदाय ॥ ३२ ॥
पीयरे तन कारी परत, रेख बिन्दुअन लेख ।
मेटत विष अहिराज कौ, ओरन कौन विशेष ॥ ३३ ॥
कूष्मांण्डी फूलन भनक, तासें बिन्दु अनेक ।
रोग सकल नयना हरत, यह गुन याकी टेक ॥ ३४ ॥
रक्त वर्ण बहु बिन्दु युत, तेज पुंज तिहि देह ।
ए सब विषनासन कहौं, यासैं नहिं संदेह ॥ ३५ ॥
विंदुनाभ यह नाम मनि, महा तेज तिहि मांझि ।
कृष्ण बिन्दु भूषित सकल, रोग हरन गुन सांझि ॥ ३६ ॥
आम्र फल समान रुचि, ता महि कारे बिन्दु ।
सोइ पुत्र सुख देत तुम्ह, कुल कुमुदन को इन्दु ॥ ३७ ॥
दायौं पुहफ समान द्युति, कृष्ण विंदु कन आन ।
सो सौभाग्य करै प्रिया, यह गुरु वच परमान ॥ ३८ ॥
कुंद फूल सम मनि वन्यौ, वन्यौ वृत्त आकार ।
सो विष मर्दन जानियै, गुरुवचननि अनुहार ॥ ३६ ॥

छागल नेत्राकार मनि, मजारी नयनाभि ।
गरुड तेज सम तेज है, पूजत पइयत लाभ ॥ ४० ॥
मनि मयूर चित्रज वर्न्यो, कठ्यक स्फाटिक ज्योति ।
सो सब राजा ताहि कै, मन वञ्छित फल होत ॥ ४१ ॥
मनि शुक पिच्छ समान है, सेत विन्दु तिहि माझि ।
विघन कोरि मेटत मनी, अरिनि सकैत न गाज ॥ ४२ ॥
पारद वरन समान रुचि, ता महि उजरी रेख ।
आयु वढत ता सग ते, या महि मीन न मेख ॥ ४३ ॥
सकल वर्ण या रत्न महि, नाना रेख सरूप ।
अर्थ विविध पर देत सो, मान देत वर भूप ॥ ४४ ॥
विविध रूप धर विविध मनि, दीसत है जग माहि ।
ते सब गरुड समान है, विष मर्दक गिन ताहि ॥ ४५ ॥
उदर मध्य उजरी भनक, कृष्ण वर्ण तिहि पीठ ।
सर्प सरूप वर्न्यो सरस, विष नासत दग दीठि ॥ ४६ ॥

॥ चौरासी संग जाति वर्णन ॥

१ एमनी, २ हकीक, ३ दाहिण फिरग, ४ पारस, ५ रेसम, ६ सलहमानी, ७ कपूरी, ८ पन गम्म, ९ बाफेल, १० फिटक, ११ विलोवर, १२ दतला, १३ तुलमिरी, १४ सोनेला, १५ धोनेला, १६ तावडा, १७ लाजवर्द, १८ जबनीया, १९ गोदता, २० तन जावरी, २१ नेसावरी, २२ भसमी २३ बाबागोरी,

२४ गोरी, २५ जबरजद्द, २६ मरगज, २७ दहीयल, २८ वागुर, २९ सहसबेल, ३० चमक, ३१ विछीया, ३२ संदली, ३३ चुंदड़ीया, ३४ मुसा, ३५ झीला, ३६ वादल, ३७ मकडाणा, ३८ मरबर, ३९ गिलगच ४० मगसेलिया, ४१ हाबुरा, ४२ कसोटी, ४३ जाफरान, ४४ कुरंड, ४५ सीसाक, ४६ अरणेटा, ४७ पलेवा, ४८ लीली ।

॥ चौरासी संग विवरण ॥

१ संग एमनी जाति—१ हप्सानी, २ आकूदी, ३ सरवनी ४ खंभाइती ।

२ पीरोजा जाति— १ नेसावरी, २ भससी, ३ भोटंगिया ।

३ दाहिण पिरंग जाति—१ लोहाइ, २ मिसाई, ३ तुकराई, ४ चिल्हाई ।

४ संग रेसमकी जात—१ संग कपूरी, ३ संग अंगूरी ।

॥ क्रय विक्रय व्यवहार कथनम् ॥

॥ दोहा ॥

रत्न परीक्षा ए कहीं, ताते मोल कहाय ।
क्रय विक्रय के भेद बिनु, द्रव्य लाभ कहा थाइ ॥ १ ॥

देश काल गति बूझ कै, गाहक संपति देखि ।
मोल करै सोऊ सुघर, यह विवहार विशेषि ॥ ३ ॥

मिष्ट वचन बहु मान तें, गाहक लेह बुलाय ।
मिलत परस्पर हेत सै, आसन देहि विछाय ॥ ३ ॥

पान फूल सौगंध की, चहुते कर मनुहार ।
आदर कर सतोष तें, मोल कहो सुविचार ॥ ४ ॥
जो कोउ अति निपुण है, जानै रत्न विचार ।
तो वह साखी लेह द, मोल कहो निरधार ॥ ५ ॥
कर पर ढाक्ये वस्त्र तें, लैन दैन सधैत ।
दस वीस शत सहस की, कर अगुली सग देत ॥ ६ ॥
रत्नविशारद लोक जे, मुख हित बोले मोल ।
कहियै हाथ पसारि के, मणि मोतिन को तोल ॥ ७ ॥
ऐसी विधि से जो करे, क्रय विक्रय व्यवहार ।
ताके घर बहुत रह, मणि माणक भडार ॥ ८ ॥

॥ इति क्रय करण विधि ॥

नवरत्न महिमा कथन :—

॥ कवित्त ॥

पन्ना परम निशान, पाम जब लगौ हीरा ।
मुक्ताहल प्रवाल, गुणहि गोमेदक वीरा ॥
लीलालाभ लक्ष, लेत बहु मोल लमणीया ।
पुष्कराग की शोभ, सोइ है अति ही हसणिया ।
मणि नायक माणक सुदै ।
कुदन बारह वानसे, ए नव घर दिन प्रति उदै ॥ १ ॥

फल कथन चौपाई :—

सुनर पुरुष जो याको धरै, ताहि सुखी निहचै यह करै ।
राज्य मान लक्ष्मी होइ घनी, निहचें रहत ताहि घरि बनी ॥२॥

लोक सकल तिहि देवत मान, सुखी होत गुरु सुख यह ज्ञान ।
इह नवरत्न विचारंज भयौ, कहत अबै फल इन कौ नयौ ॥३॥

ग्रन्थालङ्कार वर्णनम्

॥ छप्पय ॥

विद्या विनय विवेक विभौ वानी विधि ज्ञाता ।
जानत सकल विचार सार, शास्त्रन रस श्रोता ॥
पढत गुनत दिन रयन, विविध गुन जानि विचच्छन ।
कला बहुत्तरि धारि, धरै बत्तीसहु लच्छन ॥
कुलदीपक जीपक अरिय, भरिय लच्छि भंडार तिहि ।
होहि रत्न व्यवहार सें, इह कारन धारन किरिय ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

ता कारन कीनौ सुगम, ग्रंथ जु मो मति सार ।
सज्जन तुम शुद्ध कीजियौ, भूलचूक आचार ॥ ५ ॥
श्रावन वदि दशमी दिनै, संवत अढार पैताल ।
सोमवार साचौ सुखद, ग्रंथ रच्यौ सुविशाल ॥ ६ ॥
खरतर गच्छ जाणो खरौ, मोटिम बड़े मंडाण ।
सागरचंदसूरीश की, ता मभ्क शाखा जाण ॥ ७ ॥
ता शाखा में दीपते, महो पाठक सुजगीश ।
आगम अर्थ भंडार है, पद्मकुशल गणीश ॥ ८ ॥
प्रथम शिष्य तिनके कहूं, वाचक पद के धार ।
दर्शनलाभ गणी कहै, ताहि शिष्य सुविचार ॥ ९ ॥

प० सन्ना धारक प्रवर, तत्त्वकुमार मुनीश ।
ग्रंथ रच्यो बहु हेत धर, दिन दिन अधिक जगीश ॥ १० ॥
मेरु रहे भूमंडलें, शशि सूरज आकाश ।
पाठक तौंलु थिर रहैं, लक्ष्मी लील विलास ॥ ११ ॥

॥ इति रत्नपरीक्षा ग्रंथ संपूर्णम् ॥

(१) सं० १८७१ मिती भाद्रवा सुदि १ दिने लिपिकृता ।
प० जयचंद ॥

यादृश पुस्तक दृष्ट्वा, तादृश लिखित मया ।
यदि शुद्ध मशुद्ध वा, मम दोषो न दीयते ॥ १ ॥
गगन धरा विध मेरु गिर, धरैं सहा ससि भार ।
युग च्यार चिर जीवज्यो, पोथी वाचणहार ॥ २ ॥
पोथी प्यारी प्राणथी, हिर हिवडा को हार ।
कोड जतन कर राखजो, पोथी सेती प्यार ॥ ३ ॥
पोथी माहे गुण घणा, कहियं केता वखाण ।
जयचंद्र ए पोथी लिखी, वाचो चतुर सुजाण ॥ ४ ॥

सुश्रावक पुण्यप्रभावक साहजी मौजीरामजी तत्पुत्र गुलाबचंदजी काल वाचु पठनार्थम् ॥ श्रीमहिमापुर नगरे ॥

[गुटकाकार पत्र ३०]

(२) संवत् १९११ का शाके १७७८ का मिती कार्तिक सुदि १३ लिखी मकसूदाबाद वालोचराज में बडी पोशाल ।
पोथी ईसरदासजी दूगड की ॥ श्रीरस्तु ॥ शुभमवतु ॥१॥ श्लोक सख्या ५०१ ॥ [पत्र १८ राय बद्रीदास म्युजियम]

वाचक रत्नशेखर कृत

रत्नपरीक्षा

ॐकार अनेक गुण, सिद्धि रूप परगास ॥
पांचु पद यामें प्रगट, सुमरिन पूरन आस ॥ १ ॥
अलख रूप यामें वसै, अनहद नाद अनूप ॥
ब्रह्मरंध्र आसन सजै, रच्यो अनादि सरूप ॥ २ ॥
सुमरिन याकौ साधि के, रचिहु ग्रन्थ मति[1] आनि ॥
रत्नपरीछा देख के, भाषा करहु वखानि ॥ ३ ॥
आंन कवीसर के किये, संसकृति सब ग्रन्थ ॥
तातै मो मन में भई, भाषा रस गुन ग्रन्थ ॥ ४ ॥
ो० भाषा रस को मूल, भाषा सबको बोधकर ।
तातै हम अनुकूल, भाषा कारन मन कह्यो[2] ॥ ५ ॥
कानौ वगला मा[3] दोउ, ताके मध्य विभाग ।
नदी तपती या तीर तहाँ, वसत नगर नृप लाग ॥ ६ ॥
सूरति गुन मूरति जिहां, वसत लोक वन आढ ।
ताहि विलोक कुवेर कत, मान धरत्ति मनि गाढ ॥ ७ ॥
तहाँ वसत दातार मनि, गुनी धनी शुचि सोल ।
भाग्यवन्त चतुरन चतुर, भीम साहि लछि लील ॥ ८ ॥

---

१ मान, २ करया, ३ ना ।

पट द्वीप नै तेज जस, मिटे न आधे मान।
जसो याको रूप गुन, ताको त्युही जान॥
च्यारो वर्ण विचारि के, करूऊ परीक्षा शुद्ध।
ज्यो गुन मूल लये सबै, फल पाइयइ अविरुद्ध॥
सत फटिक के मान छवि, शशि रुचि प्रवल प्रकाश।
चिकनाई संयुक्त फुनि, सो ब्राह्मन शुचि वास॥
जो हीरा लालो लीयइ, पीयरी तामै भाई।
ताको छत्री मुनि कहत, तुमे सदा समुझाई॥
वज्र पीयरे तनि वन्यौ, जीये[1] सेत पर छाई।
वैश्य वरनीये ताहि को, कहे अगस्ति वनाई॥
स्याम रग हीरा लीयइ, तामे तेज अनन्त।
शुद्र जाति तासौ कहौ, इहि मुनि कह्यो जु तन्त॥
चौ० इह विध हीरा लछन कहै, वर्ण परीछा गुण करि गहै।
निकट रहै ताकौ फल सुन्यौ, जुदो-जुदो करिके जो वन्यो॥
ब्रह्म-ब्रह्म हीरा जो धरै, वेद चार पाठी फल करै।
सर्व जग्य कीनो फल होई, सात जन्म विद्या फल सोई॥
छत्री-छत्री हीरा पास, शत्रु सवे ह्वै ताके दास।
सव लछन पूरन जो होइ, रन दुर्जन भय वैर न कोई॥
वैश्य वैश्य हीरा अनुसरे, सो धन कला सवै करि धरै।
चातुरता सब कारण दछ, इहि विधि फल पावै परतछ॥

---

१ लीयै।

चौ० शुद्र शुद्र राखे जो हीर, धन धान्य की लहै न पीर।
पर उपगारी अरु बलवंत, लोग कहे यह नर है सन्त ॥
शुद्र जाति हीरा जो होई, गुन संपूरन लछन सोई।
ताको मोल लहे बहु मानि, इहि विधि बोले मुनि की बानी ॥
ब्रह्म जाति हीरा गुनहीन, ताको मोल नहीं मति हीन।
गुन करि मोल सकल जन वाच, यामें कहा कथन मैं सांच ॥
दो० हीरे च्यारौं वर्ण के, तामे कोउ होय।
मीच अकाल रु सर्प गद, वैर वन्हि भय खोय ॥

सदोष हीरा को फल कथन :—

जे फल निर्दोषनि कह्यौ, तासौ इह विपरीत।
ता कारन निर्दोष ले, भूषन धरो सुरीत ॥

अब हीरो के गुण दोष कथन :—

दो० पाँच दोप गुन पाँच फुनि, छाया चार विचार।
मोलवार परकार यह, करौ शास्त्र मग धारि ॥

पाँच दोष भिन्न भिन्न कथन :—

मल विंदु यव रेख यह, काकपदनि मिलि पांच।
यह ढिग राखि ताहि को, स्थान मान फल साच ॥
धारा अंतरगति रहे, कौण माभि मल खोय[1]।
वज्र अग्रमल कहत है, रत्न विशारद होई ॥
चौ० मध्ये मल भय अग्निहि करई, धारा मल दृष्टिक उर धरइ।
कौण अग्र मल यश कौं हरै, ताको पंडित फल उच्चरै ॥

१—सोइ

अथ बिंदु के प्रकार कथन —

आवर्तिक पुनिवर्त कर, रत्नबिंदु यव रूप।
एच्यों विधि जानीयं, विन्दु दोष दुग कूप ॥

याहिन को फल कथन —

दो० आयु वृद्धि धन वृद्धि पुनि, होत जिहि आवर्त।
ताकौ फल निहचै लहै, धरज्यौ मर्त अमर्त्य ॥
यामै वाती सी वनी, ताकौ धर नरेस।
सो नर गद पीडा लहे, यह फल कह्यो विशेष ॥३६॥
रक्त विन्दु जिहि वज्र महि, सोई धरे फल देखि।
त्रिया पुत्र छय दोष ह्वे, देश त्याग यव लेखि ॥३७॥
रक्त पीत अरु सेत यव, यह[1] मुनि कहै जु तीन।
ताकौ धारत फल कह्यो, तामै मेष न मीन ॥३८॥
रक्त वर्ण यव छय करत, गज वाजिन महाराज।
पीत वंश छय कहत फुनि, धारत होत अकाज ॥३९॥
सेत यवाकृति देखि कै, धरं जु हीरा कोइ।
ताकौ धन अरु धाम वहु, लछि लील धरि होइ ॥४०॥
सो० यव कौ गुन हैं एक, दोष दोय कोविद कहे।
वारहु धरिय विवेक, रत्नपरीक्षा गुन लहै ॥४१॥
पुनि रेखा त्रिहुं भेद, वाम दक्ष अरु विषम मग।
उर्द्ध गता ए वेद, याकौ फल सु विचार ढिग ॥४२॥

१—भेद कहे मुनि तीन

सो० पासै डावे रेख, सो हीरा अलपायु कर।
यामैं सीधी देखि, सो राखि बहु सुख करै ॥४३॥
विसमी यामै होइ, रेख सोइ बंधन करी।
ऊरध रेख फल जोइ, शस्त्र घाउ छिनमै लगे ॥४४॥
इह रेखन के तीन, दोष एक गुन गुरु कहै।
कबहों होहि न दीन, जो गुरु सीख सदा गहै ॥४५॥
दो० जो हीरा षटकोण ह्वै, तीखा लघुता सूल।
पुनि अठकोना आठ दल, काकपदी तिहि कूल[1] ॥४६॥
काकपदी जु काकपद, सिरसी रेखा होइ।
ताकौ फल हम कहतु है, गुरु मुख देखहु सोई ॥४७॥
सो हीरा जिहि ढिग रहत, ताकौ आनत मीच।
सुनत सयाना ना गहै, नही आनत घर वीच ॥४८॥
चौ० बाहिर फाटा हीरा होई, अरु अन्तर्गत फाटा सोइ।
भग्न कोट पुनि वृत्ताकार, सो फल देन समर्थ न धार ॥४९॥

अथ वज्र के पांचों गुन कथन :—

दो० बाहिर मध्यरू अग्रग्रत, समता[2] होइ सुग्यान।
सो हीरा कौ प्रथम गुन, कहत कुंभ भू मान ॥५०॥

अथ मतांतरे प्रकारांतरेण पांच गुन कथन :—

दो० हरूओ अठ कोनो षटकौन, तीखी धाररु निर्मल जौन।
इन गुन पंच सहित कर सेव, ता भूषण कौ धारहि देव ॥५१॥

१—बल २—तमना

अथ छाया गुन—

चो० सेत पीयरी राती स्याम, इह छाया च्यारौ गुन धाम।
च्यार वर्ण कौगिणी लीजइ, ब्रह्म आदि अनिक्रमि कीजई ॥ ५२।

अथ तोल को भेद कथन —

धारा अग अग्रत तल[1] देखि, लछन सवे शास्त्र विधि लेखि।
पाछे तुला चढाई मोल, कहौ परीछक बाढै तोल ॥५३॥

अथ तोलन को मान कथन —

सो० सरषप आठै सेत, मान चढे तदुल तुला।
वज्रन को सकेत, मोल करन मन मै धरौ ॥ ५४ ॥
वज्र तुल्य[2] परमान, पहिले पिंडु जु कलपीयै।
तापि इन के मोल, त्रिधा उत्तम मध्यम अधम ॥ ५५ ॥
ज्यौ भारी त्यो मोल, अधम मध्यते अधम फुनि।
हरवै उत्तम मूल, यामै कछू न विचारना ॥ ५६ ॥

सो० भारी हीरा होइ, मोल त्रिविध ताकौ कह्यौ।
लघुता लीयै जु कोइ, ताहि को पुनि तीन विधि ॥ ५७ ॥
अति हरओ जो होइ, वज्र सोइ पट भेद गिन।
भेद चार विधि सोइ, मोल करत यौ रतन विद ॥ ५८ ॥
पहिलै हीरा देखि, पिंड मान मन मे धरौ।
पीछे तोल विसेष, मोल मान मुनि ते कहौ ॥ ५९ ॥
यव मिति याकौ गात्र, तोल एक तदुल समौ।
मोल अर्द्ध शत मात्र, ताकौ कहौ निसंक मनि ॥ ६० ॥

[1]—तन २ मुल्य।

पिंड मान यव दोय, तोल चढ़ै तन्दुल तुला।
मोल चोगुणो होइ, कहौ सयान वयान करि॥ ६१॥
पिंड मान यव तीन, तंदुल एक समौ वजन।
मोल आठ गुन कीन, रत्नपरीछक नर निपुन॥ ६२॥

पुनि मोल के भेद कहतु है—

चौ० याके पिण्ड समान, तोल पुनि जानियइ।
ताको मोल पचास, ठीक करि ठानीयै॥
रत्नशास्त्र मग जान, कहै इहि भांति सौ।
ताको मग तुम हेरि, कहौ मन खांति सौं॥ ६३॥
या हीरा को मध्य, दुगुण होइ तोलइ तई।
ताकौ चौगुणो मोल, कहौ मुख बोलतइ॥
याकौ त्रिगुणो मोल, पिंड तोल तै जानीयै।
ताकौ मोल विचार, च्यारि सैं मानिये॥ ६४॥
पिंड मान गिन लेउ, पंच गुन वजन सौ।
ताकौ धन शत पंच, कहो तुम सजन सौ॥
होहि पंच गुन पिण्ड, वज्र चढतै तुला।
मोल तै लहै सत आठ, सही गुन तै भला॥ ६५॥
याहि षट गुनो गात्र, तोल के पात्र तै।
सहस्र एक तस मोल, देत दृग मात्र तै॥
सात गुनौ जो पिंड, तोल तै बाढि है।
हीरा लैहै सोइ, सहस दोय काढि है॥ ६६॥

अब रत्न के दस भेद कथन—

दो० सो० जाति राग[1] रंग रोल[2] वर्त्ति[3] गात्र[4] गुण[5] दोष[6] फुनि।
आकृति[7] लाघव[8] मोल[9], ए[10] दश भेद विचार सुनि॥ ८४॥

अथ वज्रनि के क्रय-विक्रय के देश कथन—

दो० आगर पूरब देश के, कासमीर मध्यदेश॥
सिंघल देशरु सिंधु फुनि, इहाँ वज्र क्रय लेस॥ ८५॥
यो हीरा चारू वरण, लछिन बिन ही भंग॥
सो हीरा सुनि मण्डली, योग नाहि गुन भंग॥ ८६॥
जिहि कारण लछिन रहित, हीरा माहि जु कोई॥
देव दैत्य अरु नाग खग, करत प्रवेशन लोई॥ ८७॥
एते गुन संयुक्त होई, योग्य मण्डली होई[1]॥
देवहिं दुर्लभ होइ जहाँ, सोई उत्तम ठाम॥ ८८॥

हीरा के क्रय विक्रय को व्यवहार कथन—

अडिह्र—गाहक आप बुलाई, बहुतर आदर कीइ।
आसन सुन्दर गन्ध, पहुपमाला लीइ॥
सर्व सभा जन बोल मान बहुते दीये।
मुख ते गुन अरू विचरेफु है,
ऊपरि टाके वस्त्र समस्या मोल है॥ ८९॥
लाख सहस सकेत करै कर आगुली।
लेत देत ढिग[2] मोल कहौ इह क्यौं बुरी॥
कीज हाथ पसार द्रव्य सख्या सदा।
मुख हिन बोल्हु बोल तोल[3] गुन को मुदा॥ ९०॥

---

[1] नाम, २ दिढ ३ तोल।

दो० जो कोऊ होवे दक्ष अति, जानै रत्न विचारि।
तोऊ साखी एक करि, मोल कहो निरधारि ॥६२॥
कूर करत कोऊ रत्न, ठंगत सयान अयान।
ते मध्यम नर नरग गति, लहत दुख असथान ॥६३
हत्याकारक सै[1] अधिक, तातै करहु न कोई।
फल याकौ अति दुष्ट गति, कृत्रिम करहौ न सोइ ॥६४॥
अथवा कृत्रिम शुद्ध महि, संसय उठत तरंग।
तबहि परीछा करि गहौ, क्षार खटाई संग ॥६५॥
क्षार खटाई लेह पुनि[2], खरै धरै खुरसान।
तातै तिलजु धरै नहीं, यह हीरन परमान ॥६६॥
या मै कूर कछु होइ, ताकौ वर्ण विनाश।
पाछै धोवत शालि जल, खिरत कूर परगास ॥६७॥
इसै[3] कूर अरु साच की, करत परीक्षा होई।
कूड़ा तजै साचाहि गहौ, दुरजन हसै न कोई ॥६८॥
यामै नाहीं कूर कछु, सो लोहन के साथि।
घसै न भेदै और कछु, ताकौ ल्यौ तुम हाथि ॥६९॥
हीरा में हीरा घसै, लसै न कोउ और।
ता कारन यह वज्र को, मान[4] धर्‍यौ मुनि भोर ॥१००॥
अबै इहां कलि बीच नहीं, जाति शुद्ध अठ अंग।
षटकोनो पुनि देखि गुन, साधत सकल सुरंग ॥१०१॥

१—कह्यो २—फुनि ३—ऐसे ४—नाम

ऐसे सुन्दर शुद्ध गुन, ताहि सकल भूपाल।
मुकट माहि मस्तक धरैं, करिहु जु कृपा कृपाल ॥१०२॥

कोऊ कंठ भुजानि मध्य, धरै ताहि धन धान।
रन अभग सुख संग अरू, उत्तम गुन संतान ॥१०३॥

जो भूषन हीरन जख्यो, धरै गरभिनी नारि।
गर्भपात होई ताहि कौ, कह्यो मुनीश विचारि ॥१०४॥

गधक अरु रसराजि मिलि, वज्र योग रसराज।
नरपत सेवत सुख लहैं, भोग योग इह साज ॥१०५॥

अथ मौक्तिक व्यवहारो निरूप्यते —

ॐकार अनन्त गुन, यामे सकल प्रकास।
ताको ध्यान हिये धरी, मोतिन न्हू विलास ॥१॥

वज्र बात सबहिन सुनि, मुनी सवन के ईस।
अब मोतिन उतपति कहौ, मन धरि बिसवा बीस ॥२॥

जिहि भाँति उतपन्न है, मोल तोल परमान।
जुदै जुद करि त्यों कहो, ज्यों देवे नृप मान ॥३॥

सो० सुनहो तत्व जिहि मान, कहौ तुमइ संछेप तें।
जिहि जिनको विग्यान, सभा लोक आछे पतै ॥४॥

मुक्ताफल की आठौ खानि कथन —

दो० घन तें[१] करित[२] मच्छतें[३], अहि[४] सख[५] अरु वश[६]।
मुनि वराह[७] सीपनि[८] सुनी, मुक्ता खानि प्रसस ॥५॥

थांनि आठ कोविद कही, तामे सीप प्रसिद्ध।
मोल लहै कलि में अधिक, अंगीकृत करि सिद्ध[1] ॥ ६ ॥

प्रथम मेघ मोतिन को व्यवहार कहतु है—

अडिल्ल—घन मोती जुहोइ सोइ आकाश तै।
हरत देव तिहि बीच भूमिकापास तै ॥
[2]जिहि विमान ले जाहि अपछरा भोग कौ।
सुख विलसै संसार सदा रति योग कौ ॥ ७ ॥
याकौ ज्योति प्रकाश दामिनी भानु सौ।
निरख्यो काहू जाइ होइ मन आन सौ ॥
सुर सिद्धनि के काज आज इह जांनीयै।
ताको भोग विलास ताही को मानीयै ॥ ८ ॥

अब गज मोतिन को विचार कहतु है—

सो०—गज मोती गजराज, कुंभस्थल तै प्रगट हुई।
अरु कपोल तें साज, दोई थांन मुनि पै सुने ॥ ६ ॥
थोरी उतपति ताहि, ना लेवौ ना पारिखौ।
मुनि वच धरि मन माहि, गज मोती गिनवौ अकज ॥१०॥
रतन शास्त्र मग जानि, इन दोऊ अधमजु कहै।
मान आभरनि मानि, छाया पीतली लइ रहै ॥११॥

अथ मछ मोती कहतु है—

सो०—मछ जाति उतपन्न, मुकता वृत्त दरस शुभ।
हरखाहि तिहि तिन्नि, गुंजमान जानहु गुनी ॥१२॥

१—लिद्ध, २—निज, ३—ये।

दो०—तिमि तिर्मिगिल मच्छ के, मोती परयन दीठि।
[1]दीन भाग्य नर की कहूँ, यह मुनि कहै वसीठ ॥१३॥
पाडल पहुप समान रुचि, नाग लोक है ताहि।
मनुज मध्य पईयड नहीं, कहत मुनि ठहराहि ॥१४॥

अथ सर्पई मोतिन को सरूप कथन—

चौ०—अति उज्ज्वल उपरितनि छायै, तामै नीली झाल न झाही।
तन अशोक फल जैस मानि, ता मोतिन अति उतपति जानि॥१५॥
ताकौ धरं नरेसर कोई, विष पीडा ताहि न होई।
यौ अगस्ति मुनि बोलति बानि, यामै कूर नही सही जानि॥१६॥
दो०—जाके घरि मुगता सरस, ताके सुन्दर राज।
गज अरु वाजि समाज सब, धन विलास सुख साज ॥१७॥

पाचों की खानि बश ते कहतु है—

अडिल्ल—दिशि उत्तर वेताढ्य पहार - महार है।
रूपा को सो रूप तहा न विचार है॥
ताकौ कूट विचित्र चित्र देखत लहै।
वाके ढिग कोड वस सु-वस मुनी कहै॥१८॥
पर्व एक शत आठ गिने गिनि राखीयै।
अर्द्ध भाग ता मध्य छिद्र दे दाखीयै।
नर मादी दोइ होइ जानि मन रग सौ।
मुगता सुन्दर रूप वंश वे सग सौ॥१९॥

१—हीन।

तामै देव निवास आस सब काज की।
पूरै पूरन रिद्धि दीय सुख साज की॥
जाकै घरि यह होइ सोइ कुल अन्य तै।
पावत सुन्दर राज पुरातन पुन्य तै॥२०॥
गज अरु सुन्दर वाजि सुरूपा सुन्दरी।
पुहपमाल ले हाथ सखी ढिग ह्वै खरी॥
छत्र धरै एक नारि बजै बहु किंन्नरी।
ढारत चामर दोय मनु यह भूचरी॥२१॥
सो०—जाकै ढिग यह होइ, ताहिन काहू की कमी।
कहै मुनी तिहुं लोय, ताकौ यश मिथ्या न गिनि॥२२॥
अथ ताकौ लेवे को विधानु कहतु है—
अडिल्ल—ता देवन के वंशि जाण मुगता वन्यौ।
राक्षस राखै ताहि महामुनि तै सुन्यौ॥
ताकौ डर मनि राखि ताहि वली दीजीयइ।
कर नीके जु विधान भली विधि लीजीयइ॥२३॥
साधक सब विधि जान मान करि बोलीयै।
पठउ ता ढिग ताहि हीया निज खोलि कै॥
सो सब देवन साधि करै वसि आपने।
नांतरि लेवौ वाहि कहौ किहि विधि वने॥२४॥
पुनि ता मोतिन काजि विप्र वर आनीयै।
वेद उकत तहां मंत्र भलीगति ठानीयै।
कीन प्रतिष्टा तास होम हित दिल आंनि कै॥
फुनि निज मन्दिर आनि महुरत जानि कै॥२५॥

दो०—लगन महूरत देखि के, घर आन्यो नृप ताहि।
या घर में यह राखीयो, तान साम्क ता माहि ॥२६॥
सुन्दर धुनि वाजित्र फुनि, मंगल दीप बनाइ॥
अरचा करि दुहो एकठे, राखहु लछिन[1] राई ॥२७॥
यह मुगता जा घरि रहे, ता घरि दुख नहीं कोइ।
थावर विष जंगम कह्यो, भय नहीं इनको होइ ॥२८॥
राग द्वेष अरु राजभय, कौ न उपद्रव आन।
दुख-नाशन सुख करन यह, कहे अगस्ति मुनि ग्यान ॥२६॥
चौ० - इन्द्रहि एक समय मनि आनि, राजा हेतु बनाए थानि।
वश अनोपम कीए विशेखि, तामें इनकी उतपति देखि ॥३०॥
पाछे कलि उतपति भई,[2] तब दानव अदरयता दई॥
तातें वश अदरा जु भए, रत्न परीछक मुनि ते लहे[3] ॥३१॥
तिहि वशन मे मोती एह, वोरमान ताको गिनि लेह।
महाज्योति घन उपल समान, निरमलता जवि इहि अनुमान॥३१॥
दो०—ताको सेत सरूप यह, जैसो वंश कपूर।
इहि विधि मोती वंश के, यामे नाहि न झूर ॥३३॥
नर मादा मोती कहे, इहे वंश[4] के भेद।
सखन मे मुनि कहन को, मन में धरे उमेद ॥३४॥
अथ सख ते कहतु हैं—
सोरठा—दानव अरि श्रीकृस्न, ता कर संखन ते भए।
तातें अति ही विष्णु, ढिग राखत पातक गए ॥३५॥

१ मराई २ पीछे कलि व्यापन जब भई ३ मुनियो कहि गये ४ वशन

चौ०—मोती जो संखन ते गह्यौ, संध्या रुचि सम ताको कह्यौ ॥
रंग देखि मन होवहि खुशी, ताको लेत चतुर उलसी ॥३६॥
पुन्यहीन कौ सोइ न मिले, भर समुद्र सो संख जु चलै।
तातै काके नावे हाथ, कौन गहे तिहि मोतिन साथ ॥३७॥

दो०—इह मोती संखनि कौ कह्यौ, लहै शास्त्र मग सांनि।
अब शूकर मुख तैं भयो, ताको कहौं बखानि ॥३८॥

अथ सूकर के मोतिन को विचार कथनं—

दो०—जब वराह रूप जग कह्यौ, नारायण वर देह।
तब ताकौ वंशहि भयौ, सूकर मुगता तेह ॥३६॥
सोई फिरे बन माहि जिही, ताहिन कोउ ठौर।
स्वापद विचरे नाहि डर[1] जाये ताकी दौर ॥४०॥
ताके मस्तक ते भए, बेर मान परमान।
ता मोतिन की छबि कही, सूकर दाढ समान ॥४१॥
पुनि वराह मोती बन्यौ, गिन्यौ जु ताकौ वर्ण।
अति सुन्दर शास्त्रनि कह्यौ, गुरु मुख सुन्यौ जु कर्ण ॥४२॥
रतन परीक्षा करनि पुनि, धरि अपनी मन मांभि।
वानि प्रमानिहि मोल करि, वानि न होवत वांभि ॥४३॥
वलि के दान निपात जिहि, थान भए तिहि थांन।
आगर मुगता के भए, कहै ग्रंथन में ग्यान ॥४४॥
परे समुद्रनि माभ जिहा, तहा स्वाति जल जोग।
मुगता सीपनि ते भए, जानत सिगरे लोग ॥४५॥

१—नर

प्रथम सिंवल अरु दूसरो, आरव पुनि पारसीक।
तीन गिले वावर सुन्यौ, च्यारौ आगर ठीक ॥४६॥
सिंवलदीपनि को भयौ, मुगता मधु सम रंग।
ज्योति अधिक चिकनी चिलक, पहिलै आगर संग ॥४७॥
वावर आगर ते धवल, ज्योति चन्द्र सम देखि।
निरमल पीयरी रूचि तनक, वनक दूसरे लेखि ॥४८॥
निरमलता जलसेत दुति, पारसीक तिहि जाति।
ए च्यारौ कलियुग कहे, सीपन मुगता माहि ॥४९॥
तहा उदधि जल बीचि हैं, सीप सुवर्ण समान[1]।
सब समुद्र गति ताहि सुनि, ताको मुगता मान ॥५०॥
ताकौ मुगता अति सरस, दरस देव को दूरि।
मान लहै यहै कहा, गुन लछन कौ पूरि ॥५१॥
तातें मुगता जानीयउ, जातौ फल सम रूप।
कुंकुम रूचि व मृग अयन, कोमल स्निग्ध सरूप ॥५२॥
सो सुवर्ण रुचि सीप मौ, मुगता जानहु मीति।
ताको मूल कहे मुनी, सुनि आनौ तुम भोति ॥५३॥
जेती पृथिवी बीच नर, सहस एक करि ठाढ।
तेती सुवरण दापीइ, मोल याहि तैं वाढ ॥५४॥

अथ सीपन के मोतिन कौ विचार कथनम्

चौ०—अब मोती कलियुग को माझि, गहत देत गुन लछन साझि।
ताकौ और सीप तैं लाग, याहिन को सुनि मुनि महाभाग ॥

१—सुमान

अब विस्तार जगत जिहि रीति, ताकी उतपति सुनिधरि प्रीति ।
पहिलै आगर च्यारौं कहै, तामे सीप सरद ऋतु लहै ॥
आवत निकट समुद्र जल तीर, गहत स्वाति जल निज मुखवीर ।
फिर समुद्र जल सीप समाई, मास आठ साढ़े ठहराई ॥५७॥
पूरन दिन पूरन गुन भयौ, नांतरि काचौ यह गुन कह्यौ[१] ।
अरु अधिके दिन तापरिं जाय, तौ मोती विनसै तिहु वाय[२] ॥५८॥
ता कारन दिन लीजै गिनी, यही वात मुनि मुख तै गुनी ।
यहि[३] प्रमान वरखा कन कह्यौ, तिहि प्रमान मुगतासन[४] भयौ ॥५९॥

अब मोतिन के गुनदोष तोल मोल कहतु है—

दो०—नवदोष रु षट गुन कहै, छाय तीन मनि आनि ।
तोल मोल आठौ गिनौ, रिखवानी इह जानि ॥६०॥

रत्न विसारद गुन कहतु, जो मुगता गुन हीन ।
ताकौ मूल कहै कहा, कहत होत मुख दीन ॥६१॥

सच अजव पूरन वन्यौ, ताके तीन विभाग ।
उत्तम मध्यम अरु अधम, मोल करहु लहि लागि ॥६२॥

चौ०—सीप फरस पहिलौ कहै दोष, मछाक्षी दुतियन को पोष ।
जाठर दोष लहौ तीसरौ, चौथौ रक्त कहा वीसरौ ॥६३॥
दोष त्रिवर्त पंचम सुनि भाई, चपलता छठइ ठहराई ।
म्लान दोष सप्तम गिनि लीजै, एक दिशि दीरघ आठम कीजै ॥६४॥
निःप्रभाव निस्तेज कहावै, नवमौ दोष मुनीश बतावै ।
चीन्हौ दोप बड मानि के, अलपमानि पुनि पांच ॥
यह नव दोष विचारि कै, मोल करहु तुम सांच ॥६५॥

---

१ गह्यौ, २ निश्चैविडंसाय ३ जिहि ४ फल रयो, कनभयो ।

वर दोपनकि वात सुनि, कहौ तोहि गुरु ग्यान।
मोती सौ लागौ जिहा, मपरम दोप कहात ॥६६॥
मछ नेत्र सम देखि कै, मो मछाक्षो दोप।
जो गुरु सेवै मो लहै, यामै कैसो रोप ॥६७॥
इसद रक्त जलपेट मध्य, सो जठरागत दोप।
चौथै धरि जु रक्तिमा, राखिन धरौ सन्तोप ॥६८॥

अब इन च्यारी दोपन की महिमा कथन—

चौ०—शुक्ति स्पर्श मोती धरै जेह, कष्ट लहै तिहा नहीं सन्देह।
मछाक्षी पुत्रहि दुख देत, रत्न परीछक कबहु न लेत ॥७०॥
जाठर दोप करत धन नास, आरक्तक प्रानन को त्रास।
इह च्यारन को फल मनिआनि,राखौ पहिरौ जिन सुनि वानि॥७१॥

अब सामान्य पाँचौ दोप को विचार फलम्—

त्रिवर्त मध्य आवर्त तह तीन, पहिर सो नर होइ अदीन।
चपल दोप देखत वहु रग, अपयस करहि तजो-तिहि सग ॥ ७२ ॥
मलिन दोप अन्तर मल जिहा, वल की हानि रहै यह तहा।
पारस दीरघ लछन एक, और दीरघ कुन गहै विनेक ॥ ७३ ॥
इनकै धरइ होहि मति भ्रस, दिगमूढो उन कीन प्रसस।
पचम दोप निस्तेज कहाय, तेजहीन यह देहु बताय ॥ ७४ ॥
यह राखत आरस निस्तेज, तन होवत नहीं उद्यम हेज।
अल्प मृत्यु कारन तन पीर, पाच दोप फल धर मनि वीर ॥ ७५ ॥
इन पाचन को फल है एह, यामे कछु नाहिन सन्देह।
अव मोतिन के गुन की वात, सुनि भईया करिहौ विख्यात ॥७६ ॥

दो०—गुन षट मोतिन के कहै, कुंभ सुतनि भ्रात।
तिन ढिग राखहि ना भलौ, शास्त्र रीति यह बात ॥ ७७ ॥

सो०—तारक ज्योति समान, याकौ ज्योति प्रकाश पुनि।
प्रथम एह गुन जान, गुण गनती कर लेत हो ॥ ७८
भारी तोल जु होइ, यह गुन जानहु दूसरो।
चिकनाई लै सोइ, गुन जानहु तुम तीसरो ॥ ७९
गात वड़ो गुन जानि, चौथौ मुनि वानी कहै।
गुन पंचम यह गंनि, वर्त्तुलता छठओ विमल ॥ ८० ॥

इन छहौं गुन संयुक्त मोती अंग धर्‌यौ कौन गुन करै सो कहतु हैं।

चौ०—सब मुनि पूछति है रिषिराय, दोषहीन मोती जो पाय।
राखैं निज तनि जो ठहराय, फल ताकौ कहौं मैं जु बनाय ॥८१॥

मुनि अगस्ति कहतु है,

सुनो मुनिश्वर रत्न के जान यह विध मोतिन करहु वयान।
नव दुषन विन गुन छह संगि, छाया तीन सहित तन रंगि ॥८२॥

छाया तीन सौ कहतु हैं—

छाया सेत रु मधु कै वांनि, अरु पीयरी यह तीनौ जांनि।
यह सब ही गुन मोती धरै, जात पाप ताके खरे ॥ ८३ ॥
और वर्ण मोति ना भलौ, राखत दुख उपजत एकलौ।
अब उतम आकर को भयो, भारी चिकनौ वर्ण ही नयौ ॥ ८४ ॥
तीन मुकता कौ मोल जु सुनौ, गुंज तीन ते लै करि गिणौ।
तीन गुनौं यह भांतिनि मोल.. पंचासह ५० चौ गुंजा तोल॥ ८५ ॥

मोल चोरासी चिरमी पाच, छह गुज तोले मूल जु साच।
सात गुज द्वै सत पुनि चारि, आठ गुज चौ सत वर धारि ॥८६॥
नव गुजा सत सातज लहे, अठयासी ऊपरि मुनि कहै।
दसे सहस एक अठसठि बाढ, मुनि अगस्ति कहै यह विधि पाठ॥
गुज ग्यारह याकौ तोल, चौदहसै अठयासी मोल।
द्वादश गुजहि सै बाईस, साच कहत मत मानहु रीश ॥८८॥
सहस दोय सत सातरु साठि, तेरह गुंज मोल मुख पाठि।
चउदह गुंज मोल लहे तीन, सहस च्यारि सै ऊपरि लीन ॥८६॥
पनरह रत्ती सहस पट मान, छ सौ बिहुत्तरि[1] मोल बिग्यान।
इत तै तोल अधिक जो वढे, ताकौ मोल सुनौ यौ वढै ॥६०॥

अथ परिभाषा कहतु है—

दो०—मंजाडी सुनि तीन सम, मासा कहतु मुनीश।
च्यार माप तै मान भनि, तोल मान निस दीस ॥६१॥
साण दोय कलज कहि, मुनि अगस्त मुख वाच।
दूपक दश तै निष्क मुनि, सोइ टका साच ॥६२॥
कहत कलजउ ताहि सों, ताल पदहि पुनि साख।
मासा द्वय तै आन कुछ, मै जाडी मुनि भाख ॥६३॥
मुनि मजाडी तीन कौ, दोई दोइ करि खण्ड।
वाके पंच समान गिनि, मास मान कौ पिंड ॥६४॥
मंजाडी पुनि मजुगिन, जो मुगता इक गुंज।
आठ सात[2] ताकौ कहौ, मोल देहु मति पुज ॥६५॥

१—बिहुतरी, २—ताल।

चौ०—जो मुगता तन्दुल अठमान[1]; ताकौ मोल कलंज प्रमान।
तापर चढ़त सात अधिकात, बारह गुंज छवै कहि भ्रांति ॥९६
चढ़त तौल चावल बाईस, सोलह गुन एक सत अठईस।
पुनि छतीस चावल तिहि तोल, जुग पचीस द्वे सत २२५ तिहिमो
यह विधि पनरह रति प्रमान, चढ़त कह्यौ मुनिवच अनुमांन।
त्रिक-त्रिक वढ़त त्रिगुनौं, हीन होत घट-घट मनौं ॥९८॥

दो०—तीस गुंज ऊपर चढ़त, तीन चौगुनौ मोलि।
गुंजा आठ तीसह अधिक, पंच गिनौं गुन बोल॥ ९९ ॥
एक लछ सत सहस, इक सतहतरि वाढ़।
परम मोलि रिसि कटत इह, यातै[2] अधिक अनाढ़ ॥२००॥
पुनि पुरान पुरुपनि कह्यौ, ताको मत मनि आनि।
तोल विचारु मोल संग, कहौ जु मो मति मानि ॥ १ ॥
सरपव आठ सुसेतलौ, ता सम तन्दुल एक।
गर्भपाक तिहि नाम धरि, साढी कहौ विवेक॥ २ ॥
तिहि च्यारिनि मानि गिनि, करि ल्यौ गुंजा मानि।
ता सौ मोतिन मोल को, होत सयान वयान ॥३॥
पुनि सीपनि मोतिन भयो, होइ सुवृत सुतेज।
प्रभावंत अरु रूचि विमल, तोल गुंज भरि लेज ॥४॥

सो०—ताको मोल पचीस, वीस कही मुनि ईस ने।
यामै कहा जग रीस[3], रतन परीछक कहतु है ॥५॥

१—अद्ध, २—आने, ३—ईस।

अथ गौजर देशानुसारेण मोती को मोल कथन —

दो० पानी चौदह ववकों, भाग लेहु चौबीस।
ताहि मानि मोलजु कह्यो, यह गूजर अवनीश ॥७५॥

अथ मोल करत द्रव्य की संज्ञा कथन—

दो० विग्रह तुग पुरान पुनि, कहत मोई अत्र दक्ष।
मुद्रा ताहि को कहतु, युग-युग फिरत प्रतक्ष ॥७६॥
निग्रह तुग जु तोससे, होत एक दिनार सो।
सुवरन अरू रूप्य तजि, तावा की सी वारि ॥७७॥
वाकी सज्ञा रुप्य धरि, ता तेरह परमान।
वरण कह्यौ पुनि सिक्क यह, कहौ लहौ गुरु ग्यान ॥७८॥
अपने अपने देश को, करो मोल व्यवहार।
शास्त्र सिद्ध हम हौ कहौ, या कौ अवन विचार ॥७९॥

॥ इति द्वितीयो वर्ग ॥

अथ माणिक्य व्यवहारो भिधीयते

दो० अलख रूप आनन्द मय, अमल ज्योति परगास।
याहि के सुमरिन सधै, सकल काज सुप वास ॥१॥
तीन लोक सुख वास को, इन्द्रहि हन्यो जु दैत्य।
वलि नामा ताको रुधिर, लीयौ आप आदित्य ॥२॥
रुधिर लेइ भू मध्य तिहि, ठयौ एक तसु ठौर।
दसमुख भय लेसै लखी, की ई आकर यह दौर ॥३॥

कौन ठोर ठ्यो सो कहतु है—

चौ०—सिंहल देश देशनि महिसार, अवण गंग तेहि मध्य उदार।
तहां रक्त ताकौ तिहि ठयो, वाको कौतुक इहि विधि भयौ ॥४॥
दुहु कंठ तहा होत प्रकाश, जैसे करत खद्योत विनास।
जल महि झलकति पावक रूप, इहि विधि दीसत सदा सरुप ॥५॥
पद्मराग मणि सुन्दर वन्यौ, ताकौ भेदु त्रिविधि करि सुन्यौ।
प्रथम सुगन्धिक १ अरू कुडविंद २, पद्मराग ३ तीनों यह छन्द ॥६॥
तीनों उतपति एकहि ठांउ, वरण भेद सिंगिरि के नाउ।
जोगन कौ समुझन कै हेंत, मुनि अगस्ति भेदहि कहि देत ॥ ७ ॥
दोहा—सुनौ मुनी मुनी कहतु है, उतपति आगर जानि।
गुन सरूप मोलजु सुन्यौ, पाँचौ कहो जु ठाँन ॥ ८ ॥

चौपाई—पद्मराग उतपति यह कही, मणि के आगर सुनि जु लही।
एक एक छाया मनि आणि, भिन्न भिन्न करि कहौ वखानि ॥ ९ ॥
सिंहल देश हि आगर एक, डाहल दूजौ कह्यौ विवेक।
रंध्र देश तीसरे वखानी, तुंवर कहियतु चौथी खानि ॥ १० ॥
ताके ढिग मलयाचल देखि, च्यारि खानि कही आगम लेखि।
अवै सवै जन जानत ऐह, ताकौ चिन्ह चीनि गुन गेह ॥ ११ ॥
पद्मराग सिंहल को वन्यौ, लाली लीयई निपट यह सून्यौ।
डाहल को कछु पीयरी मास, तांवा वरण अन्ध्र मणि हास ॥ १२ ॥
हरी कांतो तूंवर मुनि सुनी, आगर चीन्ह लेहु इह गुनी।
सिंहल को उत्तम ठहराय, करपुर मध्यम कहौ बनाय ॥ १३ ॥

दोहा—रन्त्र देश माणिक अधम, तुवर कहे तस ज्ञान।
अधमाधम गुनहीन यह, नाम हि रतन कहाय॥ १४॥

आगे इनके गुन दोष मोल कथन —

सो०—तीन वरग के आठ, दोषरू सोलह गुन कहे।
मोल करन को ठाठ, तीस भाँति गुरू वचन तै॥ १५॥
पदमराग मणि नाम, पुनि सुगन्ध कुरुविन्द दुइ।
वाछित पूरन काम, आठों दोष विचार लें॥ १६॥
प्रथम दोष बिछाय, द्विपद कहौ पुनि दूसरौ।
भिन्न जु तृतीय कहाय, कर्कर चौथो जानीये॥ १७॥
पचम लसुनिये दोप कोमल छठउ देखियइ।
सप्तम जडता दोप, अष्टम धूम्र बनाय कहो॥ १८॥

प्रथम बिछाय दोष कौ रूप कथन —

दोहा—छाया तीन हू जाति की, मिलत परम्पर देखि।
तासि कही तुम ठानियौ, दोष बिछाय विशेषि॥ १८॥
सुनि कुरुविंद सुगंधितै, पदमराग गुन वाधि।
छाया हीन न होय त्यव, धरत करत धन आढ॥ १६॥
याकौ राखि पाइ नर, नर होवत नरराज।
अगिन डर भागे फिरत, करत कौरी व राज॥ २०॥

चौ०—तिहा वरग महि धरत छवि छाँय, ता मुख पंकज करत बिछाय।
देश त्याग घर कौ है त्याग, यह राखन को कहौ कहा लाग॥

द्विपद दोष कथन —

चौ०—जसो होवत मन ई पाय, ता मम लक्षन जहाँ ठहराय।
द्विपद दोष याकौ करि लेहु, ताकौ लेन कछु जिन देहु॥ २२॥

इनके ढिग राखे दुःख होइ, भंग होत रण माझिहि जोइ।
पतन अचानक जानहुँ भई, याकौ कोउ न राखत दई॥ २३॥

अब भिन्न दोष कहतु है :—

करतै परतै भंग जु लहै, भंग दोष ताही सौं कहै।
रतन परीछक ताहि न धरै, धरै ताहि फल ऐसो करे॥२४॥
सो नर मूरख अरू मतिहीन, दुःखी होत मुख बोलत दीन।
कहै अगस्ती मुनि मोरी वानि, ताकौ राखत एती हानि॥२५॥
पुत्र नास पुनि त्रिया वियोग, नारि धरत विधवा फल योग।
वंश छेद करै रोग विकार, ए सिगरे भिन्नन परकार॥२६॥
भिन्न दोष मानक जो पायौ, बिना द्रव्य तौउ करि लायौ।
करत न सुख मन रहत उदास, या कारन कहा इनकी आस॥२७॥

अब कंकर दोष कहतु हैं—

याके गर्भित कंकर रूप, कंकर ताकौ कहत सरूप।
कंकर दोष मुनीसर वानि, तिनकौ फल सुनि राखि न जानि॥२८॥
जाके तन संकर गत दोष, ता तीनि आठ हौं गुन पोप।
ता कारण फल इनको दुष्ट, जानि तजत नर जो ह्वै शिष्ट॥२९॥
पुत्र बन्धु पशु मित्रजु होइ, आश्रित जन-धन मनइ कोइ।
कष्ट मगन सबहिन कौ करि, ता कारन इनि कोऊ न धरै॥३०॥

अथ लसनु दोष कहतु है—

लहसुन कुलीयन के अनुहारि, यामै बिन्दु परयौ मध्य धारि।
फल अशोक सम ताकौ रङ्ग, लसुन दोप ता मानिक संग॥३१॥

अथवा मधु सम वर्ण जु लीजई, निन्दु पख्यौ ता माणिक कीजई।
याहु लहसुन दोप मुनि कहै, पचम दोप सुनै सोइ लहै ॥३२॥
याकौ फल नहीं औगुन रुप, नाम दोप को सहत सरूप।
आगे छठउ दोप दिखाय, सन भूतन सौ कहत बनाय ॥३३॥
कोमल दोप कहतु हैं मुनि, कोमलता ताकी बहु सुनी।
घसे चमत ज्यु घासे और, कोमल दोप ठहरान मरोर ॥३४॥

कोमल दोप परीक्षा कहतु है—

जा माणिक कौ घसे बनाय, चूरण काठ करज सुकाइ।
तातें तोल घटै नहीं रती, यहै भांति कोमलता छती ॥३५॥
कोमल दोप भांति कही तीन, यामइ कहीयइ भेद न मीन।
वर्ण भेद तें जानहु भेद, तामे कछुयन उपजत खेद ॥३६॥
प्रथम अशोक समो है रग, ता कौमल कौ राखि प्रसग।
प्रबल तापरू भोग विलास, सधे सधे पूरन मन आस ॥३७॥
पुनि जो मधु के रङ्गनि वर्न्यौ, सो लछमी दाता हम सुन्यौ।
जाकौ रङ्ग वेरनि के मानि, ताकौ फल सुन्दर नहीं जानि ॥३८॥

सप्तम दोप कथन—

सो०—जिहि माणक को रंग, वद्ध होइ परकास दिनु।
जडता ताके सग, लहीइ कहीइ दोप इह ॥३९॥
याकौ राखि नाहि सुख, होवत कबहु कछु।
अपकीरति जग माहि, बाढि काढि कोई न गुन ॥४०॥

धूम्र दोष मुनिराज, कहत आठमौ धूम्र सम।
सिंहल बन्यौ अकाज, राखत मतिहानी करै ॥४१॥

निर्दोष मणि धरै ते फल कहतु है—

कवित्त—कहत अगस्ति मुनीश ईश सब दिन कौ सांची।
पदमराग शुचि राग धरत चिकनाईत काची॥
सुंदर ताकौ रूप सूर उगत छवि ओपैं।
जो नर धरत सग्यान आन तसु कोऊ न लोपैं।
पहिरतै अंग आणंद अति गो भू कन्या दान फल।
पुन्य होत यग्यन[1] कीय सोइ मानिक राखत अमल ॥४२॥

आगे सोरह भांति की छाया कहतु है—

कवित्त—प्रथम कमल पुनि लोद, फूल फूलतनि झांई।
लाखा रस बन्धुक बिल, कचोलन ठहराई।
इन्द्रगोपनि की वानि जानि केसर रस चखि।
पिकलोचन रु चकोर, नेत्र समौ लखि॥
चीरमीअ आध सिन्दूर सम, पुनि कसुंभ दास्यौ हसत।
विकसत फूल सिवल[2] समी, इह सोरह छाया कहत ॥४३॥

दो०—पदमराग १ करूविन्द, सौगन्धिक तीनौ मिली।
सोरह छाय अमन्द, मुनि अगस्ति मुख तै लही ॥४४॥
पुनि अगस्ति सुप्रसन, करत रिपीसर सब मिली।
जुदे-जुदे जग विष्नु, कहौ कौन भाँति भए ॥४५॥

१—यापनकीइ २—संवल

चौ०—अब बोले मुनिराज प्रवीन, पदमराग छाया कुन लीन।
सोरह में जोती है ताहि, सो तुम पेखु कछु बनाहि ॥४६॥
रक्त समल की छाया एक, सारस नयन चकी सुविवेक।
चरि चकोर की तीनों गिनी, विकसत दाख्यो चउथी सुनी।
पिक लोचन मम छाया मिली, इन्द्रगोप छाया बहु मिली।
भलकत रजूया कहै मुनि भूप, पदमराग सातों छवि रूप ॥४७॥
ससा रुधिर लोध्र को फूल, फूल दुपहरी चीरमी मूल।
रुचि सिन्दूर प्रगट सुनय कौफूल, लाली लीयें करुविन्द न भूल ॥४६॥
अब सौगन्धिक छाया यहै, लाल हींगलू केसर गहै।
कछुक नील छवि लाली घनी, इह सोभा सौगन्धिक बनी ॥५०॥

इनहु को मोल विचार कहतु है—

दो०—मुनि अगस्ति मुनि सौं केहत, छाया कही व मूल।
एक एक त्रिक त्रिक गिनत, नव भेदन कौ मूल ॥ ५१ ॥
काति रंग इकईस विध, तीस सबै मिलि होत।
मोल भेद विस्तार अब, करत मुनि उद्योत ॥ ५२ ॥
काति रंग उरध गति, और अधोगति जानि।
पार्श्व गती जे ज्यैं[1] मध्यम, अधम तीन यह ठानि ॥ ५३ ॥

ज्योति रग कैसे जानीयैं सो कहतु है '—

जो मनि बाहिर ठानीयइ, अगनि राशि सम ज्योति।
परै धरै ता नाम कहि, ज्योति रग सोइ होत ॥ ५४ ॥

१—ठो।

पुनि प्रभात रवि मुख समी, या मानिक की कांति ।
वां में दरपन ज्योति परत, झांई आप अन भ्रांति ॥ ५५ ॥
इन दुहु भ्रांति विलौकतै, ज्योति रंग ठहरान ।
पुनि आगे सब जाति सुनि, कहत मांनि मन आंनि ॥ ५६ ॥
रतनपरीछा जान नर, पद्मराग ले रत्न ।
कै विसवा कौ रंग यह, जांनि लेहू करि यत्न ॥ ५७ ॥
पाछै मोल विचार कहि, सोऊ लहै नृप मान ।
अविचारै लघुता घनी, बनी ठनी विनु ग्यान ॥ ५८ ॥
ता कारन इक मुकर ले, धरीइ दिनकर देखि ।
ता पर सरसौ सेत रूचि, ताकी पंकति लेखि ॥ ५९ ॥
ता पर गुंजा एक कौ, माणिक राखहु बीच ।
जब एकहि पिंडजु वन्यौ, यब तिर[२] हुग कहा वीच[३] ॥ ६० ॥
ताहि बाल रवि किरन तै, परत ज्योति रवि रूप ।
जेते सिरसौ गिनि कहौ, ते ते विसे सरूप ॥ ६१ ॥
सो०—ता माणिक की जाति, जाने चाहौ चतुर नर ।
तासौं एसी भांति, राखि देखि ठहराय कहि ॥ ६२ ॥
एक ही छत्री ब्रह्म द्वय, तिहौ वेस गिन मीत ।
च्यारौ शुद्र सराहीयै, पांचौ विपय प्रतीति ॥ ६३ ॥
ग्रंथांतर से कहत है, मुनि मत बोल प्रमान ।
सुनहु घर नर साधि कै, देहु लेहु गुरु ग्यान ॥ ६४ ॥

२—तिरस्कृग । ३—पीच ।

जौ मानिक है एक, चिहुं ओर अरु ऊरध दल।
ता कौ कीयइ विवेक, द्वै सत गिन लीजीयइ ॥ ६५ ॥
पद्मराग यह मोल, कुरुविंदी कह्यौ ऊनगिनि।
चौथे भागन भूलि, अर्द्ध सुगंधिक ठानि ॥ ६६ ॥
उरध मध्य अह हीन गिन, लेखा भांति भली।
द्वै सत दस नही हीन, सत पंचोतरि साठि पुनि ॥ ६७ ॥
हीन कहत मुनि केइ, सत्तहतरि अपनी उकति।
तासो जानत तेइ, हमे सिद्ध वच मन्यता ॥ ६८ ॥
इक यव हीते एक, वढत आठ प्रमान लै।
दुगन दुगन सुविवेक, मोल वढत मुनि वचन यहै ॥ ६९ ॥
सौगंधिक मति भेद, उरध गुनी होवै कही।
आठ गुनो कहै वेद, मोल लेहि मुनि वचन सौं ॥ ७० ॥
मध्य गुनी मनि दाम, सतहत्तरि सत पाच मिलि।
देन लेन यह ठाम, मुनि वच मोल हीयइ धरौ ॥ ७१ ॥
ज्यु ज्यु न होवे घाट, त्यौ त्यौ सत आधा घटत।
यह मनि मोल न घाट, मुनि वाध्यौ मन माहि धरि ॥ ७२ ॥
एक वरण के मानि, मात्रा पुनि सरमत यहै।
ता घटतै घटि वानि, वढै वढत मोल ज सरस ॥ ७३ ॥
दो०—एक सरसौ जो वढत, या मानिक छवि ताहि।
मोल वढत घटतै घटत, इह मुनि मुख ठहराहि ॥ ७४ ॥
पुनि कुरुविंद सुगध की, जे छवी ऊनी होइ।
एक सरसौ द्वै सत घटत, जानत आनत कोइ ॥ ७५ ॥

सो०—या मानिक कौ तोल, अधिक होइ रुचि छीनता।
ता मानिक को मोल, अधिकाधिक ठहराइयै ॥ ७६ ॥
दो०—रतन जान केते कहत, जंबूद्वीप न मांझ।
कोरि छत्रीस उगणईस लछि, चौदह सहस ज सांझि ॥७७॥
च्यारौ युग आगर इतें, होत कहत मुनिराज।
कूर सांच वे ई लहत, के जानत महाराज ॥ ७९ ॥
उपजत सिंहलद्वीप कौ, लछन युत सुभ गात।
भनक भली आगर यही, पद्मराग ठहरात ॥ ८० ॥
या कौ भाग जु छठउ, रंध्र देशि मनि जाणि।
अरु उंवर कोऊनगिनि, यौं है सिंहल खानि ॥ ८१ ॥
तातै भागजु तीसरें, कल पुर भयो जु ऊन।
महा मुनीसर वच विनां, कहि नर जानत कौन ॥ ८२ ॥
जा मानिक की वहुत रुचि, ताकौ मोल जु वाढ।
ज्योतिवंत लछन रहित, हीन मोल कहौं बाढ ॥ ८३ ॥
आगर उत्तम को वन्यौ, होइ जो लछन हीन।
तोल वाढ मोल जु वढत, कहत न हूजै दीन ॥ ८४ ॥
हरूओ अरु कुंअरौजन हो, गहत न कोऊ आहि।
ज्यौं ज्यौं भारी देखीयै, सौ सौ लीजै ताहि ॥८५॥
हीरो हरुउ त्यौं भलो, पद्मराग गरुआत।
यह लेनौ देनौ अधिक, मोल हरख उपजात ॥८६॥
देखत मानिक काहू कौ, उपजत कछु सन्देह।
सहज तथा कृत्रिम वन्यौ, ताहि परीक्षा एह ॥८७॥

घरी [1] दुईक करि एक पुनि, घसै जु होई असुद्ध।
इहि भाँति करि पारिखौ, घन दे लें अविरुद्ध ॥८८॥
पद्मराग अरु नील मनि, घसत वज्र ते होउ।
उरे शस्त्र न घासीयई, घसत विगारत सोई ॥८६॥
इहि अधिकार विचित्र हुय, पद्मराग मनि मानि।
अब आगै विस्तार सुनौ, नील मणी गुरु ग्यान ॥६०॥

इति तृतीयो वर्ग—

प्रणव नमत पातक गए, भई सकल सुख रिद्धि।
इह सानिधि कहु नीलमनि, विवरण ताकी सिद्धि ॥१॥
चौ० वलि नामा दानव कहि मुनी, इन्द्रहि हन्यौ वन्यौ इह गुनी।
दाँत आस्ति लोहू दश दिसा, गए भए लोचन कहा वसा ॥२॥
इन लोचन तौ आगर भयौ, इन्द्रनील मनि नाम जु ठयौ।
सिंहल देश नील भलि वनी, मानहु देव गंग सम गिनी ॥३॥
ताके तीर नेत्र तहा ठए, इन्द्रनील अति सुन्दर भए।
कछु कलिंग उतपति तूँ जानि, आगर अधम रह्यौ मुनि वानि ॥४॥
सिंहलद्वीप भयौ जो नील, तीन लोक परिसिद्ध न ढील।
जेउ कहियत नील कलिंग, तेई नाम धरत धरि लिंग ॥५॥
कलिंग देपि यह होत सदोप, इन संग्रह कौ धरहो न पोप।
मनुज लोक माहि आगर दोय, चारि जाति यामे मुनि होई ॥६॥
सेत नील छवि जाकी वनी, ताकी ब्राह्मण जाति सुनी।
रक्तनील छाया तनि लीयउ, ताकौ छत्री कहि करि दीनीयई ॥७॥

१—घडी

पीयरी प्रभा वैस गिनि लेहु, कारी नीली सूद्रक देहु।
इह भाँति वर्ण जु जानीयइ, ताके लछन मन आनीयइ ॥८॥
धेनु नयन सम याकी भास, अरु सेनन चखि होत प्रकाश।
यह दोऊ गिनी इनही भले, रीपि केई यु'ही कहि मिले ॥६॥

अथ नील मनि के दोष गुण छाया कथन—

दो०—दोप छहै गुन चारि सुनि, पुनि छाया दश एक।
सोरह भेद जु मोल के, ताकौ कहुँ विवेक ॥१०॥

अडिल्ल—प्रथम दोप आकाश पटलछाया लीजयइ।
दूजै कर्वुर दोष पोप जान हो हीई।
पुनि तृतीय यह दोष रेख करि होत है।
चौथे भंग जु दोष रत्न विन्दु यु' कहै ॥११॥
पंचै मिटे या दोप मध्य गत याहि कै।
पष्टम मध्य गत होहि पापाण जु ताहि कै।
अब इन दोपन होई फलाफल जौ कहूं॥
जैसे कहे मुनिराज तिहि विधि हुं लहुं॥ १२ ॥
अभ्र छाया दोष मणी लै जे धरै।
नर नारी मध्य कोल ताहि वंसु छय करै॥
ता पर उलकापात अचानक देखीयै।
प्रथम दोष फल एह मुनीवच लेखीयै॥ १३ ॥
कहत कवरा दोप दूसरो ताही कौ।
फल जानौ तुम मित्र व्याधि भय वाहि कौ॥

दुग्ध उदधि नर जात वेद जो कंहु मिलै।
तऊ न ता तन रोग योग किहि विधि टलै ॥ १४ ॥
दोष तीसरौ रेख मध्यगत आखीइ।
फल ताकौ यह होय हीए महि राखीइ ॥
या नर के कर मध्य रहै इह सुन्दरी।
ता तनि पीरा होय सुनहौ तुम सुँदरी ॥ १५ ॥
पुनि तिहि वाच वयाल भयाकुल जे नखी।
द्रष्टी जीप है जेइ तेइ करें नर कौ भखी।
दोष एह सुनि कानि मानि गुरु वाच कौ।
तजो नील मणि[1] एह देह सुख साच कौ ॥ १६ ॥
इन्द्रनील मनि जेइ धरै गुन भंग कौ।
अलप जोर लहै भग सोई नहीं संग कौ ॥
मिथा विभूषण जानि आनि अगनि धरै।
विधवा होई विग्यान नाहि निह्चै मरै ॥ १७ ॥
कहिके चौथो दोष सुनौ अब पाच वों।
इन्द्र नील के मध्यमिहि सुनि पाचवो।
ताकौ राखत अग पीर होइ मास तै ॥
रोम रोम गिनि लेहु देहु किहि पास तै ॥ १८ ॥
नील मध्य पाषान दोष छठ सुन्यौ।
याकौ फल रिषि राय कह्यो त्योंही घुन्यौ ॥
भंग होइ रण माझि वाझि वानी लही।
लागै मस्तक घाउ दाउ दुरजन लही ॥ १९ ॥

इह बहु दोष कौ फल भयौ। आगै च्यारौ गुन कथन :—

दो०—कहै अगस्ति मुनि सबन कौ, सुन हौ गुनी गुन एह।
च्यारौ चरचा करि कहुं, मन थिर सुनि हौ तेह ॥ २० ॥
(पहिलै भारी [1] दूसरै चिकनाई तिन हौ गुनी गुन एह।
च्यारौ चरचा करि कहुँ, मन थिर सुनिहौ तेह ॥ २१ ॥
पहिलै भारी दूसरै, चिकनाइ तिन जानि।
ज्योति भलीउ इह तीसरौ, चौथे रंजक मानि ॥ २२ ॥
सेत वस्तु ऊपरि धरै, अपनी छाया ताहि।
देत करत निज रंग कौ, रंजक कहीइ वाहि ॥ २३ ॥
फिरि बौलै मुनिराज सौ, रिषि सवै गुन एह।
आगै छाया सुनन कौ, लागै निहचै तेह ॥ २४ ॥
गुन छाया के योग तै, होत मोल परकास।
तातै कहत अगस्ति मुनि, सुनहो ताहि प्रभुदास ॥ २५ ॥

छप्पय—प्रथम मोर पर रूप[1] द्वतीय नारायन रंगह[2]।
तृतीय नील सम छाय[3] कपूर वल्ली फल संग्रह[4] ॥
अरसी फूल जु पांच[5] कंठ कोकिल[6] छठउ गिनि।
भमर पछ सम सात[7] सरस फूल न अठउ मनि ॥
कमल नील नव कीर गिन हौ दशइ शुक कंठहि समी ॥
ग्यारह ही धेन नयन सरिस मन भ्रम राखौ ह्वै भ्रमी,॥ २६ ॥

चो०—ए एग्यारह छाया रूप, करत परीछा पहिरन भूप।
छाया देखि करत जौ मूल, ताकौ कछुय न होवत भूल ॥ २७

दो०—पिंड प्रकाश रु दोष गुन, लछन ए सब चीन्ह।
करहौ मोल तुम रतनविद, होवत मन न मलीन ॥ २८ ॥
और परिपो करन कौ, गो भैंसन पय लेहि।
राति रहै पुनि काढि तिहि, देखहु पय दाग देइ ॥ २९ ॥
जो पय नीली छबि धरै, तो कहीइ मणी नील।
ऐसे परीछक रतन कौ, कबहु न कीजै ढील ॥ ३० ॥
शास्त्रहि मो सुन्दर कहत, इन्द्रनील मनि ईश।
चद्र रेख या मध्यगत, सो कहि बिसे-जु बीस ॥ ३१ ॥
जो रजक आगे रह्यौ, औरन को रग सोइ।
अपनौ रग आग करै, बहुत मोल यौं होइ ॥ ३२ ॥

मोल कथन

चौ० इन्द्रनील यवमान ज होई, पिण्ड प्रकाश बन्यौ गुन जोई।
ताको मोल अधिक कीजीयै, दोष रहित निहचै लीजीयै ॥३३॥
पिंड काति ताकी मनि माणि, मोल अधिक उनौ मतिमानि।
पुनि इह पारस रजक कह्यौ, एक पछ रग है कहिठयौ ॥३४॥

दो०—पार्श्व रग तासौ कहौ, निकट ठई जो वस्तु।
एक पछरगहि धरै, सुनि[१] मुनि कहत अगस्त ॥३५॥
ताकौ मोल जु पंच शत, रतन शास्त्र मग देखि।
यव पिंडन ठहराय कहौ, गुनन बन्यौ तिहिलेखि ॥३६॥
जब आठन कौ नील मनि, चौसठ सहस प्रमान।
लहत द्रव्य उतकृष्ट गति, यातैं अधिक न आन ॥३७॥

१—मन

रतन जात जु कहत यह, देशाकाल गति बूझि।
कही पमुख बातहिं ससी, लहीयइ सुधियन सूझि ॥३८॥
कह्यौ मोल विस्तार यह, कहत रत्नविद लोग।
बाल वृद्धि पुनि भेद युत, कहै लहैं सुख योग ॥३६॥

प्रथम बालस्वरूप कथन—

हिम सीच्यौ दिन आदि, फूल ज्यौं फूलत नयौ।
आरसी खेतन मध्य, महामुनि यौं कह्यौ॥
बाल कहति तिहि नाम, धाम बहु रूप कौ।
कहत कहा नर कौई, ज्यु मेंडक कूप कौ ॥४०॥

त्यौहि फूल अमोल बन्यौ अरसीन कौ।
मध्य समे रूचि छीन भयो तिहि दीन कौ।
कारीय रूषी ज्योति भई दई दे दई।
याहिन कौ कहै वृद्ध, मुनि मनियु भई ॥४१॥

पुनि इक अरसी फूल सीत जल सीचतै।
रवि डूबति तिहि काल बन्यौ तिहि बीचतै॥
ज्यौं जल परि सेवार रंग तिहि भांति कौ।
सो परिपक्व कहावई रहा इन भाँति कौ ॥४२॥

भाँति भाँति बहु रङ्ग पृथ्वी मांहे जांनीयै।
होत पखांन अनेक परीछा ठानीयइ॥
नीलमणी निरदोष धरै जो अंग सौ।
ता घरि लछ भराय कहै मुनि रङ्ग सौ ॥४३॥

आयु वृद्धि आरोग्य प्रताप सदा वढै।
पुत्र पौत्र वहु मित्र महा यश करि वढ॥
ताहि सनीचर दोप न होइ सदा सुख सो रहै।
इह विधि कुंभ मुनीश नीलमनि गुन कहै॥४४॥

चतुर्थो वर्ग—

अथ मरकत व्यवहारो निरूप्यते—

दो—प्रणव नमूँ सव गुन मयी, यामे पाचहो रूप।
याहि के सुमरिन सधे, पावत सिद्ध स्वरूप॥१॥
सव मुनि मिलि पूछत मुनी, कुंभ भूत गुरु ग्यान।
मरकत मनि के भेद तुम, कहौ वनाय वखान॥२॥
कहत अगस्ति सुनौ सवै, मरकत मन की वात।
वलि अंगन तै इह भई, सवै रत्न की जाति॥३॥
वलि, मासन पेसी परत, धर वासुकी नाग।
अति उद्धक निज गेह प्रति, गरूड़ दगनि हूय लाग॥४॥
देखि गरुड तिहि लेन मनि, कीयौ भयौ भयभीत।
पर्‍यौ वासुकी वदन तै, धारा मध्य यह रीत॥५॥
विपम ठौर दुरगम दुघर, पर्‍यौ विथुरि सव ठाउ।
म्लेच्छ देश जलनिधि निकट, पीट पहारनि दाउ॥६॥
धरणीधर नामा सु गिरी, महा आगर भयौ जानि।
मरकत मनि अरकत तहा, महामुनी वानि॥७॥

चौ०—भाग्यवन्त देखत यह मनी, महारत्न गुरु वानी सुनी।
अल्प भाग्य देखत हौ[1] कैसे, देखत जाकौ होयरौ हसे ॥८॥
सपत दोष गुन पांच जु वनै, छाया आठौ काननि सुने।
बारह भाँति मोलनि की गिन्यौ, याकौ व्योरो आगे सुनो ॥९॥

अथ दोष कथन—

दो०—रूखन १ फूटन २ दूसरौ, तीजौ मध्य पषांन।
कंकर मलिन रु जठर फुनि, सिथल सात यह मान ॥१०॥

फल कथन—

रूखो राखत पास कहा फल अंग की।
व्याधि एक शत आठ उठत न संग की॥
भंग होत छन माहि ताहि फूटक कहौ।
ताहि धरे सिर घाउ खडग कौ तिहि भयौ॥ ११ ॥
पन्नो दोष पषान समान ह्वै।
ताकौ फल निज वंध वैर मुनि जन चवै॥
मिलिन दोष जिहि गात भ्रात बालै लहै।
अंध वधिर फल जांनि मांनि करि को ग्रहै॥ १२ ॥
कंकर दोष विचित्र त्र[2] फल विधवता।
पुत्र मरण अध होइ कोइ नही षता॥
पन्नो जाठर दोष जरावै भूपना।
सिंह सरप भय जानि ताहि क्यौ राखना॥ १३ ॥

१—देखत कहो कैसे २ त्रस फल

मिह लख पुनि होइ पाहि मुनि मरकन।
राखै कोट ताहि जीत ना किरि किंतं॥
कह्यौ सातहां दोष मुनी मुख वाचंत।
फल धरि हियरा माहि गहौ गुन साच ते॥ १४॥

दो०—प्रथम स्वच्छता गुरू यतन, स्निग्धह अरु गुरू पिंड।
हरित[1] तनू रजक पनौ, सप्तम[2] कांति अखण्ड॥ १५॥

यह गुन को विस्तारकथन —

चौ०—नील कमल दल उपरि ठयौ, दीसत स्वच्छ नीरकन भयो।
ऐसे निर्मलता जहाँ होइ, स्वच्छ गुनी पन्नौ कहौ सोई॥ १६॥
गुन भारी जानहु तिहि तोल, अधिक जान ठहरावत मोल।
चिकनाई यातें तनि बनी, गुन चिकनाई कहीय ठनी॥ १७॥
पिंड बडौ गुन चौथौ कह्यौ, हरि तन गुन पंचम लहौ।
रञ्जक गुन कौ यहै विचार, ले पन्नौं करि धरि निरधारि॥ १८॥
धरत सूर सनमुख सब लोक, तन छाया ना रङ्ग विलोक।
याकी कांति बनी बहु भली, कांति रत्न गुन सातों मिली॥१९॥
आगे छाया आठ प्रकार, सुन हो मित्र कहुँ ताहि विचार॥
ताको अति उत्तम जानिये, द्रव्य देइ निज घर आनियै॥ २०॥
प्रथम कही सुक पच्छ समान, वंश पत्र सम दूजी जान।
तीजहि विधि होवत सेवार, चौथे दोव छवी अनुहार॥ २१॥
पचम मोर पिच्छ ज्यो होत, छठई फूल सरसौं की ज्योति।
सपतम मोरथूथ का रङ्ग, अष्टम चास पिच्छ सम भग॥ २२॥

१ हरित, २ रूपनग

आठौ छाया कहि वनाये, पंच रत्न यातै ठहराय।
यामै च्यारौ वर्ण विवेक, छाया भेद करि तिहि छेक ॥ २३ ॥
जिहि पन्नहि नीली ह्वै छाय, कृष्ण कांति तामै झरकाय।
थूथा रंग समानैं रंग, नील स्याम मरकत कह्यो चंग ॥ २४ ॥
पन्नो हरित स्वेत बनि रह्यौ, सरस पत्र सम वनकजु कह्यौ।
स्यामल सेत कहत तिहि नाम, और कहा ढूढ़त यह ठाम ॥ २५ ॥
शुक पिछ सम छाया तोइ, यातै[1] सुवरण कांतिज होइ।
पीत नील पन्नो तेहि जानि, जाति तीसरी यह ठहरानी ॥ २६ ॥
हरि वर्ण रेखा तनि नही, चिकनाई दीसति घृत सही।
तनक तनक सेवा रस नूर, रक्त नील पन्नो गुन पूर ॥२७॥
यही भाँति पन्नो गुन भूर, नर पावत पुन्यह अंकूर।
याकौ नाम पुरातन कहै, रतन कांकणी गुरु वच कहै ॥२८॥
चक्रवर्त्ति कंठन में हुतौ, कारन हीति यह जुतौ।
तउ सकल गुन रंजक सार, पै दीसति नरपति भण्डार ॥२६॥
कोटि सुवर्ण लहियइ कहाँ, विष थावर जंगम नहीं तहाँ।
पद्‌मराग मोल जु मुनि कह्यौ, ताहि भाँति पन्नो पुनि ग्रह्यौ ॥३०॥
च्यारि भाँति पन्ना की जाति, गरूड़ोद्‌गार प्रथम विख्यात।
इन्द्रगोप दूजो यह भेद, तीजौ वंश पत्र नहीं खेद ॥३१॥
थोथा चोथा जाति बखानि, इन च्यारन सुनीय मुनि बांनि।
थावर विष जंगम मनि सुद्ध, मेटत यामै नाहि विरुद्ध ॥३२॥
जल पईइं ताकौ जु पखारि, विष टारत मुनि वय अनुहारी।
पद्‌मराग को च्यार प्रकार, मोल धर्‌यौ तिहिं इनहि विचार ॥३३॥

---

१ यामैं

अडिल्ल—काति पिंड विस्तार विचछन लछना।
शुक पंखनि सम रूप मध्यगत पछना॥
वातै सेतह स्याम अधिक दे वाहि कौ।
दरवन कीजै ढील जु लीजै ताहि कौ॥३४॥
फूल सरीस सुरीत[१] कहौ पन्नौ।
मोल एक शत वाधि दशौ मो लेसि लै।
पांच यवन कौ मान ताहि मत पंच की।
कीमति कीजै तान वानि लहि साच की॥३५॥
इहि विधि यव का वाढि वढावे द्रव्य कौ।
बुद्धवन्त कहि देइ सदा गुन दिव्य कौ॥
आठ यवनि के मानि कबहु जो पाइयइ।
साठि सहस परि च्यारि महस ठहराइयई॥३६॥
दोहा—गरुडोदगारउ ए रमनि, लेई धरै कोउ हाथि।
लछन पूरन गुन सकल, विप वल नहीं तिहि साथि॥३७॥
पुनि लछमी लीला चढत, ताही ते मुनिराज।
गरुडोद्गार सरस कह्यौ, मरकत च्यारं हौ साकि॥३८॥
जो सदोप मानक करहि, मोल रत्नविद ऊन।
सो मरकत हू कहत, अधिक करन कहौ कौन॥३९॥
जामैं होइ विचार चित, पन्नो सुद्ध असुद्ध।
ताहि घसत पाथर परनि, भजत नाहि अविरुद्ध॥४०॥

१—सरीत, सरीप

ज्यौं अनेक रंगनि बन्यौ, पन्नो होत जु हीन।
ताकौ देवत पंचशत, मन मत करहु मलीन ॥४१॥
होत आध शतपत्र छवि, मोल मुनि की वाच।
ताहि लेहु ठहराइ तुम, मुनि वच गिनइ साच ॥४२॥
गरुड़ोद्गार सदा सरस, इन्द्रगोप इह दोउ।
एह घटि पईयत नृप घरहि, कहौ इक होवत कोउ ॥४३॥

इति मरकत व्यवहारो पंचमो वर्ग

अथ उपरत्न व्यवहारो निरूप्यते—

परम पुरुष परमातमा अनहद अगम अनन्त।
नमन ताहि करि कै कहौ, और रत्न विरतन्त ॥१॥
महारत्न पांचौ कहै, अब उपरत्न बखानि।
कहौ सवै मुनि नृपनकौ, इह अगस्ति मुनि वानि ॥२॥
हीरा मोती पद्म रूचि, नीली मरकत पांच।
च्यारौ रत्न उपरि कहत, होवत सांच ही सांच ॥३॥

सो०—गोमेदक पुकराग, कहत लसनीयौ तीसरौ।
अरू प्रवाल महाभाग, चारि जाति उपरत्न यह ॥४॥

दो०—फुनि फाटिक पंचम रहत, कनक कांति अरू लीन।
घन रूचि सौगंधिक सुन्यौ, कहत कहा करि ढील ॥५॥
गोमेदक तासौ कहत, जो गोमूत समान।
अति निर्मल भारी बन्यौ, चिकनाई जुति दान ॥६॥

पुनि उज्जल पीरी तनक, भनक होत बहुमूल ।
वरण भेद च्यारौ वरन, प्रगट करौ हो जिनि भूल ॥७॥

चौ०—सेत काति ब्राह्मण तनु भन्यौ, रक्त वर्ण छत्री यह वन्यौ ।
पीयरी भनक कहावे वैस, शूद्र श्याम छवि कहत विसेस ॥८॥

गोमेदक अधिकार सम्पूर्ण

अथ पुक्खराग कथन—

दो० पुष्कराग उपजत तहाँ, जहाँ देस कलहत्थ ।
पीत वर्ण तामे अधिक, यामे नाहि अकत्थ ॥६॥
सिंहल देश तहा वन्यो, पिंगल तनु पुखराग ।
सणी पुहप तनु रग अथ, निरमल काति पराग ॥१०॥
चिकनाई कुअरौ तनक, दोप रहित गुन पोप ।
ताहि धरत अरचा करत, ता घर लछमी घोप ॥११॥
पुत्र लहि गुरु दुष्टता, पीर न ताहि स ग्यान ।
जग मे सोई सराहीयै, होवत नृप बहुमान ॥१२॥

इति पुखराग । अथ वैडूर्य लहसुणीयौ कहतु है —

दो०—म्लेच्छ[1] खण्ड के मध्य जहा, पेन[2] नाम अग एक ।
ताहि निकट खानिज वनी, ताकौ रग विवेक ॥१३॥
सिखी कठ सम रग जिहि, सधि सूत्र तिहि साच ।
वन्हि दीप्ति भारी सरस, इह मुनीस मुख ववाच ॥१४॥
कर्कर देश आगर सुनहौ, होवत पीयरी भास ।
सूत्र शुद्ध जो होइ तिहि, ले मनि धरहु उल्लास ॥१५॥

१—म्लेछ । २—स्पेन ।

दीपति जो अंगार द्युति, अंधीयारी निसि मांझि।
क्षेत्र सुद्ध वैडूर्य तिहि, कर्कोद गहि सांझि ॥१६॥
होत विडाल नयन सम, मध्य सूत्र गत देखि।
पुनि लहसुनि रुचि देखियतु, मध्य नेत्र सु विशेष ॥१७॥
इनि दोउनि उत्तम कहत, पुनि कठिनाई अंग।
चिकनाइ झरकत तनक, निरमल तालि संग ॥१८॥
मोल करहो मतिमान पुनि, देश काल ठहराइ।
लहसुनीया विधि यह कही, मूंगा कहत बनाय ॥१९॥

अथ परिवारि (प्रवाल) कहतु है—

दो०—दिशि पश्चिम लवनोद तहा, हेमकंदला सेल।
रहत वारि मध्यग सदा, ता कूलनकी एल ॥२०॥
तहा मूङ्गा की खानि है, रंग दुपहरी फूल।
पुनि सिंदूर समालि छवि, दास्यो पुहपनुकूल ॥२१॥
पुनि जावक रंग जु गहे, होवत इह छवि मान।
होत कठिन कीटन रहत, सो कहुं सुन्दर जान ॥२२॥

प्रवाल समास

अथ चारो उपरत्न की महिमा कहतु हैं :—

चो०—गोमेदक परवारी होइ, रूपा मुइरी मूल जु होइ।
लहसुनीया पुखरागन मूल, सुवरन मुद्रा करि सम तोल ॥२४॥
मंद वुद्धि नर समुझन काजि, पंच रत्न मोल जु कहो सांझि।
हीरा मोती उज्जल कहै, मानिक छवि लाली ले गहै ॥२५॥

नील श्याम रंगनि जानीउ, पन्ना नीली छवि ठानीइ।
सेत पीयरी छवि गोमेद, पुखराज पीयरी छवि भेउ ॥२६॥
लहसुनी हारित छवि लेत, लहसुन रंग कहत हित हेत।
परवारन छवि कहिं सिंदूर, रंग कहत यह नाहि न कूर ॥२७॥
कही परीक्षा यह मुनिराय, मोल कहत याते ठहराय।
हस्त समस्या वस्त्रनि करौ, गुपत मोल यह मुखि जिनि उचरौ ॥२८॥
देश काल गाहक गुन देखि, व्यापारी व्यवहार विशेषि।
करत मोल सोउ जस लहै, इह विधि सीख मुनीसर कहै ॥२६॥
इतनै नव रत्न की परीक्षा भइ। आगे नवग्रह के रत्न कहतु है।

चौ०—पद्मराग रवि मनि जानीयइ, चन्द्ररत्न मोतिन ठानीयइ।
मंगल मूगा स्वामी कह्यौ, बुध पन्ना सामी मनि गह्यौ ॥३०॥
देव गुरू पुखरागन मिती, शुक्ररत्न हीरा यह थिती।
नील मन्द की कहीयइ सही, राहु रत्न गोमेदक लही ॥३१॥
केतु कहत लहसुनीया मुनि, इह भातिन मुनि मुखतें सुनो।
अब आकर कहत मुनि लेहु, दिसि कहीइ तिहा तिहि जरि देहु ॥३०॥
सूर्ज परि[1]वर्तुल करि लेहु, च्यार कोण चद्रहि धरि देहि।
घर त्रिकोण मंगल ठहराय, शशि सुत नागरि पत्र ठहराय ॥३३॥
पंच कौण घर गुरु कौ करे, शुक्र आठ कोणो ले धरै।
शनि घर करि शकटनि आकार, सूप समौ घर राहु विचार ॥३४॥
केतु ठौर ध्वज के अनुमान, यह घर करि मुनि वच ठहरान।
वर्त्तुल सुन्दर करि सुन्दरी, ता नर पहुची कर पै धरी ॥३५॥

१—धरि।

उच्च राशि अंश शनि ग्रहहोइ, उदयवंत अपनी द्युति जोइ।
फल दायक लायक तिहि काल, जरीयै भरीयै घर बहुमाल ॥३६॥
मेख राशि दश अंसनि सूर, वृख के तीन अंश शशि सूर।
भौम मकर अब वीस प्रमान, कन्यागन पनरह बुध मान ॥३७॥
करक अरु पंचम गुरू उच्च, शुक्र मीन सतवीस[1] समुच्च।
तुलहि शनीसर वीस हि अंस, राहु मिथुन बोलत मुनि वंश ॥३८॥
केतु कहत मुनि राहु सरूप, इहि विधि सहि धि लेहु सुखभूप।
इन विधि नव ग्रह जरि लीजीइ, जतना आपनैं करि कीजीइ ॥३९॥
प्रथम एक वर्त्तुल आकार, घर कीजे ता मध्य विचार।
कहत अगस्ति मुनि क्रम जानि, यह[2] सरूप वनाइ सुठानि ॥४०॥
दिसि पूरवतै अनुक्रम लीयैं, सृष्टि पंथ मन अन्तर कीय।
जरि दीजै निज सनुमुख हीर, इह पूरव जानहु तुम धीर ॥४१॥
अग्नि कूँण मोतिन ले धरौ, यामै कछु धोषा जिनि करौ[3]।
दिशि दछन मूंगा ले धरि, नैरति[4] गोमेदक तहां जरी ॥४२॥
नील रत्न पश्चिम गिनि लाग, ताहि धरत उधरत यश भाग।
वायु कोन लहसुनौ देहु, फल उत्तम ताकौ गिनी लेहु ॥४३॥
पुखराग उत्तर हि भलौ, पन्ना ईश कौन ले मिलौ।
मानिक मध्य सबहि ठहरात, यही भांति मुनि मुख की वात ॥४४॥

कौन समय जरीइ ताको—

दो०—शुभ मुहरत शुभ लगन दिन, उदयवन्त जो होइ।
ताकौं जरीय जुगति सौं, फल उत्तम कर सोइ ॥४५॥

१—सततीस। २—घर। ३—धरौ। ४—नैरनि।

अथ फल कथन—

सुघर पुरूप याकों जो धरै, ताहीं सुखी निहचै यह करैं।
राज्यमान लछमी ह्वै घनी, निहचै रहत ताहि घरि वनी ॥४६॥
लोक सकल तिहि देवत मान, सुखी होत गुरु मुख यह ग्यान।
इह नवरत्न विचार जु भयौ, कहत अवै मुनि इनतैं नयौ ॥ ४७ ॥

इति उपरत्न मोल्य वर्णन नाम षष्टो वर्ग

अथ नाना प्रकार के रत्नकौं विचार कथन —

प्रणव नमति मनि आनि पुनि, गुरु मुख आगम पाय।
मुनि अगस्ति मग दिढ गहै, आगै कहौं वनाय ॥ १ ॥
व्यास अगस्ति वराह अरु, रिषी सवै मिली एक।
रत्न उदधि मथि यह कहै, ग्यान मथान विवेक ॥ २ ॥
साठि नाम सुनि सुघर नर, कहौं पुराण प्रमाण।
ताहि समुझि नृप मान लहि, होत अग्यान सयान ॥३॥

कवित्त छप्पय—पदमराग[1] पुसराग[2] मिन हौ पनौ[3] करकेतन[4]
वज्र[5] अरु वैडूर्य[6] काति शशि[7] सूरज[8] मति भनि।
नवम कह्यौ जलकंत[9] नील[10] महानील जु ठान्यौ[11] ॥
इन्द्रनील[12] ज्वरहार[13] रोग हार[14] सुगुन पिछान्यौ ॥
विभवक[15] विपहर[16] शूलहर[17] शत्रुहरन[18] पुत राग कर[19]
लोहित[20] रुचक[21] मसारगल[22] हम गर्भ[23] विद्रुम[24] विभर[25]
अजन[26] अक[27] अरिष्ट[28] शुद्ध मुगता[29] श्रीकातह[30]
शिवकर[31] शिवकात[32] हो ही प्रिय करत तह[33]
कही भद्रक भ्रात[34] आन आभंकर जान हो
चद्रप्रभमित्त[35] आनि सुपरि सागरप्रभ[36] ठान हो

सुंदर अशोक[३७] कौस्तुभ[३८] अपर प्रभानाथ[३९] वीतशोक[४०] यहि
सोगंध[४१] रत्न गंगोद कहि[४२] अपराजित[४४] कोटि यहि ॥ ५ ॥

चो०—पुलक[४५] प्रभंकर[४६] अरु शोभाग,[४७]
सुभग[४८] धृतिकर[४९] पुष्टिकर[५०] लाग।
ज्योति सार[५१] गुण माल[५२] वखाणि,
सेतरुची[५३] हंस माल[५४] प्रमाण ॥६॥

अंशुमालि[५५] पुनि देवानंद,[५६] खीर तेल फाटिक द्युति चंद।
मणि त्रिधा अरु गरुड़ोद्गार, चिंतामणि मिलि साठि प्रकार ॥ ७ ॥

अथ इन साठि रत्नकी जातिन मांझि काहू काहू रत्न की प्रसिद्धि है ताको लछन कहतु है :—प्रथम स्फटिक की जाति के च्यार नाम को दोहरा

सूर्यकांति शशिकांति दोइ, हंसगर्भ जलकांत।
इन च्यारन के गुण कहत, मुनि वच गहि निभ्रांति ॥८॥

चंद्रकांत गुण कथन :—

ग्रीषम रति नर कोइ, होइ अटवी पर्यौ,
लग्यो ताहि तन ताप तिसायौ तिहा अर्यौ।
चंद्रकांति ढिग होइ धरै मुख मांझि को,
मिटे ताहि तन ताप करै यह सांझि को ॥ ९ ॥

सूर्यकांति गुन कथन :—

अडिल—सूर्यकांति मनि लेइ धरौ रवि तापमौ।
ताके नीचे ठानि गहै कर आपनौ ॥
रुई अति सुचि रूप तलै धरि ऊपनी।
झरति अगनि तिहि मांझि तुरत ऊठत जली ॥ १० ॥

अथ जलकांत परीक्षा —

जहाँ अगाध जल होइ, तहा इक वाम ल।
ताकै मुख जलकात लगायो नां चलै।
ता वशन तुम लेइ घर हो, जीव वीच सो।
जाइ लगै तिहि अग्र मगन है कीच सो॥ ११॥
फटै वारि चिहु ओर कोर न्यारौं गहै।
दीसत भूमि सरूप भूप त्यौं कहतु है।
होवत यह बहु मोल तोल याको कहा।
कहीये ल्हीयहि याहि होत पुण्य जु महा॥१२॥

जलकांत भयो चौथो हंसगर्भ कहतु है।

हंसगर्भ जल मध्य सोधि तिहि लीजोइ
विप धतूरक व्याल श्याल तिहि दीजीइ
थावर जगम दोऊ कोउ लोपत नही।
यह मुनि मुख की वानि जानि हम फौ कही॥ १३॥

अथ परीछा लछन —

चौ०—पीरोजा जौ पीयरे रंग, निर्मल दीठि करत तिहि संगि।
भाग्य जगत अरु भजत दरिद, वढत प्रताप करत रिपु रिद॥ १४॥
रक्त वर्ण पीरोजा वन्यौ, ताहि धरत फल मुनि मुख मुन्यौ।
वसीकरण या सम नही आन, याहि धरौ मनि धरि गुर ग्यान॥१५॥
स्याम रंग पीरोज प्रमान, ताहि धरत विप नाहि निदान।
सर्पादिक विप अमृत पीयइ, सो नर अलप आयु बहु जीयइ॥१६॥

अथ चिंतामनि लछन—

हीरा कांति समान दुति, दोप रहित निज अंग।
षटकौनो हरवौ तिरत, टांक सवा सुभ रंग॥ १७॥
या परि चिंतामनि रहै, तीन सांझि तिहि ठौर।
अरचा करि फल लीजीयइ, औरन की कहा दौर॥ १८॥

इति सप्तमो वर्गः

अथ मणि व्यवहारो निरूप्यते :—

अनेक रूप अनंत गुन, चिदानंद चिद्रूप।
भय भंजन गंजन अरी, रंजन सकल सरूप॥ १॥
ताहि नमनि करके कहतु, मनि के भेद विचित्र।
याके रूप गुन सुनत, लहत भूप वर मित्र॥ २॥
कौनौ कही कौन्यौ सुनी, कहाँ वनी तिहि भाँति।
कहत सुनत सज्जन वरन, आनंद अति उपजात॥ ३॥
ईश कहत उमया सुनत, तिहि भांति तिन ग्रहि पंथ।
भापा मग ढिग आनियह, ग्रंथ जानि पुनि ग्रंथ॥ ४॥
ईश कहत इक दिन गयौ, ब्रह्मा लीय जु साथि।
सुनि सुन्दर रेवा तटहि, तीर्थ शुक्र मग हाथि॥ ५॥
रतन पहार तहा रहै, कहै ता माग सु इंद्र।
इंद्रहि ठयौ नयौ जु यह, मनुज ताप हर चंद॥ ६॥
याके दर्शन ते सकल, पाप मुक्त ह्वै लोगु।
रोगी रोग विमुक्त ह्वै, गत संशय गत लोगु॥ ७॥

केइ हरै केते ह्वै लाल, के दामिनि सुम रुचि सुविसाल।
के पिकलोचन छाया बने, ए सबहिन के गुन यौं सुनै ॥२९॥
करि बाधत कोउ नर राज, भूत प्रेत व्यंतर सब भाजि।
जात और पीरा हि टरैं, पृथिवीपति प्रीति जु बहु करै ॥३०॥
नाना रंग धरत तन माभि, नाना रेखन की तहा झाँकि।
विंदु अनेक परे तनु कहो, नाग दर्प हर ताहिज लह्यौ ॥३१॥
लाभकरन दुपहरन जु सुन्यौं, हम अपनी रुचि ताकौ बन्यौं।
कहत ईश जग सुख के काजि, सबै उपद्रव टरत अकाज ॥३२॥
नील वर्ण सुन्दर तन भयो, विंदु पाँच गुन ताकौ ठयौ।
निरमल अग छाय तिहि लाल, घृत गरुड सुन कहौं अनआल ॥३३
जो सिंदूर छाय तन गहैं, रेखा सुन्दर ता महि रहै।
कुरन वण कछु लीये सरूप, टारत विप अमृत गुन रूप ॥३४॥
कारी रग धरत मनि कोई, नाना विधि रेखा बहु होई।
विंदु भाँति भाँतिन के बने, ज्वर नाशन गुन ताकौ गिनै ॥३५॥
पीयरी छाया लेत अनूप, रेखा ह्वै ता मध्य सरूप।
सेत विंदु तिहि मध्यहिं परे, विछु विप उत्तर कहा डरै ॥३६॥
इन्द्रनील सम याकी सोभ, सेत पीत गुन रेखा थोभ।
नेत्र रोग टारत यह शूल, जल पीवत ताकौ जिनि भूलि ॥३७॥

सेत पीत रेखा बनी, हरित वर्न तम छाय।
ताकौं जलपान जु कीजीइ, विप सब देत बहाय ॥३८॥
गिही वन पीयरी तन, गज नयन सम तात।
सेत विंदु ता मध्य गत, मिटत अजीरन पात ॥३९॥

लाली आधे तनि लीइ, अर्द्ध रहत पुनि श्याम।
रक्त शूल चख हर, कह्यो ईस गुन धाम ॥४०॥
निरमल स्फाटिक सो वर्न्यौ, तनक श्याम कछु लाल।
विष वीछू काटत पुरत, मेटत तनु दुख लाल ॥४१॥
अर्द्ध कृश्न पुनि अर्द्धमहि, लाली उजरी छाय।
तनक परत सब विप हरत, कहत ईश ठहराय ॥४२॥
रक्त देह पुनि रेख तहाँ, रक्त बनी शुभ छाय।
भमर परत ता मध्य यह, गरुड नाम ठहराय ॥४३॥
यातैं सर्प रहै सदा, और विषनि कहा बात।
सूर उदय तम ना रहत, गुन यह कहीयत भ्रात ॥४४॥
पीत अंग पीयरी परी, रेख रक्त पुनि ताहि।
सकल रोगहर जानीयै, मृगनयनी मन मांहि ॥४५॥
पीयरे तन कारी परत, रेखा विंदुअन लेख।
मेटत विष अहिराज को, औरन कोन विशेप ॥४६॥
कूष्मांडी फूलन भनक, तामें विंदु अनेक।
रोग सकल नयनां हरत, यह गुन याकी टेक ॥४७॥
रक्तवर्ण बहु विंदु युत, तेज पुंज तिहि देह।
ए सब विषनासन कहौ, यामैं कहा संदेह ॥४८॥
विंदुनाभ यह नाम भनि, महा तेज तिहि मांझि।
कृश्न विंदु भूपित सकल, रोग हरन गुन सांझि ॥४९॥
फल आमरन समान रुचि, ता महि कारे विंदु।
सोई पुत्र सुख देन तुम, कुल कुमुदन कौ इन्दु ॥५०॥

दाख्योपुहप समान द्युति, कृस्न विंदु कन आन।
सो सोभाग्य करै प्रिया, यह हर वच परमान ॥५१॥
कुंद फूल सम मनि वन्यौ, वन्यौ वृत आकार।
सो विप मर्दन जानीयई, हर वचननि अनुहार ॥५२॥
छागज नेत्राकार मनि, मजारी भय नाभ।
गरूड तेज सम तेज है, पूजत पईयत लाभ ॥५३॥
मनि मयूर चित्र जु वन्यौ, कछु यक स्पाटिक ज्योति।
सो सब राजा ताहि कै, मन वंछित फल होत ॥५४॥
मनि शुक पिछ समान है, सेत विंदु तिहि माझि।
विघन कोरि मेटत मनि, अरि करि सकय न गांजि ॥५५॥
पारद वर्ण समान रुचि, ता महि उजरी रेख।
आयु वढत पामिय चढत, या महि मीन न मेख ॥५६॥
सकल वर्ण या रत्न महि, नाना रेख सरूप।
अर्थ विविध पर देत सो, मान देत वर भूप ॥५७॥
विविध रूप धर विविध मनि, दीसत है जग माहि।
ते सव गरुड समान तू, विपमटेक गिनी ताहि ॥५८॥
उदर मध्य उजरी भनक, कृश्न वर्ण तिहि पीठ।
सर्प सरूप वन्यौं सरस, विप नाशत दृग दीठि ॥५९॥
सुनि उमया ईस जु कहत, यहै रत्न कीपा वात।
हम हौ कहीं तुम हौ सुनी, यही भाँति ठहरात ॥६०॥

यही मणि विचार—

दो०—मैडक मनि अरु मनुज मनि, सर्पन की मन जानि
ए तीनो की जाति गुन, कहतु हमैं जु वखानि ॥६१॥

मांटक मनि लछन—

चौ० हरित वर्ण अरु होत त्रिकोण, सिंघारन आकारन और।
जेत बहुत गुंजा त्रिहि मांन, सोई मेंडक मनि परिमान ॥६२॥

ताकौ फल कहतु है—

या घरि मेंडक मस्तक वनी, मनि होवत सो नर ह्वै धनी।
धन विलसत नरपति दै मान, वर अधिकार न खण्डत आन॥६३॥

अथ सर्प्पमनि लछन कहतु है—

कजल सामल तनु जिहि रूप, अरु वर्त्तुल आकार अनूप।
तेजवन्त दर्प्पन अनुहार, तामै प्रतिबिंबत आकार ॥६४॥
तोल पाँच गुंजा तीहि होत, कठिनाई गुन अधिक उदोत।
वासिग कुलछैत्री द्वै नाग, ताके सिर उपजत यह त्याग ॥६५॥

ताकौ गुन कहतु हैं—

इन है सर्पन को विष नसै, जल पखारि पीवत सुख लसै।
कबहूँ कंठ बन्ध, तिहि भयौ, जल नहि उगरत तिहि यह कयौ ॥६६॥
सर्प डंक ऊपरि मनि धरो, लगि ताहि तूँवी परि खरो।
उतरि बिप पीवत नर सोई, विष टारन यह और न होई ॥६७॥
पाछै धरीय भाजन भरी, उतरि परत पय मांझि जु हरी।
होत नील छवि पय जानीयइ, जल पखारि निज घरि आनियै॥

नरमनि विचार—

कोउ उत्तम नर जो होइ, ताके मस्तक उतपति लोइ।
चोकोनी ह्वै पांडुर रंग, पीत छाय ताके तनि संग ॥६९॥

च्यार गुंज सम ताकी तोल, वस्तु अनोपम होत अमोल।
याके ढिग यह रहत सग्यान, सो नर पूजा लहत सयान ॥७०॥
सोऊ भाग्य अधिक नर कह्यो सो प्रधान नर शास्त्र लह्यौ।
तिहि रण माहि न जीतिहि कोई, जहाँ विवाद तहा विजयी होई ॥७१॥
अग्नि जात रहै न लगै घाउ, यह नरमनि फल को कहि दाऊ।
पढै गुनै सो होई सग्यान, सुनत नराधिप देत मान ॥७२॥
रत्न जाति पाछै यूं कही, ताको रासन की विधि यही।
सहज बन्यौ त्यौ ही राखिवौ, घाट करन घसिवौ घासिवौ ॥७३॥
कब हौ लोह न घसीयई सोई, स्याम रतन छेदन फल सोई।
घरन मठारत गुनकी हानि, ग्यान विशारद मुनिकी वानी॥७४॥
पुन अगस्ति मुनि कहत है—
हम ही तुम सौ यह सुनो, रत्नपरीछा जिहि विधि बनी।
भाग्यवन्त नरके इह हेत, करत परीछा गहि सकेत ॥७५॥
पठत सुनत याको धरि ग्यान, ताको देवत नरपति मान।
करत निरन्तर यो अभ्यास, लछमी ता घर पूरन आस ॥७६॥
जस जग मे ताको विस्तरै, रत्न विविध ताके घरि भरै।
यामे कछुअन जानहो कूर, रहत रिद्ध घरि होत सनूर ॥७७॥
अथ ग्रथालकार कथन—

अडिल्ल—मुनि अगस्ति वच मानि कह्यो यह रत्न की।
वात सवै गुन जानि आनि मनि यत्न की॥
भाषा को सुख पाठ ठाठ सज्जन गहै।
यह मो मति अनुहार सार यामे कहै ॥७८॥

अति सरूप गुण धाम काम आकृति बन्यौ।
याकौ यश कैलास कास विकसित सुन्यौ[1] ॥
चन्द्र किरण मुगतानि वानि तिहि जग फिरै।
आन नहि कोऊ जोरि होरि कहौ क्यों करै ॥७६॥

छप्पइ—विद्या विनय विवेक विभो वानी विधि ग्याता।
जानत सकल विचार सार शास्त्रन रस श्रोता ॥
भीमसाहि कुलभान साहि संकर शुभ लछन।
पढ़त गुणत दिनरयन विविध गुन जानि विचछन ॥
कुल दीपक जीपक अरीय भरीय लछि भण्डार जिहि।
होहि रत्न व्यवहार रस इह प्रारथना कीन तिहि ॥८०॥

दो०—ता कारन कीनौ अलप, ग्रन्थजु मो मति मानि।
सज्जन सुनि सुध कीजीयउ, जहाँ घट मात्र जानि ॥८१॥
अंचल गछपति श्रीअमर, - सागरसूरि सुजान।
ताके पछि वाचक रतन, - शेखर इतिऽनिधान ॥८२॥
तिनि कीनी भाषा सरस, पढ़त होत बहुमान।
प्रथम लेख सुन्दर लिख्यौ, विबुध कपूर सग्यांन ॥८३॥
रवि रशि मंडल मेरु महि, जौ लौ हूअ आकाश।
पढ़ै सो तौ लुं थिर लहै, लीला लछि विलास ॥८४॥

इति श्री वाचक रत्नशेखर विरचिते रत्न व्यवहारो सारे
श्री मच्छ्री शंकरदास प्रियेण मणि व्यवहारो नामाष्टमो वर्ग

इति रत्न परीक्षा ग्रन्थ सम्पूर्ण

पन्ना परम निधान, पास जब लगै हीरा
मुक्ताहल प्रवाल, गुणहि गोमेदक हीरा
लाला लाले लख्य फेर बहु मोल लसणीया
पुखराज को शोभ, ताहि कूँमूल नहसणीया।
मत नायक माणक मुदै
कुंदन बारह बान युत ए नव धरहि प्रति उदै॥१॥

अलमास हीरा[१], आकून माणक[२] जमरौत पन्ना[३] स्याह आकून लीला[४] मलवारी मूंगा[५] इंनरहुल लसणीया[६] जरदे आकून पुखराज[७]

हीरे की जाति—ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र

रङ्ग पाच हीरा[१] पुखराज[२] दतला[३] तुलमरी

पुखराज की जात—जरद[१] सोनेला[२] आंनेला[३] कर्कनन[४]

लसणीये की जात – लसणीया पुराणा[१] लसणीया नया[२] गादना

लसणीया क्षेत्र—कनक क्षेत्र[४] धुक्षेत्र[२] पुखराज क्षेत्र[३]

माणक जात—माणक[१] कंडा[२] नरम[३] तनजावरी[४]

पन्ना की जात—पन्ना[१] पुराना पन्ना[२] पनगम[३]

पीरोजा जात—नेसावरी[१] भसमी[२] मोहगीया[३]

अमनी जात—हप्सानी[१] आकूदी[२] सरवती[३] खभाइती[४]

हीरा[१] माणक[२] मोती[३] पन्ना[४] लीला[५] मूगा[६] गोमेदक[७] लसणीया[८] पुखराज[९] लाल[१०] पीरोजा[११] एमनी[१२] कर्केतन[१३] वेडूर्य[१४] चंद्रकति[१५] सूर्यकति[१६] जलकत[१७] नील[१८] महानील[१९] इन्द्रनील[२०] लोहितह[२१] रूचक[२२] मसारगल[२३] हसगर्भ[२४] विद्रुम[२५] विपर[२६]

हिरण्यगर्भ[२७] अंजन[२८] अंक[२९] अरिष्ट[३०] श्रीकांत[३१] शिवकर[३२] शिवकंत[३६] कौस्तभ[३४] प्रभानाथ[३५] वीतशोक[३६] सौगंधकरत्न[३७] गंगोद[३८] पुलकित[३९] प्रभंकर[४०] ज्योतिसार[४१] गुणमाल[४२] सेतरूची[४३] हंसमाल[४४] अंशुमालि[४५] हकाक[४६] दाहिण फिरङ्ग[४७] पारस[४८] मरकत[४९] सलेमानी[५०] संगइशेम[५१] संगकपूरी[५२] कपूरजटी[५३] कपूर[५४] पचगम[५५] वाफेल[५६] फिटक[५७] फिटक वुलोचा[५८] दंतला[५९] तुलमरी[६०] सोनेला[६१] धोनेला[६२] नावग[६३] विलोर[६४] लालडा[६५] पटोलीया[६६] मुसका[६७] लाजवरङ्ग[६८] हसानी[६९] जवनीया[७०] गोदंता[७१] तनजावरी[७२] नेसावरी[७३] असमा[७४] चूना[७५] वावागोरी[७६] गोमरली[७७] जवरजद[७८] संगमरगज[७९]

परिशिष्ट (१)

॥ अथ नवरत्न की परीक्षा लिख्यते ॥

१—माणक रंग लाल श्री सूर्जजी को रतन ॥ असल पुराणी खाण घाट कुतबी तलफसार वीस विश्वा रङ्ग रत्ती एकरो होवै तो मोल रुपीया पांचसै पावै आगे सवाई तोल अर दूणो मोल पावइ ॥ १ ॥

२—मोती श्री चन्द्रमाजी रो रतन रंग सुफेत । असल पूतली पडतौ दाणो रती सवा रो होय तो रुपीया सौ १०० रो होय आगे सवायो तोल दूणो मोल जाणवो ॥२॥

३—मूँगो रंग लाल बीड़बन्ध मंगलजी को रतन दृक्षण देश में उत्पन्न मासै १ रो असल रंग होय वेऐब होय ॥३॥

४—पन्नो रंग हस्यो बीड़दार असल पुराणी खाण रत्ती १ रो घाट कुतबी तलफसार वीस विश्वा रंग होवै तो रुपीया २००) रो जाणवौ। आगे सवायो तोल दूणो मोल। श्री बुध देवता को रतनः ॥४॥

५—पुखराज रंग जरद तथा सुपेत श्री वृहस्पत देवता को रतन असल पुराणी खाण रती वीस रो होय तो रुपीया पांच सौ री कीमत पावै पछै सवायो तोल दूणो मोल जाणवौ ॥ ५ ॥

६—हीरो रंग सुपेत असल गंगाजली घाट कुतबी शुक्र देवता को रतन। रती दोय होवै तो रुपीया हजार एक मोल पावै ॥ ६ ॥

७—नीलम रग नीलो अळसी रा फूल के रग श्री शनीसर जी को रतन। असल पुराणी खाण घाट कुनवी रती पाच री होवें तो वेजरम वेऐव तो दाम रुपीया पाचसै मोल पावें॥ पछे सवाइ तोळ दूणो मोल जाणवो ॥

८—गुमदक रग गुडीया श्री राहु देवता को रतन वीडदार

६—लसनीयो रंग जरद अथा सीहीमायल केत, देवता को रतन जात तीन कनखेत १ धुमकेत २ कृष्णकेत ३ कनरुकेत रंग जरद १ धूमकेत धूम्रवर्ण २ कृष्णकेत काले वर्ण ३

॥ इति नवरतन नाम सम्पूर्णम् ॥

परिशिष्ट (२)

अथ मोहरां री परीक्षा लिख्यते

कैलासगिर पर्वत ऊपरि लीला विलासी महादेवजी बेठा थका सिखर पाषाण लेई ने हाथ सु घसी ने मोहरा कीधा। तिवारे पारवती हठ निग्र करी सकोमल वचने करी महादेवजी ने आप वस करी ने मयणमय कीधो। वलद सारिखो करी किंकर थको करी ने पूछिवा लागी—ए चटा रो कारण किसु? तिवारे महादेवजी पारवती आगे वीहतें थकें मोहरा री परीक्षा कही। श्री गुरुप्रसाद थकी भेद कहीजे छे। मोहरा सघलां री आ परीक्षा छै। "ॐ ह्रीँ श्रीँ सर्व काम फल प्रदायकं कुरु स्वाहा ॥"

वार २१ दूध मन्त्री मोहरो दूध माहै मूंकीजै प्रभाते जोईजै दूध जमै तो लक्षण जोईजै। जिको मोहरो सघळोई सोना रै वर्ण होय, नीली पीली धवली काली राती माहे रेखा होय, तीको नीलकंठ मोहरो कहीजै तीको तीरे राखीजै तो समस्त सम्पदा लक्ष्मी भोगवै। घोड़ा चौपद पामीजै ज्ञान विद्या पामीजै कवीश्वर होय घणी आयु होय १।

जिको मोहरो रूपा सोना रै वरन होय धवली रेखा होय धवला बिंदु होय काला बिंदु होय मिनकी सारिखो होय तिको मोहरो धन धन लाभ दीये, तिण में संदेह नहीं २।

जिको मोहरो पचाया पारा रे वरण होय राता पारा सारिखो होय वरसालेरा इन्द्रधनुष सारिखो होय दोय तथा तीन धवली रेखा होय तिको मोहरो नारायणजी सारिखो कहीजे, तिणा थी सर्व अर्थ सिद्ध होय भलो प्रताप करइ अस्त्री ने वलभ होय सुख दाता होय ३।

जिको मोहरो पांडुर वर्ण होय मांहि धवली रेखा होय मोर पींछ सारिखी मांहें मोज होय तिण थी द्रव्य लाभ होय, ठकुराई घणी होए महाईश्वर धनवंत होय ४।

जिको मोहरो कास्मीर रा दल सरीखो होय ऊजलो होय मांहे नीली रेखा होय काला बिंदु मांहे होय महातेजवंत होय, तिको मणि कहीजे सघलाई काम अर्थ सिद्ध होय मन वंछित फल पूरे ५।

जिको मोहरो पील वर्ण होय धवली माहे रेखा होवे, मणि रे वर्ण सरीखी दस अथवा थोडेरा विंदा होय तिको मोहरो सगला गुणा करि संजुक्त कहीजे। तिण थी वेरी रो नाश होवे, सघला इ रोग नासै ६।

जिको मोहरो पारेवा रा गला सरीखो वर्ण होए, धवला विंदु माहे होवै साप रा गला सरीखी माहे मोज होवै अथवा नोलिया वर्ण सरीखो माहे मोज होवै, तिको मोहरो सुध मणि सारिखो कहीजे तिण थी सवे विप नासै। अफीम वचनाग, सोमलखार, साबू, सिंदूर, प्रमुख विप नासै तिको मोहरो अमोलक कहीजे ७।

जिको मोहरो हिरण रा वर्ण सरीखो महा तेजवंत होवै, हाथी री आंख सरीखी माहे विन्दी होवै अथवा धवली विन्दी होए हाथी री आख रे आकारे होये धवली रेखा विंदी उजली होए तेज करती होए मणि सारिखी विन्दी होवैं तिण थी भली अस्त्री पामीजै घणा दीकरा होवै, अनेक प्रकार रा विप नासै, संग्राम माहे जय होये, शत्रु रो नास होवै, वैरी ने जीपै, घणा प्रकार रा भोग पामीजै चतुरग लक्ष्मी पामीजै, मनवंछित दीए ८।

जिको मोहरो नीली छवि होए अथवा नीला टबका होए, सूर्य ऊगता सारिखो वण छवि होए, अथवा काईक वीजली सारिखो होए विच-विच रूपा सारिखो होए, धवली रेखा होए, मोहरो वाटुलो होय, वाटुला टवका होए तिको मोहरो हाथ

बांधीजै तिइरी प्रसिद्ध घणी भूइं ताइं होए, तिको मोहरो मणि सारिखो कहीजे, तिण थी सघला प्रकार नो विप नासइ द्रव्यवंत होए, दलद्री पिण धनवान होए, समत प्रथवी जगत वसि होए ६

जिको मोहरो चिरमी सारिखो होए विच-विच पंच वरणी रेखा होए विच-विच पंचवर्णा वाटलाविंद होए, सोभायमान तेजवंत होवै, निरमलो होए सहस्रफण शेषनाग रो विष तिण थी उतरैं। वले पूज्यो थको स्वर्ण मणि माणिक मोती दुपद चौपद रो लाभ करे, श्रेष्ठ तिको मणि कहीजै तिको मनुष्य प्रसिद्धवंत होए सिद्धिवंत पुण्यवान होवै तिणरौ मोहरो इसो घरे आवै ॥१०॥

जिको मोहरो पीले वर्ण होए, पांच बिंद होए सोभायमान होए, उजला विंदु वाटुला होऐ तिण थी स्त्री दीकरां रो सोभाग घणो होए ॥११॥

जिको मोहरो हंस रा वर्णा सारिखो होए अथवा हंस रा सारिखी रेखा होए पंचवरणी रेखा होए, घणी रेखा होए पंचवर्णा घणा बिन्दु होए तिण थी ताप तपति जाय समाध होय ॥१२॥

जिको मोहरो सिन्दूर वर्ण सरीखो होए विच धवली रेखा होए, काला बिन्दु विचै होए तिण थी सगला विप नासै ॥१३॥

जिको मोहरो पीले वर्ण होए, विचै वे तथा ४।५ रेखा होए विचै धवला बिन्दु होए तिण थी अजीर्ण मिटै अढारै जातरा विच्छू तणो विष नासै ॥१४॥

जिको मोहरो धवले पीले ही वर्ण होए, इन्द्रधनुप सारिखा नीली एवेही रेखा होए विणथी आव्या रा रोग वेग पाणी विकार पाण छाह मुरछा आस सूल ए रोग जाय ।।१५।।

जिको मोहरो कालो अथवा हर्यो वर्ण होए माहे धवली रेखा होए पीली रेखा होए तिको निकेवल विप रे काम आवै ।।१६।।

जिको मोहरो पीली छाया होए गिहु रे वरणे होए हाथी री आखे सारिखा धवला विन्दु होए, तिको मोहरो लुति रे काम आवै कुलाइन डारो विप नासै अरुचि अजीर्ण आफरो समाधि होए ।।१७।।

जिको मोहरो पच वर्ण होय अने करमाहे भात होय महा तेजवत होय तिण थी निकेवल विप जाय समाधि होय,।।१८।।

जिको मोहरो सूर्य सारिखो ऊजलो होय विच काइ एक राती पीली छाय होय, तिण थी विछु रो विप नासै अने वले घरे सर्व सिद्धि होय ।।१९।।

जिको मोहरो राते वण होय, काइक पीली छाया होय, माहे धवला विन्दु होय अथवा जिको मोहरो चिरमी सारिखो रातो होय माहे विच-विच धवली रेखा होया ३ बिन्दु वले माहे होय अणविधी होय तिको मोहरो जीमणे हाथ वाध्यो होय तो जगत्र पृथ्वी तिण रै वसि होए,।।२०।।

जिको मोहरो हींगलु अथवा चिरमी सरिखो रातो होय विचे पीलें वर्णां होय, ऊपर वले रातो होए जिको मोहरो मणि

कहीजै लोहीठाण सूल आंख री सूल आंखै रोग एता रोग जाय ॥२१॥

जिको मोहरो मजीठ सारिखो रातो होए अथवा मजीठ रा रंग सारिखो होए विच विच नीले वर्ण होवै पंच वर्णा विन्दु होए तिको मोहरो सर्व रोग हरे सर्व काम ऊपर चालै ॥२२॥

जिको मोहरो आधो रातो होए आधो कालो होए मांहे धवली रेखा होए धवलाबिन्दु होए एहवा मोहरा थकी साप रो विस नासै ॥२३॥

जिको मोहरो धूंवा रै वर्ण होए अथवा आभै रे वर्ण होए, तेजवंत होए, पंचवर्णा अथवा बीजाइ प्रकार रा विन्दु होए, तिण थी सगलाई प्रकार रा दोष जाय भूत प्रेत व्यंतर मोगो सीकोतरी शाकनी डाकिनी भोटिंग ए सर्व दोष जाए वले सिद्ध दाता होए ॥२४॥

जिको मोहरो पीले वर्णे होए, मांहि पीली रेखा होए मांहे भल-भल सोभाग मां तेजवंत विन्दु होए तिण थी साप रो विष जाय ॥२५॥

जिको मोहरो पीली छबि होए, विच-विच काले वर्ण होए अथवा पीली रेखा होवै अथवा चिरमी सारिखी वणी राती रेखा होवे तिको मोहरो जिण रे घरे होए दूध गाय रा सुंउंहले ने घरे राखीजै चुपग ऊपर छांटा नाखीजै सर्व रोग जाए शुभसांती होए रोग घरे नावे ॥२६॥

जिको मोहरो रूपा वर्ण होए धवली रेखा होवे तेजवंत मनोहर होए निर्मलो पाणी होए तिको मोहरो ६ गुण करे अमोलक कहीजे मोती समान गुण मोल लहै ॥२७॥

जिको महरो कोहला रा फूल सारिखो वर्ण होए नीली मोल होए भला भला बिन्दु होए तेजवत बिंदु होए तिको मोहरो सर्व व्याधि हरे समस्त विष हरे ॥२८॥

जिको मोहरो ममोलिया सारिखो रातो होए भला प्रकार रा मांहे बिंदु होनइ तेजवंत रूपवंत होए तिको मोहरो सघलाइ प्रकार रा विष नासै ॥२६॥

जिको मोहरो दही सारिखो ऊजलो होए तेजवंत होवै कुकम सारिखी माहे रेखा होए, तिण मध्ये आखे होवै माहे त्रिशूल होए तिको मोहरो शूल रोग हरै पेट दुखतो रहै ॥३०॥

जिको मोहरो तावा रे वर्ण होए, माहे बिन्दु होए ३।४ आवै होवै तेजवंत होए, माहे त्रिकोणा होए तिको मोहरो राजमान करै राजावसि सदा सर्वदा सुखी होए ॥३१॥

॥ इतिश्री ३१ मोहरा री पारिख्या समाप्त ॥

अथ २८ जात रा मोहरा रा नाम लिख्यते —

१ पद्मराग २ पुष्पराग ३ मरकत ४ कर्केतन ५ वज्र ६ वडूर्ज ७ सूर्यकान्त ८ चन्द्रकान्त ६ जलकान्त १० नील ११ महानील १२ इन्द्रनील १३ शूलहर १४ विभवकर १५ रूपमणि १६ गरूडमणि १७ चूनी १८ लोहिताख्य १६ ममारगल्ल २० हंसगर्भ २१ पुलक २२ चिंतामणि २३ खीर २४ गंगोदक २५ मुक्ताफल

२६ रोगहर २७ विद्रुम (परवालो) २८ विषहर २९ प्राबुहर ३० मङ्गलरत्न ३१ सोगंधिक रत्न ३२ ज्योतिरस रत्न ३३ अंजन रत्न ३४ सुभग रूप ३५ वैरोचन ३६ आंजन पुलकरत्न ३७ जातिरूप रत्न ३८ अंक रतन ३९ फटिक रतन ४० अरिष्ट रतन ४१ होरो। इति श्री ४१ मोहरा रत्ना रा नाम सम्पूर्णम्

१—तथा दूध नें सन्ध्या रे वखत कोरी तावणी में मोहरो घात जमावै प्रभाते दिन पोहर १ चढ्यां दूधरो रंग जोईजे जो राते वर्ण दूध होव तो रण संग्राम कटक में जीत होए आप रै पास राखीजै १

२—जो दूध काले वर्ण होय तो सरप रो जहर जावै तथा बीजाइ जहर जावै खोल पाइजै २

३—जो दूध पीले वर्ण होय, पीलीयो वाव कमलीवा वाव जाय ३

४—जो दूध वीतरै तो पेट पीड़ा सूल निजर चाख जाय ४

५—जो दूध काच सारिखो होय थण वले तो लाग वाक गोलो छणि जाय ५

६—जो दूध स्त्री रे थण सरीखो होय ओ मोहरो पास राखीजै, राज दरवार में महात्मपणो पांमइ ६

७—जो दूध हस्यो रंग होवै तो ताप तप गमावै ७

इति परीक्षा संपूर्णम्

संवत् १९०३ मिती आषाढ़ शुक्ल पक्षे पंचम्यां तिथौ सूरवासरे लिखितं विक्रमपुरे मगनीरामेन ॥ शुभं भवतु ॥ श्रीरस्तुः ॥

मोहरा परीक्षा

श्वेत पीत समायुक्ता इन्द्रनील सम द्यु ति ।
अक्षि रोगं च शूल च जल पानात् व्यतोहते १
हरिद्र वर्णो भवेद्यस्तु श्वेत रेखा समन्वित ।
पीत रेखा ममायुक्तो निर्विप शेप विपापहः २
यस्तु गोधूम वर्ण स्यात् गज, नेत्राकृति शुभ ।
श्वेत निन्दु धरो नित्यं भूताजीर्ण विनाशक ३
रक्ताग श्वेत रेख च विन्दुत्रय समन्विर्त ।
अनिद्ध वंधयेद्धस्ते गजवश्य विधायक ४
गज नेत्रा कृतिर्यस्य विडालाक्षि सम प्रभ ।
तार्क्ष्य तेजो महातेज तेजस्वी जन वल्लभ ५

॥ इति मोहरा परीक्षा ॥

परिशिष्ट ३

कृत्रिम रत्न

अमेरिका मे प्रकाशित एक रिपोर्ट 'इण्डस्ट्रियल एण्ड इंजिनियरिंग कैमिस्ट्री', मे बताया गया है कि कृत्रिम ढग पर तैयार किये गये नीलम और माणिक के पत्थर प्राकृतिक निलम और माणिक के पत्थरों से अधिक शुद्ध, स्वच्छ, बडे तथा अपनी भौतिक एव विद्युदाणविक विशेपताओं की दृष्टि से अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं।